रजनीश ध्यान योग

भगवान् श्री रजनीश रचित
ध्यान-विधियों का संकलन

ओम् रजनीश ध्यान केन्द्र प्रकाशन
बम्बई

सकलन
स्वामी जगदीश आचार्य
मा योग भारती

सम्पादन
स्वामी चैतन्य भारती

अध्याय-क्रम

१. ध्यान : एक वैज्ञानिक दृष्टि

ध्यान के विज्ञान पर भगवान्श्री रजनीश का १ अनूठा प्रवचन तथा ७ दिशा-निर्देशक पत्र

(२) ध्यान सोपान

भगवान्श्री रजनीश रचित ध्यान की २१ सक्रिय विधियां

३. साधना सोपान

भगवान्श्री रजनीश द्वारा पुनर्उद्घाटित ध्यान की २१ निष्क्रिय विधियाँ

४. साधना सूत्र

भगवान्श्री रजनीश के साधकों को लिखे गये ध्यान-साधना-सम्बन्धी २१ पत्र

५. ध्यानोपलब्धि

ध्यान में घटनेवाली घटनाओं, बाधाओं, अनुभूतियों, उपलब्धियों, सावधानियों, सुझावों तथा निर्देशों-सम्बन्धी साधकों को लिखे गये भगवान्श्री रजनीश के २१ पत्र

६. जिज्ञासा समाधान

साधकों के संग भगवान्श्री रजनीश की ध्यान व साधना-सम्बन्धी
२१ प्रश्नोत्तर चर्चाएँ

७. ध्यान मन्दिर

ध्यान-मन्दिरों की आवश्यकताओं पर भगवान्श्री रजनीश के २ पूरे प्रवचन

परिशिष्ट–१

ध्यान व साधना-सम्बन्धी ग्रन्थ विपुल सामग्री

परिशिष्ट–२

आमुख

भगवान्श्री रजनीश ने अपने सन्यासी को मात्र तीन नियम दिये है।
सन्यास के पूरे इतिहास मे— भगवान्श्री स्वय कहते है
इतने कम नियम कभी नहीं थे।
वे नियम क्या है ?
एक सन्यासी को सदा गैरिक वस्त्र मे रहना है।
दो उसे हमेशा भगवान्श्री की दी हुई माला धारण करनी है।
तीन नित्य नियमपूर्वक ध्यान करना है।
ये तीन अनिवार्यताएँ है।
महत्त्व मे ये तीनो समान है।
लेकिन, अगर कोई इनमे महत्तर है तो वह ध्यान है।
ध्यान को महत्तम कहना ठीक होगा।

भगवान्श्री रजनीश का कहना है कि
मै अपने सन्यासी को पहले शील के नियम-निषेध नहीं देता,
क्योकि अज्ञानी से वे सधते तो कम है,
उसे और पाखण्ड मे उतारने के कारण वे अवश्य बन जाते है।
मै सन्यासी को ध्यान देता हूँ।
मेरे सन्यास के लिए, मेरी धर्म-साधना के लिए, ध्यान केन्द्रीय है।
और अगर कोई निष्ठापूर्वक ध्यान का प्रयोग करे,
तो शेष चीजें उसमे आप ही जुड जाती है।
ध्यान बीज है, ज्ञान और शील उसके फल-फूल है।

उल्लेख्य है कि श्री रजनीश आश्रम, पूना मे—
भगवान्श्री के सान्निध्य मे,
प्रति माह जो दस-दिवसीय समाधि-शिविर लगा करता है,
उसके दैनिक कार्यक्रम मे पूरे पाँच घन्टे केवल ध्यान को वक्फ है।
प्रतिदिन, सुबह से रात तक,
शिविरार्थियो को घन्टे-घन्टेभर के पाँच ध्यान करने होते है।
और उसी ढग के जो अनेक शिविर उनके सन्यासियो द्वारा
आयोजित किये जाते है,
उनमे भी शीर्ष-स्थान ध्यान को ही मिलता है।

ध्यान क्या है ?
इस प्रसग मे भगवान्श्री रजनीश का एक प्रसिद्ध वचन है :
"क्या तुम ध्यान करना चाहते हो ?
तो ध्यान रखना।
ध्यान मे न तो तुम्हारे सामने कुछ हो
और न तुम्हारे पीछे ही कुछ हो।
अतीत को मिट जाने दो और भविष्य को भी।
स्मृति और कल्पना दोनो को शून्य हो जाने दो।
फिर न तो समय होगा और न आकाश ही होगा।
और जिस क्षण कुछ भी नहीं होता है,
तभी जानना कि तुम ध्यान मे हो।
महामृत्यु का यह क्षण ही नित्य-जीवन का क्षण भी है।"

लेकिन, अपने को अतीत और भविष्य से,
स्मृति और कल्पना से शून्य कैसे करना है ?
समय और आकाश का लीन होना तो ध्यान की चरम अवस्था है।
वही तो निर्विचार और मौन है, समाधि और निर्वाण है।
ध्यान का आरम्भ तो वह हो सकता है जो भगवान्श्री द्वारा बतायी
गयी अनेक ध्यान-विधियो का पहला या दूसरा चरण कहलाता है।
मिसाल के लिए 'सक्रिय ध्यान' मे तीव्रतम साँस लेना,
हाथ-पॉव उछालकर, चीख-चिल्लाकर शरीर
और मन को अभिव्यक्त करना आरम्भ हो सकता है।
जहॉ हम है, वहीं से तो हमे आरम्भ करना है।

ध्यान, चेतना की अन्तर्यात्रा है।
जिसमे चेतना, बोधपूर्वक, बाहर से भीतर की ओर,
परिधि से केन्द्र की ओर,
पर से स्वय की ओर,
अथवा दृश्य से द्रष्टा की ओर प्रतिक्रमण करती है।
दूसरे शब्दो मे, अस्तित्व का जो एक ही जीवन्त क्षण है,
जो अभी और यहीं है,
और जिसमे समस्त जीवन समाया है,
उसमे सम्बद्ध और सपृक्त होना, उसमे ही जीना ध्यान है।

इस ध्यान को साधने से चेतना अखण्ड और अडोल,
मुक्त और असीम अवस्था को उपलब्ध होती है।

थोड़े शब्दो मे—

ध्यान, समाधि और अन्तत आत्मबोध का द्वार बनता है।

भगवान्श्री का यह भी कहना है कि यद्यपि मनुष्य और उसकी
आध्यात्मिक समस्या बुनियादी रूप से समान है,
तो भी समय और स्थान बहुत भेद पैदा करते है।
फिर प्रत्येक आदमी इतना अनूठा है, इतना अद्वितीय है कि
उसे अपना ही अनूठा मार्ग भी चुनना होता है।
इसलिए प्रत्येक युग मे गुरु शिष्य को नींद से जागरण मे,
मूर्च्छा से प्रज्ञा मे, मृत्यु से अमृत मे ले जाने के लिए
नयो-नयो विधियाँ और उपाय आविष्कृत करते है।
क्योकि पुरानी विधियाँ, पुराने उपाय काम नहीं देते।
और एक ही विधि भी सबके काम नहीं आ सकती।
यही कारण है कि भगवान्श्री ने बहुत-सी नवीन विधियाँ और
उपाय खोजे है और वे चाहते है कि साधक प्रयोग और भूल की
प्रक्रिया से गुजरकर अपनी-अपनी विधि का चुनाव करे।

प्रस्तुत पुस्तक 'रजनीश ध्यान योग' मे, भगवान्श्री के पूरे
साहित्य से ध्यान-विधियो तथा ध्यान-साधना-सम्बन्धी विविध
सामग्री का सचयन किया गया है।
इस भाँति इस पुस्तक से
हम साधको की एक बड़ी जरूरत की पूर्ति हो रही है।
भरोसा है, 'रजनीश ध्यान योग' साधको के ढेर काम आयेगी।

स्वामी आनन्द मैत्रेय

भगवान्श्री रजनीश : एक परिचय

भगवान्श्री के सम्बन्ध मे कुछ भी कहना कितना कठिन है !
कठिन ही नही, असम्भव-सा है।
यह बिलकुल वैसा ही है, जैसे कोई चम्मच से सागर नापने चले।
. अथवा सूर्य को दीपक दिखाने चले।
अपना परिचय तो वे आप ही हैं।
उन्हे महसूस तो किया जा सकता है,
लेकिन उनके सम्बन्ध मे कहा कुछ नही जा सकता।
अपनी सामर्थ्य के अनुकूल उन्हे जिया तो जा सकता है,
लेकिन उनके सम्बन्ध मे कुछ भी अभिव्यक्त नही किया जा सकता।
हाँ, उनकी विराटता की एक झलक
उनके प्रकाशित अब तक के साहित्य से अवश्य मिल सकती है।

उनके प्रेमियो, भक्तो व साधको को ऐसा लगता है कि वे सब एकसाथ हैं।
कृष्ण, मुहम्मद, जीसस, लाओत्से, जरथुस्त्र, चैतन्य, कबीर, नानक—
जो भी प्रज्ञा-पुरुष अब तक हुए है।
और वे स्वय अपने सम्बन्ध मे कहते है
"मैं तो अब हूँ ही नही।
"जब से मैं नही हो गया हूँ, तब से 'वही' मेरे भीतर प्रकाशित हो रहा है।"
जब वे नानक पर बोलते है,
तो ऐसा लगता है जैसे नानक ही वापिस लौटकर बोल रहे हैं।
और जब वे कृष्ण पर बोलते है, तो ऐसा नही लगता कि वे कृष्ण नही है।
वे सबको एकसाथ अभिव्यक्त करते है।
जब भी वे किसी प्रज्ञा-पुरुष पर बोलते है,
तो वही प्रज्ञा-पुरुष उनमे उतर आता है।

इस भाँति कभी वे लाओत्से की झलक देते हैं तो कभी जीसस की।
कभी वे कृष्ण बन जाते हैं तो कभी महावीर।

शायद यह इसीलिए सभव हो पाता है, चूँकि अब वे नही है।
उनका सिहासन बिलकुल खाली है,
इसलिए कोई भी प्रज्ञा-पुरुष उस पर विराजमान हो जाता है।
सभवत , आनेवाले समय मे, सम्पूर्ण पृथ्वी पर,
वे सबके श्रद्धेय हो जाएँ तो कोई आश्चर्य न होगा।
क्योकि वे सब एकसाथ जो है!
सभी को उन्होने गटक लिया है, आत्मसात् कर लिया है।

अब आपको भारत की राजधानी दिल्ली मे ही
विश्वभर के लोग देखने को नही मिलेगे,
बल्कि पूना के 'श्री रजनीश आश्रम' मे भी
यह दृश्य देखने को मिल सकता है।
सारी दुनिया के लोग—क्या ईसाई, क्या यहूदी, क्या पारसी—
मुसलमान, हिन्दु, जैन, सिख, बौद्ध—
सभी जातियो के, सभी धर्मो के, सभी वर्गों के।
और ये आपको दिखाई पडेगे एक ही रग के कपडे पहने हुए—
गेरुए रग के कपडो मे।
सचमुच जो काम आज तक दुनिया के बडे-बडे नेता,
समाज-सुधारक और धर्मगुरु भी नही कर पाये—
उसे अकेले रजनीश ने—
भगवान्श्री रजनीश ने चुपचाप कर दिया है।
पूना के 'श्री रजनीश आश्रम' मे एकत्र
विश्वभर की सभी जातियो, धर्मों, और और वर्गों के लोगो को
एक ही रग के वस्त्रो मे देखकर ऐसा लगता है
सभी मानवो की आकाक्षाएँ समान है, सभी मानवो की प्यास एक है,
सभी मानवो की खोज एक है
सत्य की खोज—स्वय के आत्यन्तिक सत्य की खोज, प्रभु की खोज।
जो उन्हे न-जाने विश्व के किस-किस कोने से, कैसे-कैसे,
पूना मे भगवान्श्री के चरणो मे पहुँचा देती है।
अहा! पृथ्वी पर पहली बार एक ऐसा भगवान् आया है,

जो सभी को समान-रूप-से स्वीकार है।
और यदि आपको मेरी बात का यकीन न होता हो,
तो आप स्वयं आकर अपनी आँखों से पूना के श्री रजनीश आश्रम मे यह देख लें।

क्षमा करें, मैं कहाँ से कहाँ पहुँच गया!
हाँ, मै यह कह रहा था कि उनके सम्बन्ध मे कुछ नही कहा जा सकता।
लेकिन, जिन-वाणी का एक सूत्र उन पर बिलकुल ही ठीक उतरता है
जो इस प्रकार है
सिंह के समान पराक्रमी,
हाथी के समान स्वाभिमानी,
वृषभ के समान भद्र,
मृग के समान सरल,
पशु के समान निरीह,
वायु के समान निस्संग,
सूर्य के समान तेजस्वी,
सागर के समान गम्भीर,
मेरु के समान निश्चल,
चन्द्रमा के समान शीतल,
मणि के समान कान्तिमान,
पृथ्वी के समान सहिष्णु,
सर्प के समान अनियत-आश्रयी,
तथा आकाश के समान निरवलम्ब
. बस, ऐसे ही है अपने 'भगवान् श्री रजनीश'।

देखी आपने मेरी हिमाकत? न कहने भी कितना कह गया!
और फिर भी कुछ कह पाया हूँ, इसमे मुझे शक है!
वैसे, सुनते हैं—
११ दिसम्बर, १९३१ को दिन के करीब १२ बजे के आसपास,
मध्य प्रदेश के रायसेन जिले के 'कुचवाडा' नामक एक छोटे-से गाँव मे
उनका अवतरण हुआ।

माता-पिता ने अपनी पहली सन्तान का नाम रखा—'रजनीश चन्द्र मोहन'।
जन्म के बाद तीन दिन तक उन्होंने माँ का दूध नही लिया।
भगवान्श्री ने साधको के संग एक चर्चा-विशेष मे बताया है
कि इस जन्म के ७०० वर्ष पूर्व वे २१ दिन का एक अनुष्ठान कर रहे थे।
जिसके पूरे होने के तीन दिन पूर्व ही किसी ने करुणावश उनकी हत्या कर दी थी।
और यदि वह अनुष्ठान पूरा हो जाता तो वे यह जन्म नही ले सकते थे।
एक बार, भगवान्श्री की माता जी ने एक साधक मित्र को
एक रहस्य की बात बतायी थी कि भगवान् हँसते हुए जन्मे हैं!
वैसे इसके पहले भगवान्श्री कृष्ण
तथा जरथुस्त्र के हँसते हुए जन्मने की बात भी सुनने मे आती है।

भगवान् बालपन से ही बडे होनहार तथा नटखट रहे है।
करीब २१ वर्ष की छोटी उम्र मे, २१ मार्च, सन् १९५३ को
जबलपुर के 'भँवरताल' नाम के उद्यान मे स्थित
'मौलश्री' नाम के वृक्ष के नीचे,
रात्रि के २ बजे वे बोधि को उपलब्ध हुए।
. अर्थात्, 'रजनीश चन्द्र मोहन' से 'भगवान्श्री रजनीश' हो गये।
सन् १९५७ मे उन्होने सागर विश्वविद्यालय से दर्शन-शास्त्र मे
एम० ए० की उपाधि प्रथम श्रेणी मे प्रथम आकर प्राप्त की।
पश्चात् रायपुर के एक तथा जबलपुर के दो महाविद्यालयो मे आठ वर्ष तक
आचार्य (प्रोफेसर) के पद पर शिक्षण कार्य करते रहे।
सन् १९६६ मे, अपना पूरा समय साधना के विस्तार तथा धर्म के
पुनुरुत्थान मे लगाने के लिए उन्होंने नौकरी छोड दी।
सन् १९७० तक भारत के कोने-कोने मे घूम-घूमकर
प्रवचन देने तथा शिविर लेने का उनका कार्य चलता रहा।
सन् १९७० मे भगवान् बम्बई के वुडलैण्ड निवास मे आ गये और चार बरस
तक वही रहकर उन्होने अपने धर्म-चक्र-प्रवर्तन को गहरा किया।
२१ मार्च १९७४ को पूना के वर्तमान आश्रम का शुभारम्भ हुआ,
जहाँ अब प्रतिदिन प्रात ८ से ९-३० तक उनके प्रवचनो की गंगा बहती है
और हर मास की ११ से २० तारीक मे १० दिन का समाधि-शिविर चलता है।

१

ध्यान : एक वैज्ञानिक दृष्टि

१. ध्यान : एक वैज्ञानिक दृष्टि

ध्यान के विज्ञान पर भगवान्‌श्री रजनीश का १ अनूठा प्रवचन तथा
७ दिशा-निर्देशक पत्र

मेरे प्रिय आत्मन्!

सुना है मैंने, कोई नाव उलट गयी थी।
एक व्यक्ति उस नाव मे बच गया और एक निर्जन द्वीप पर जा लगा।
दिन, दो दिन, चार दिन, सप्ताह, दो सप्ताह उसने प्रतीक्षा की,
कि जिस बडी दुनिया का वह निवासी था, वहाँ से कोई उसे बचाने आ जायेगा।
फिर महीने भी बीत गये और वर्ष भी बीतने लगा।
फिर किसी को आते न देखकर वह धीरे-धीरे प्रतीक्षा करना भी भूल गया।
पाँच वर्षों के बाद कोई जहाज वहाँ से गुजरा,
उस एकान्त निर्जन द्वीप पर उस आदमी को निकालने के लिए
जहाज ने लोगो को उतारा,
और जब उन लोगो ने उस खो गये आदमी को वापिस चलने को कहा,
तो वह विचार मे पड गया।

उन लोगो ने कहा, 'क्या विचार कर रहे हैं, चलना है या नही ?"
तो उस आदमी ने कहा,
"अगर तुम्हारे साथ जहाज पर कुछ अखबार हो
जो तुम्हारी दुनिया की खबर लाये हो,
तो मैं पिछले दिनो के कुछ अखबार देख लेना चाहता हूँ।"
अखबार देखकर उसने कहा, "तुम अपनी दुनिया सम्हालो और अखबार भी,
और मैं जाने से इनकार करता हूँ।"

बहुत हैरान हुए वे लोग।
उनकी हैरानी स्वाभाविक थी।
पर वह आदमी कहने लगा,
"इन पाँच वर्षों मे मैंने जिस शान्ति, जिस मौन

और जिस आनन्द को अनुभव किया है,
वह मैंने पूरे जीवन के पचास वर्षों मे भी
तुम्हारी उस बडी दुनिया मे कभी अनुभव नही किया था।
और सौभाग्य, और परमात्मा की अनुकम्पा,
कि उस दिन तूफान मे नाव उलट गयी और मै इस द्वीप पर आ लगा।
यदि मैं कभी इस द्वीप पर न लगा होता, तो शायद मुझे पता भी न चलता
कि मै किस बडे पागलखाने मे पचास वर्षों से जी रहा था।''

हम उस बडे पागलखाने के हिस्से हैं,
उसमे ही पैदा होते है, उसमे ही बडे होते है, उसमे ही जीते हैं—
और इसलिए कभी पता भी नही चल पाता कि जीवन मे जो भी पाने योग्य है,
वह सभी हमारे हाथ से चूक गया है।
और जिसे हम सुख कहते है, और जिसे हम शान्ति कहते है,
उसका न तो सुख से कोई सम्बन्ध है और न शान्ति से कोई सम्बन्ध है।
और जिसे हम जीवन कहते है,
शायद वह मौत से किसी भी हालत मे बेहतर नही है।

लेकिन परिचय कठिन है।
चारो ओर एक शोरगुल की दुनिया है।
चारो ओर शब्दो का, शोरगुल का उपद्रवग्रस्त वातावरण है।
उस सारे वातावरण मे हम वे रास्ते ही भूल जाते है
जो भीतर मौन और शान्ति मे ले जा सकते हैं।

इस देश मे—और इस देश के बाहर भी—
कुछ लोगो ने अपने भीतर भी एकान्त द्वीप की खोज कर ली है।
न तो यह सम्भव है कि सभी की नावें डूब जायें,
न यह सम्भव है कि इतने तूफान उठें,
और न यह सम्भव है कि इतने निर्जन द्वीप मिल जायें,
जहाँ सारे लोग शान्ति और मौन को अनुभव कर सकें।
लेकिन, फिर भी यह सम्भव है
कि प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर ही उस निर्जन द्वीप को खोज ले।

ध्यान अपने ही भीतर उस निर्जन द्वीप की खोज का मार्ग है।
यह भी समझ-लेने-जैसा है कि दुनिया के सारे धर्मों मे बहुत विवाद हैं—
सिर्फ एक बात के सम्बन्ध मे विवाद नही है—और वह बात ध्यान है।
मुसलमान कुछ और सोचते,
हिन्दू कुछ और, ईसाई कुछ और, पारसी कुछ और,
जैन, बौद्ध कुछ और।
उनके सिद्धान्त सबके बहुत भिन्न-भिन्न हैं।
लेकिन एक बात के सम्बन्ध मे इस पृथ्वी पर कोई भी भेद नही है,
और वह यह कि जीवन के आनन्द का मार्ग ध्यान से होकर जाता है।
और परमात्मा तक अगर कोई भी कभी पहुंचा है,
तो ध्यान की सीढी के अतिरिक्त और किसी सीढी से नही।
वह चाहे जीसस, और फिर चाहे बुद्ध, और चाहे मुहम्मद,
और चाहे महावीर——कोई भी,
जिसने जीवन की परम धन्यता को अनुभव किया है,
उसने अपने ही भीतर गहरे मे डूब के उस निर्जन द्वीप की खोज कर ली।

इस ध्यान के विज्ञान के सम्बन्ध मे दो-तीन बाते आपसे कहना चाहूँगा।
पहली बात तो यह कि साधारणत जब हम बोलते हैं,
तभी हमे पता चलता है कि हमारे भीतर कौन-से विचार चलते थे।
ध्यान का विज्ञान इस स्थिति को अत्यन्त ऊपरी अवस्था मानता है।
अगर एक आदमी न बोले,
तो हम पहचान भी न पाये कि वह कौन है, क्या है।

शब्द हमारे बाहर प्रकट होता है, तभी हमे पता चलता है—
'हमारे भीतर क्या था'।
ध्यान का विज्ञान कहता है,
यह अवस्था, सबसे ऊपरी अवस्था है चित्त की, सरफेस है, ऊपर की पर्त है।
हम नही बोले होते हैं तब भी पहले उसके विचार भीतर चलता है,
अन्यथा हम बोलेंगे कैसे ?
अगर मैं कहता हूँ 'ओम्',

तो इसके पहले कि मैंने कहा—मेरे भीतर, ओठो ओठो के पार,
मेरे हृदय के किसी कोने मे 'ओम्' का निर्माण हो जाता है।
ध्यान कहता है, यह दूसरी पर्त है, व्यक्तित्व की गहराई की।

साधारणत आदमी ऊपर की पर्त पर ही जीता है,
उसे दूमरी पर्त का भी पता नही होता।
उसके बोलने की दुनिया के नीचे भी एक सोचने का जगत् है,
उसका भी उसे कुछ पता नही होता।
काश, हमे हमारे सोचने के जगत् का पता चल जाये,
तो हम बहुत हैरान हो जायें।
जितना हम मोचने हैं, उसका बहुत थोडा-सा हिस्मा वाणी मे प्रकट होता है।
ठीक ऐसे ही, जैसे एक बर्फ के टुकडे को हम पानी मे डाल दें,
तो एक हिस्सा उपर हो और नौ हिस्सा नीचे डूब जाये।
हमारा भी नौ हिस्सा जीवन का, विचार का तल नीचे डूबा रहता है,
एक हिस्सा ऊपर दिखाई पडता है।

इसलिए अक्सर ऐसा हो जाता है कि आप क्रोध कर चुकते है,
तब आप कहते हैं कि यह कैसे सम्भव हुआ कि मैंने क्रोध किया।
एक आदमी हत्या कर देता है, फिर पछताता है
कि यह कैसे सम्भव हुआ कि मैंने हत्या की।
"इनस्पाइट ऑफ मी" वह कहता है, "मेरे बावजूद यह हो गया,
मैंने तो कभी ऐसा करना ही नही चाहा था।"
उसे पता नही कि हत्या आकस्मिक नही है, पहले भीतर निर्मित होती है।
लेकिन वह तल गहरा है,
और उस तल से हमारा कोई सम्बन्ध नही रह गया।

ध्यान कहता है,
पहले तल का नाम "बैखरी" है, दूसरे तल का नाम "मध्यमा" है।
और उसके नीचे भी एक तल है, जिसे ध्यान का विज्ञान "पश्यन्ति" कहता है।
इसके पहले कि भीतर, ओठो के पार, हृदय के कोने मे शब्द निर्मित हो,

उससे भी पहले, शब्द का निर्माण होता है।
लेकिन उस तीसरे तल का तो हमें साधारणत. कोई भी पता नहीं होता,
उससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं होता।
दूसरे तक हम कभी-कभी झांक पाते हैं, तीसरे तक हम कभी नहीं झांक पाते।

ध्यान का विज्ञान कहता है कि पहला तल 'बोलने' का है,
दूसरा तल 'सोचने' का है, तीसरा तल 'दर्शन' का है।
पश्यन्ति का अर्थ है 'देखना', जहाँ शब्द देखे जाते हैं।
मुहम्मद कहते हैं मैंने कुरान देखी—सुनी नही।
वेद के ऋषि कहते हैं हमने ज्ञान देखा—सुना नही।
मूसा कहते हैं मेरे सामने टेन-कमान्डमेन्ट्स प्रकट हुए,
दिखाई पडे—मैंने सुने नही।
यह तीसरे तल की बात है,
जहाँ विचार दिखाई पडते हैं—सुनाई नही पडते है।

तीसरा तल भी ध्यान के हिसाब से मन का आखिरी तल नही है।
चौथा एक तल है, जिसे ध्यान का विज्ञान "परा" कहता है।
वहाँ विचार दिखाई भी नही पडते, सुनाई भी नही पडते।
और जब कोई व्यक्ति देखने और सुनने से नीचे उतर जाता है,
तब उसे चौथे तल का पता चलता है।
और उस चौथे तल के पार जो जगत् है, वह ध्यान का जगत् है।

ये चार हमारी पर्तें है।
इन चार दीवालो के भीतर हमारी आत्मा है।
हम बाहर के परकोटे की दीवाल के बाहर ही जीते हैं।
पूरे जीवन शब्दो की पर्त के साथ जीते है—और स्मरण नही आता
कि खजाने बाहर नही हैं, बाहर सिर्फ रास्तो की धूल है।
आनन्द बाहर नही है, बाहर आनन्द की धुन भी सुनाई पड जाये तो बहुत।
जीवन का सब-कुछ भीतर है—जडो मे—गहरे, अन्धेरे मे दबा हुआ।
ध्यान वहाँ तक पहुँचने का मार्ग है।

पृथ्वी पर बहुत-से रास्तो से

उस पाँचवी स्थिति मे पहुँचने की कोशिश की जाती रही है।
और जो व्यक्ति इन चार स्थितियो को पार करके
पाँचवी गहराई मे नही डूब पाता,
उस व्यक्ति को जीवन तो मिला,
लेकिन जीवन को जानने की उसने कोई कोशिश नही की,
उस व्यक्ति को खजाने तो मिले, लेकिन खजानो से वह अपरिचित रहा
और रास्तो पर भीख माँगने मे उसने समय बिताया।
उस व्यक्ति के पास वीणा तो थी—जिससे सगीत पैदा हो सकता था,
लेकिन उसने उसे कभी छुआ नही,
उसकी अगुलियो का कभी कोई स्पर्श उसकी वीणा तक नही पहुँचा।

हम जिसे सुख कहते है, धर्म उसे सुख नही कहता।
है भी नही, हम भली-भाँति जानते है।
हमारा सुख करीब-करीब ऐसा है,
मुझे एक छोटी-सी कहानी याद आती है

एक आदमी अपने मित्रो के पास बैठा है—बहुत बेचैन, बहुत परेशान।
और ऐसा मालूम पडता ह उसके भीतर कोई बहुत कष्ट है,
किसी पीडा को वह दबाए हुए ह।
अन्तत एक मित्र उससे पूछता ह
"इतने परेशान हैं, बात क्या ह? सिर मे दर्द ह? पेट मे दर्द है?"

उस अदमी ने कहा "नही, न सिर मे दर्द है, न पेट मे दर्द है,
मेरे जूते बहुत काट रहे है, बहुत तग है जूते।"
उसके मित्र ने कहा "तो जूतो को निकाल दें।
और अगर इतने तग जूते है कि इतना परेशान कर रहे है,
तो थोडे ठीक जूते खरीद लें।"

उस आदमी ने कहा
"नही, यह न हो सकेगा, मैं वैसे ही बहुतमुसीबत मे हूँ!
पत्नी मेरी बीमार है,

लडकी ने, नहीं चाहता था जिस व्यक्ति को, उससे शादी कर ली,
लडका शराबी है, जुआरी है, और मेरी हालत दीवाले के करीब है।
नही, मैं वैसे ही बहुत दु ख मे हूँ।"
उन मित्रो ने कहा
"आप पागल हैं? वैसे ही बहुत दु ख मे है तो इस जूते को तो बदल ही ले।"
उस आदमी ने कहा "इस जूते के साथ ही मेरा एकमात्र सुख रह गया है।"
तब तो वे बहुत चकित हुए, उन्होने कहा "यह सुख किस प्रकार का है?"
उस आदमी ने कहा
"मैं इतनी मुसीबतो मे हूँ, दिनभर यह जूता मुझे काटता है,
शाम जब मै इस जूते को उतारता हूँ, तो मुझे बडी राहत मिलती है।
एक ही सुख मेरे पास बचा है,
वह यह कि साँझ जब मै इस जूते को घर जा के उतारता हूँ,
तो बडी रिलीफ, बडी राहत मिलती है।
बस, एक ही सुख मेरे पास है और तो दु ख-ही-दु ख है।
इस जूते को मै नही बदल सकता हूँ।"

जिसे हम सुख कहते है, वह तँग जूते से ज्यादा सुख नही है,
रिलीफ से ज्यादा सुख नही है।
जिसे हम सुख कहते है, वह थोडी-सी देर के लिए किसी तनाव से मुक्ति है।
नकारात्मक है, निगेटिव है।

एक आदमी थोडी देर के लिए शराब पी लेता है और सोचता है सुख मे है!
एक आदमी थोडी देर के लिए सेक्स मे उतर जाता है
और सोचता है सुख मे है!
एक आदमी थोडी देर के लिए सगीत सुन लेता है
और सोचता है कि सुख मे है!
एक आदमी बैठ के गपशप कर लेता है,
हँसी-मजाक कर लेता है, हँस लेता है, और सोचता है कि सुख मे है!

ये सारे सुख तग जूते को साँझ उतारने से भिन्न नही हैं,
इनका सुख से कोई सम्बन्ध नही है।

सुख एक पॉजिटिव, एक विधायक स्थिति है—नकारात्मक नही।
सुख छीक-जैसी चीज नही है—
कि आपको छीक आ जाती है और पीछे थोड़ी राहत मिलती है।
क्योकि छीक परेशान कर रही थी।
वह एक नकारात्मक चीज नही है कि एक बोझ मन से उतर जाता है
और पीछे अच्छा लगता है।

सुख एक विधायक अनुभव है।
लेकिन बिना ध्यान के वैसा विधायक सुख किसी को अनुभव नही होना।
और जैसे-जैसे आदमी सभ्य और शिक्षित हुआ है,
वैसे-वैसे ध्यान से दूर हुआ है।
सारी शिक्षा, सारी सभ्यता—आदमी को,
दूसरो से कैसे सम्बन्धित हो, यह तो सिखा देती है,
लेकिन अपने से कैसे सम्बन्धित हो, यह नही सिखाती।
समाज को कोई प्रयोजन भी नही है कि आप अपने से सम्बन्धित हो,
समाज चाहता है आप दूसरो से सम्बन्धित हो—
ठीक से, कुशलता से—बात पूरी हो जाती,
आप कुशलता से काम करे, बात पूरी हो जाती।

समाज आपको एक फक्शन से ज्यादा नही मानता।
अच्छे दूकानदार हो, अच्छे नौकर हो, अच्छे पति हो, अच्छी माँ हो,
अच्छी पत्नी हो—बात समाप्त हो गयी,
आपसे समाज को कोई लेना-देना नही है।
इसलिए समाज की सारी शिक्षा उपयोगिता है, यूटिलिटि है।
समाज सारी शिक्षा ऐसी देना है, जिससे कुछ पैदा होता हो।
आनन्द से कुछ भी पैदा होता नही दिखाई पडना।
आनन्द कोई कमोडिटी नही है जो बाजार मे बिक सके।
आनन्द कोई ऐसी चीज नही है जिसे रुपये मे भजाया जा सके।
आनन्द कोई ऐसी चीज नही है,जिसे बैंक-बैलेन्स मे जमा किया जा सके।
आनन्द कोई ऐसी चीज नही है, जिसकी कोई बाजार मे कोई कीमत हो सके।

इसलिए समाज को आनन्द से कोई प्रयोजन नही है।
और कठिनाई यही है .
कि आनन्दभर एक ऐसी चीज है, जो व्यक्ति के लिए मूल्यवान है,
बाकी कुछ भी मूल्यवान नही है।
लेकिन जैसे-जैसे आदमी सभ्य होता जाता है—यूटिलिटेरियन होता है :
''सब चीजो की उपयोगिता होनी चाहिए।''

मेरे पास लोग आते है, वे कहते है, 'ध्यान से क्या मिलेगा ?'
शायद वे सोचते होगे—'रुपये मिले, मकान मिले, कोई पद मिले।'
ध्यान से न पद मिलेगा, न रुपये मिलेंगे, न मकान मिलेगा,
ध्यान की कोई उपयोगिता नही है।

लेकिन जो आदमी सिर्फ उपयोगी चीजो की तलाश मे घूम रहा है,
वह आदमी सिर्फ मौत की तलाश मे घूम रहा है।
जीवन की भी कोई उपयोगिता नही है।
जीवन मे जो भी महत्त्वपूर्ण है, वह परपजलेस है।
जीवन मे जो भी महत्त्वपूर्ण है, उसकी बाजार मे कोई कीमत नही है।
प्रेम की कोई कीमत है बाजार मे ? कोई कीमत नही है।
आनन्द की कोई कीमत है ? कोई कीमत नही है।
प्रार्थना की कोई कीमत है ? कोई कीमत नही है।
ध्यान की, परमात्मा की ? इनकी कोई भी कीमत नही है।
लेकिन जिस जिन्दगी मे अनुपयोगी, नॉन-यूटिलिटेरियन मार्ग नही होता,
उस जिन्दगी मे सितारो की चमक भी खो जाती है,
उस जिन्दगी मे फूलो की सुगन्ध भी खो जाती है,
उस जिन्दगी मे पक्षियो के गीत भी खो जाते हैं,
उस जिन्दगी मे नदियो की दौडती हुई गति भी खो जाती है,
उस जिन्दगी मे कुछ भी नही बचता, सिर्फ बाजार बचता है।
उस जिन्दगी मे काम के सिवाय कुछ भी नही बचता।
उस जिन्दगी मे तनाव और परेशानी
और चिन्ताओ के सिवाय कुछ भी नही बचता।

और जिन्दगी चिन्ताओ का एक जोड नही है।
लेकिन हमारी जिन्दगी चिन्ताओ का एक जोड है।

ध्यान हमारी जिन्दगी मे उस डायमेन्शन, उस आयाम की खोज है,
जहाँ हम बिना प्रयोजन के—
सिर्फ होने-मात्र मे, जस्ट टू बी—होने-मात्र से आनन्दित होते हैं।
और जब भी हमारे जीवन मे कही से भी सुख की कोई किरण उतरती है,
तो वे वे ही क्षण होते है, जब हम खाली, बिना काम के—
समुद्र के तट पर, या किसी पर्वत की ओट मे,
या रात आकाश के तारो के नीचे,
या सुबह उगते सूरज के साथ,
या आकाश मे उडते हुए पक्षियो के पीछे,
या खिले हुए फूलो के पास—
कभी जब हम बिना काम—बिलकुल बेकाम, बिलकुल व्यर्थ,
बाजार मे जिसकी कोई कीमत न होगी—ऐसे किसी क्षण मे होते है,
तभी हमारे जीवन मे सुख की थोडी-सी ध्वनि उतरती है।
लेकिन यह आकस्मिक, एक्सिडेन्टल होती है।
ध्यान, व्यवस्थित रूप से इस किरण की खोज है।

कभी होती है यह ट्यूनिंग।
कभी विश्व के और हमारे बीच सगीत का सुर बँध जाता है, कभी।
ठीक वैसे ही, जैसे कोई बच्चा सितार को छेड दे
और कोई राग पैदा हो जाये—आकस्मिक।
ध्यान, व्यवस्थित रूप से, जीवन मे उस द्वार को बडा करने का नाम है,
जहाँ से आनन्द की किरण उतरनी शुरू होती है।
जहाँ से हम पदार्थ से छूटते हैं और परमात्मा से जुडते हैं।

मेरे देखे ध्यान से ज्यादा बिना कीमत की कोई चीज नही है।
और ध्यान से ज्यादा बहुमूल्य भी कोई चीज नही है।
और आश्चय की बात यह है कि यह जो ध्यान, प्रार्थना—

या हम और कोई नाम दें।
यह इतनी कठिन बात नही है, जितना लोग सोचते हैं।
कठिनाई अपरिचय की है।
कठिनाई न-जानने के अतिरिक्त और कुछ भी नही है।
जैसे हमारे घर के किनारे पर ही कोई फूल खिला हो,
और हमने खिडकी न खोली हो,
जैसे बाहर सूरज खडा हो और हमारे द्वार बन्द हो,
जैसे खजाना सामने पडा हो और हम आँख बन्द किये बैठे हो—

ऐसी कठिनाई है।
अपने ही हाथ से अपरिचय के कारण कुछ हम खोये हुए बैठे हैं
जो हमारा किसी भी क्षण हो सकता है।

ध्यान प्रत्येक व्यक्ति की क्षमता है।
क्षमता ही नही, प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार भी।
परमात्मा जिस दिन व्यक्ति को पैदा करता है, ध्यान के साथ ही पैदा करता है।
ध्यान हमारा स्वभाव है।
उसे हम जन्म के साथ लेकर पैदा होते है।

इसलिए ध्यान से परिचित होना कठिन नही है।
प्रत्येक व्यक्ति ध्यान मे प्रविष्ट हो सकता है।

ध्यान है भीतर झांकना

बीज को स्वय की सम्भावनाओ का कोई भी पता नही होता है।
ऐसा ही मनुष्य भी है।
उसे भी पता नही है कि वह क्या है—क्या हो सकता।
लेकिन, बीज शायद स्वय के भीतर झाँक भी नही सकता है।
पर मनुष्य तो झाँक सकता है।
यह झाँकना ही ध्यान है।
स्वय के पूर्ण सत्य को अभी और यही (Here and Now)
जानना ही ध्यान है।
ध्यान मे उतरें—गहरे और गहरे।
गहराई के दर्पण मे सम्भावनाओ का पूर्ण प्रतिफलन उपलब्ध हो जाता है।
और जो हो सकता है, वह होना शुरू हो जाता है।
जो सम्भव है, उसकी प्रतीति ही उसे वास्तविक बनाने लगती है।
बीज जैसे ही सम्भावनाओ के स्वप्नो से आन्दोलित होता है,
वैसे ही अकुरित होने लगता है।
शक्ति, समय और सकल्प सभी ध्यान को समर्पित कर दें।
क्योंकि ध्यान ही वह द्वारहीन द्वार है
जो कि स्वय को ही स्वय से परिचित कराता है।

ध्यान है अमृत—ध्यान है जीवन

विवेक ही अन्तत श्रद्धा के द्वार खोलता है।

विवेकहीन श्रद्धा श्रद्धा नही, मात्र आत्म-प्रवचना है।

ध्यान से विवेक जगेगा।

वैसे ही जैसे सूर्य के आगमन से भोर मे जगत् जाग उठता है।

ध्यान पर श्रम करें।

क्योकि, अन्तत शेष सब श्रम समय के मरुस्थल मे कहाँ खो जाता है, पता ही नही पडता है।

हाथ मे बचती है केवल ध्यान की सम्पदा।

और मृत्यु भी उसे नही छीन पाती है।

क्योकि मृत्यु का वश काल (Time) के बाहर नही है।

इसलिए तो मृत्यु को काल कहते है।

ध्यान ले जाता है कालातीत मे।

समय और स्थान (Space) के बाहर।

अर्थात् अमृत मे।

काल (Time) है विष।

क्योकि, काल है जन्म, काल है मृत्यु।

ध्यान है अमृत।

क्योकि, ध्यान है जीवन।

ध्यान पर श्रम जीवन पर ही श्रम है।

ध्यान की खोज जीवन की ही खोज है।

ध्यान की अनुपस्थिति है मन

ध्यान के लिए श्रम करो।

मन की सब समस्याएँ तिरोहित हो जायेंगी।

असल मे तो मन ही समस्या है (Mind is the Problem)।

शेष सारी समस्याएँ तो मन की प्रतिध्वनियाँ मात्र है।

एक-एक समस्या से अलग-अलग लड़ने से कुछ भी न होगा।

प्रतिध्वनियो से संघर्ष व्यर्थ है।

पराजय के अतिरिक्त उसका और कोई परिणाम नही है।

शाखाओं को मत काटो।

क्योकि एक शाखा के स्थान पर चार शाखाएँ पैदा हो जायेगी।

शाखाओ को काटने से वृक्ष और भी बढता है।

और समस्याएं शाखाएं है।

काटना ही है तो जड को काटो।

क्योकि जड के कटने मे शाखाएँ अपने-आप ही विदा हो जाती हैं।

और मन है जड।

इस जड को काटो ध्यान से।

मन है समस्या।

ध्यान है समाधान।

मन मे समाधान नही है।

ध्यान मे समस्या नही है।

क्योकि, मन मे ध्यान नही है।

क्योकि, ध्यान मे मन नही है।

ध्यान की अनुपस्थिति है मन।

मन का अभाव है ध्यान।

इसलिए कहता हूँ ध्यान के लिए श्रम करो।

मन का विसर्जन—साक्षी-भाव से

मन के रहते शान्ति कहाँ ?

क्योकि, वस्तुत मन ही अशान्ति है।

इसलिए शान्ति की दिशा मे मात्र विचार से, अध्ययन से,

मनन से कुछ भी न होगा।

विपरीत मन और सबल भी हो सकता है, क्योकि वे सब मन की ही क्रियाएँ हैं।

हाँ—थोडी देर को विराम जरूर मिल सकता है,

जो कि शान्ति नही, बस अशान्ति का विस्मरण मात्र है।

इस विस्मरण की मादकता मे सावधान रहना।

शान्ति चाहिए तो मन को खोना पडेगा।

मन की अनुपस्थिति ही शान्ति है।

साक्षी-भाव (Witnessing) से यही होगा।

विचार, कर्म—सभी क्रियाओ के साक्षी बनो।

कर्ता न रहो।

साक्षी बनो।

पल-पल साक्षी होकर जियो।

जो भी करो—साक्षी रहो।

जैसे कि कोई और कर रहा है और मात्र गवाह हो।

फिर धीरे-धीरे मन भोजन न पाने से निर्बल होता जाता है।

कर्त्ता-भाव मन का भोजन है।

अहकार मन का ईंधन (Fuel) है।

और जिस दिन ईंधन बिलकुल नही मिलता है,

उसी दिन मन ऐसे तिरोहित हो जाता है कि जैसे कभी रहा हो न हो।

सत्योपलब्धि के मार्ग अनन्त हैं

सत्योपलब्धि के मार्ग अनन्त हैं।
और व्यक्ति-व्यक्ति पर निर्भर करता है कि उसके लिए क्या उपयुक्त है।
और इसलिए जो एक के लिए सही है, वही दूसरे के लिए बिलकुल ही गलत हो सकता है।
इसीलिए दूसरे के साथ धैर्य की आवश्यकता है।
और स्वयं को सबके लिए मापदंड मानना खतरनाक है।
मैं अनेकान्त या स्याद्वाद मे इसी सत्य की अभिव्यक्ति देखता हूँ।
विचार-प्रधान व्यक्ति के लिए जो मार्ग है,
वह भाव-प्रधान व्यक्ति के लिए नही है।
और बहिर्मुखी (Extrovert) के लिए जो द्वार है,
वह अन्तर्मुखी (Introvert) के लिए दीवार है।
ज्ञान का यात्री अन्ततः ध्यान को नाव बनाता है।
प्रेम का यात्री प्रार्थना को।
ध्यान और प्रार्थना पहुँचते है एक ही मंजिल पर।
लेकिन उनके यात्रा-पथ नितान्त भिन्न हैं।
और उचित यही है कि अपना यात्रा-पथ चुनें और दूसरे की चिन्ता न करें।
क्योकि, स्वयं को ही समझना जब इतना कठिन है,
तो दूसरे को समझना तो करीब-करीब असम्भव है।

सब मार्ग ध्यान के ही विविध रूप हैं

ध्यान के अतिरिक्त और कोई मार्ग नही है।

या, जो भी मार्ग है, वे सब ध्यान (Meditation) के ही रूप हैं।

प्रार्थना भी ध्यान है।

पूजा भी।

उपासना भी।

योग भी ध्यान है।

सांख्य भी।

ज्ञान भी ध्यान है।

भक्ति भी।

कर्म भी ध्यान है।

सन्यास भी।

ध्यान का अर्थ है चित्त की मौन, निर्विचार, शुद्धावस्था।

कैसे पाते हो इस अवस्था को, यह महत्त्वपूर्ण नही है।

बस पा लो, यही महत्त्वपूर्ण है।

किस चिकित्सा-पद्धति से स्वस्थ होते हो, यह गौण है।

बस स्वस्थ हो जाओ, यही महत्त्वपूर्ण है।

ध्यान आया कि मन गया

ध्यानोपलब्धि समय का सवाल नही है।

सकल्प (will) का है।

सकल्प पूर्ण हो तो क्षण मे भी ध्यान घटित होता है।

और सकल्पहीन चित्त जन्मो-जन्मो तक भी भटक सकता है।

सकल्प को प्रगाढ करे।

संकल्प को केन्द्रित करे।

संकल्प को पूर्ण करें।

और फिर ध्यान स्वत ही द्वार खटखटायेगा।

और मन तब तक सताता ही है जब तक ध्यान नहीं है।

मन (Mind) ध्यान (Meditation) के अभाव का ही नाम है।

जैसे अधकार प्रकाश के अभाव का नाम है—ऐसे ही।

प्रकाश आया कि अधकार गया।

ध्यान आया कि मन गया।

इसलिए अब ध्यान मे डूबें।

शेष सब पीछे स्वय ही चला आता है।

२

ध्यान सोपान

२. ध्यान सोपान

भगवान् श्री रजनीश रचित ध्यान की २१ सक्रिय विधियाँ

ध्यान सोपान : प्रवेश के पूर्व

भगवान् श्री रजनीश रचित ध्यान की ये सक्रिय विधियाँ—
मौलिक, तीव्र परिणामकारी, एवम् पूर्णत वैज्ञानिक विधियाँ हैं।
ये विधियाँ वर्तमान युग के लोगों के लिए अत्यन्त उपयुक्त है।
ये विधियाँ आपसे किसी भी तरह के विश्वास
या श्रद्धा की अपेक्षा नही रखती है।
बस, प्रयोग करना काफी है।
प्रयोग करके देखे और परिणाम आपके समक्ष होगा।
प्रयोग करे और पायेंगे कि शारीरिक मानसिक व आत्मिक—
तीनों तलो पर आप मे रूपान्तरण शुरू हो गया है।
यह रूपान्तरण आप इतनी तीव्रता से अनुभव करेंगे
कि आप स्वय आश्चर्यचकित रह जायेंगे कि क्या मैं वही व्यक्ति हूँ
जो मैं कल तक था!
सचमुच ही इतनी तीव्रता से यह परिवर्तन आप मे होगा
कि आप स्वय भी यकीन न कर पाये।

यदि आपने ये प्रयोग किये है,
तो आप मेरे कथन की सत्यता को महसूस करते है,
और यदि आप नये साधक है, तो आप इस सच्चाई को अनुभव करेंगे।

अत , इनमे से कोई भी एक विधि चुन ले
और उस पर प्रयोग करना शुरू करे।
कम-से-कम इक्कीस दिन तक अपनी पसन्द की विधि को
अपने तन-प्राण की पूरी समग्रता मे करे, ताकि इसके सारे प्रभावो

और परिणामो को आप ठीक-से जाँच सकें, समझ सके।
इक्कीस दिन तक अपनी मनपसन्द विधि पर प्रयोग करने के बाद
वह विधि या तो आपके जीवन का एक अनिवार्य अग बन जायेगी
या फिर वह कब छूट गई, आपको स्मरण भी नही रहेगा।
अब इस विधि को एक तीन महीने सकल्पपूर्वक कर ले
और इन तीन महीनो के अनवरत अभ्यास मे आप पायेगे
कि जो काम तीन वर्ष की कडी साधना से भी नही हो सकता था,
वह इन तीन मास के अल्प समय मे हो गया है।
आप हैरान रह जायेंगे कि आप क्या थे और क्या हो गये है! ■

आइये विधि के चुनाव मे आपकी सहायता करूँ।
सबसे पहले "रजनीश ध्यान-योग"—याने "सक्रिय ध्यान"—
याने "Dynamic Meditation" को ही ले।

रजनीश-ध्यान-योग भगवान्श्री रजनीश रचित एक अद्भुत,
शक्तिशाली, तीव्र परिणामकारी, मौलिक तथा पूर्णत वैज्ञानिक पद्धति है
जो वर्तमान युग के अत्यन्त जटिल, अशान्त व तनावग्रस्त लोगो के लिए
विशेष रूप से लाभकारी है, उपयुक्त ह।
अवश्य ही आप पूछेगे—ऐसी इसमे क्या विशेषता है?
विशेषता इसमे ह।

और हकीकत तो यह है
कि इसकी विशेषता तो इसे करके ही जानी जा सकती है।
और इसकी विशेषता तो देश-विदेश के वे सभी हजारो साधक जानते है
जो नियमित इसका अभ्यास कर इससे लाभान्वित होते हैं—हो रहे हैं।
यह कहना कदापि अनुचित न होगा कि यह ऐसी ध्यान-विधि है
जो भगवान्श्री की इस जगत् को एक अकेली अमूल्य देन है
कि इसके लिए मनुष्यता सदा उनके लिए कृतज्ञता ज्ञापित करती रहेगी।

आज का मनुष्य शताब्दियो से गहरे दमन का बोझ ढोता आ रहा है।
आज उसे सहजता से ध्यान मे उतरने मे अत्यन्त कठिनाई महसूस हो रही है।

आज सभी पुरानी साधना-पद्धतियाँ जो निष्क्रिय रूप से बैठकर
चित्त को शान्त, शून्य व मौन की स्थिति मे लाने के लिए
उपयोग मे लायी जाती रही है,
वे आज के मनुष्य के लिए पगु सिद्ध हो चुकी हैं।
आज के मनुष्य को तो ऐसी ध्यान-विधि चाहिए जो सबसे पहले आज की तथा-
कथित थोथी सभ्यता के कारण उसके शरीर मे इकट्ठे हो गये दमित आवेगो
और तनावो से उसे त्राण दिला सके,
जो उसके हृदय की ग्रन्थियो को विगलित कर दे और उसके चित्त को सहज भाव
से शान्त, शून्य और मौन की—निर्विचार की दिशा मे ले आये।
सही मायनो मे तो ध्यान मे डूबने का अर्थ ही यही है कि दमित वासनाओ
और कुण्ठाओ तथा विक्षिप्त सस्कारो से मुक्ति मिल जाये—ताकि चित्त
तनावमुक्त हो सहज, सरल और विश्रामपूर्ण दशा को उपलब्ध हो जाये।
कहना न होगा कि यही इसी विधि का उद्देश्य है, लक्ष्य है।

यह विधि, सबसे पहले, हमारे शरीर व मन मे इकट्ठे हो गये दमित आवेगो,
तनावो व रुग्णताओ से हमे मुक्त करती है—
और इस भाँति हमे स्वस्थ बना अन्तत गहरे ध्यान की दिशा मे ले बढती है।
यह चित्त को तनावमुक्त करती है—तनाव के द्वारा ही,
तनाव को ही उसकी चरम सीमा तक ले जाकर।
जब पूरा व्यक्तित्व ही तनाव से भर जाता है,
तो जो आगे सभावना बचती है, वह विश्राम की है।
साधारणत सीधे विश्राम मे जाना अधिकाश लोगो का सभव नही हो पाता,
पर, अगर आपका समग्र ही तनावपूर्ण हो—
आपका पूरा अस्तित्व हो तनाव की चरम सीमा पर हो,
तो अपने-आप ही विश्राम की अवस्था उपलब्ध हो जाती है।
परम विश्राम—चरम तनाव का सहज परिणाम होता है।
इसलिए यह पूर्ण तनाव द्वारा सहज मौन मे प्रतिष्ठित होने की विधि है।
अत यह हर नये साधक के बडे ही काम की है।

भगवान्‌श्री पन्द्रह वर्ष तक लगातार निष्क्रिय ध्यान का अभ्यास करवाते रहे,
लेकिन केवल दो प्रतिशत लोग ही उससे ध्यान मे डूब पाये,

अठानबे प्रतिशत लोगो पर निष्क्रिय ध्यान का कोई परिणाम न निकला।
तब सबसे पहले उन्होने इसी विधि की रचना की और इसके सतत उपयोग से
वे हजारो साधको को गहरे ध्यान मे डुबाने मे सफल हुए,
अस्सी प्रतिशत से भी अधिक साधक इस विधि से ध्यान मे प्रवेश कर गये।
और तब से इसका स्थान सर्वोपरि बना हुआ है।
आज भी 'श्री रजनीश आश्रम, पूना' मे प्रात इसका प्रयोग होता है।

यह कहना उचित ही होगा
कि अकेली यही विधि सत्य के द्वार तक ले जाने मे सक्षम है।
यदि आप इसमे डूब पाये, तो इसका कोई मुकाबला नही है।
अन्त मे, इस सम्बन्ध मे एक रहस्य की बात
यह विधि पूर्ण स्वावलम्बन व स्वतन्त्रता की है।
इसमे आगे के रास्ते व आयाम स्वत खुलते जाते है—
और साधक को मार्ग-निर्देशन की आवश्यकता नगण्य-सी रह जाती है।

इसके बाद आता है, "कुण्डलिनी ध्यान"।
कुण्डलिनी ध्यान को आश्रम मे Sister Meditation भी कहते हैं।
जहाँ आश्रम मे सक्रिय ध्यान सूर्योदय के पूर्व होता है,
तो कुण्डलिनी ध्यान सूर्यास्त के पूर्व।
अक्सर महिलाएँ इसे बेहद पसन्द करती है।
यह भी बहुत प्यारी विधि है।
यदि आप पर्याप्त बलशाली हैं तो सुबह सक्रिय ध्यान
तथा साय कुण्डलिनी ध्यान भी कर सकते है।
और यदि आप समझते है कि अब आपको सक्रिय ध्यान करना जरूरी नही है,
तो आप कुण्डलिनी ध्यान करे।

पहले इन सभी विधियो के सम्बन्ध मे आपसे एक आवश्यक बात कह दूँ—
और वह यह कि इन सभी विधियो के प्राथमिक चरण हठयोग के है—
अर्थात् इन सभी विधियो मे शरीर का सक्रिय उपयोग करना पडता है,
ये सभी विधियाँ क्रियाओ से—करने से सम्बन्धित है।
इन्हे योग की विधियाँ कहना उचित होगा।

इन विधियो को तीन श्रेणियो मे रखा जा सकता है।

एक सक्रिय ध्यान, कुण्डलिनी ध्यान, मण्डल ध्यान, सूफी दरवेश नृत्य तथा मन्त्र-साधना—विशेष रूप से स्वतन्त्र ध्यान के रूप मे किये जा सकते है—तथा,
दो नटराज ध्यान, कीर्तन ध्यान, नाद ब्रह्म ध्यान, देववाणी ध्यान, शिवनेत्र ध्यान, गौरीशकर ध्यान, त्राटक ध्यान—एक, दो व तीन, तथा ओकार साधना स्वतन्त्र रूप से भी किये जा सकते है तथा सहयोगी ध्यान की तरह भी। लेकिन,
तीन प्राथना ध्यान, सामूहिक प्रार्थना ध्यान, खिलखिला के हँसना,
रात्रि ध्यान—ओऽऽऽ, जिबरिश तथा अग्निशिखा ध्यान—सहयोगी ध्यान के रूप मे ही करने चाहिए।

तीसरी विधि है "मण्डल ध्यान"।
यह Advanced साधको के अत्यन्त उपयोग की है—
क्योकि यह Tremerdous powerfull, अत्यन्त शक्तिशाली है—
तथा सीधे ही "आज्ञाचक्र"— याने तीसरी-आँख पर काम करती है।
बहुधा इसे शक्ति-सम्पन्न युवक ही पसन्द करने है।

"नटराज ध्यान" तथा "कीर्तन ध्यान" सभी के काम का है।
और बूढे से लेकर बच्चे तक तथा स्त्री से लेकर पुरुष तक,
सभी इन्हे पसन्द करते है।

छठा है "सूफी दरवेश नृत्य"।
यह भी बहुत शक्तिशाली विधि है—
और बडी तीव्रता से साधक को साक्षी-चैतन्य का बोध कराती है।
सूफी घन्टो इसे किया करते है।
शेष सभी विधियो के सम्बन्ध मे आप आगे के पृष्ठो मे जानेगे।

तो, आप अपनी शक्ति, समय व सामर्थ्य के अनुकूल विधि चुनकर
उसे करना शुरू करे।
प्रारम्भ मे एक स्वतन्त्र विधि भी पर्याप्त हो सकती है—
और रुचि जगने पर
एक स्वतन्त्र विधि के साथ एक सहयोगी विधि भी जोडी जा सकती है।

साथ ही, आप चाहे तो,
एकाध निष्क्रिय विधि का अभ्यास भी जारी रख सकते हैं,
लेकिन उसकी चर्चा हम "साधना सोपान" मे करेंगे ।

साधना प्रारम्भ करने से पहले भगवान्श्री के ये शब्द गाँठ बाँध लें
"साधना को जितना सहज बनाया जा सके,
वह जितनी प्रयत्न के तनाव से शून्य हो,
उतनी ही शीघ्रता से उसमे गति होती है ।"
अत जब आप किसी भी ध्यान के प्रयोग मे उतरें, तो गैर-गभीर भाव से उतरें।
कुछ अपेक्षा न बनाएँ, कही पहुँचने या कुछ पाने का भाव न रखें—
सिर्फ जो होता है उसे होने दे, उसमे आनन्दित हो, उसका स्वाद लें।
करना—बस एक आनन्द-भाव हो, एक खेल-भाव।

और स्मरण रखें,
साधना सोच-विचार, चिन्तन-मनन या बौद्धिक विश्लेषण का विषय नही है,
ये सब तो साधना से बचने के उपाय हैं।
साधना, स्वय की अज्ञात गहराइयो मे छलाँग लगाने का साहस है ।
साधना, स्वय को आमूल बदल डालने का सकल्प है ।
साधना, स्वय को नये जन्म की प्रसव-पीडा से गुजारने की तैयारी है।

बस, इतना ही ।

१. रजनीश-ध्यान-योग

(सक्रिय ध्यान)

हमारे शरीर मे इकट्ठे हो गयेदमित आवेगो, तनावो एवम् रुग्णताओ का रेचन करने—अर्थात् उन्हे बाहर निकाल फेंकने के लिए भगवान्श्री रजनीश ने इस नयी ध्यान-विधि का सृजन किया है।
शरीर और मन के इस रेचन—अर्थात् शुद्धिकरण से,
साधक पुन अपनी देह-ऊर्जा, प्राण-ऊर्जा, एवम् आत्म-ऊर्जा के सम्पर्क मे—
उनकी पूर्ण सम्भावनाओ के सम्पर्क मे आ जाता है—और इस तरह साधक आध्यात्मिक जागरण की ओर सरलता से विकसित हो पाता है।

रजनीश-ध्यान-योग के प्रथम तीन चरण हठयोग के है—
और चौथा चरण राजयोग का है।

हठयोग का मानना है कि शक्ति को जगाकर मस्तिष्क मे पहुँचाना है—
और जैसे ही शक्ति मस्तिष्क मे पहुँचती है,
सारे विचार तत्काल बन्द हो जाते हैं,
मन बिलकुल शून्य हो जाता है।
राजयोग का मानना है कि मन को शान्त कर लें तो शक्ति नीचे से मस्तिष्क की ओर दौड पडती है।

इस प्रयोग मे इन दोनो का उपयोग किया गया है।
प्रथम तीन चरणो मे शक्ति को जगाना है और उसके ऊर्ध्वगमन के लिए मार्ग

प्रशस्त करना है, चौथे चरण मे बिलकुल शान्त और मौन हो जाना है।
ताकि शक्ति ऊपर सहस्रार की ओर गति कर सके।

इस भाँति इसमे दोनो निष्ठाओ का उपयोग किया गया है।

रजनीश-ध्यान-योग अकेले भी किया जा सकता है और समूह मे भी।
लेकिन समूह मे करना ही अधिक परिणामकारी होता है।

स्नान कर के, कम-से-कम वस्त्रो मे, आँखो पर पट्टी बाँधकर
खाली पेट इसे करना चाहिए।
इस ध्यान-विधि के पाँच चरण है, जो कि आपस मे अन्तर्सम्बन्धित हैं।
अर्थात् इनमे एक क्रमिक विकास है।

यह विधि पूरी तरह प्रभावकारी हो सके, इसके लिए साधक को अपनी
पूरी शक्ति से—अपनी समग्रता मे इसका अभ्यास करना होगा।
पहले तीन चरण दस-दस मिनट के है तथा बाकी दो पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के।

सुबह का समय इसके लिए सर्वाधिक उपयोगी है।
यूँ इसे साँझ मे भी किया जा सकता है।

पहला चरण

अपनी पूरी शक्ति से तेज और गहरी श्वास लेना शुरू करें।
श्वास बिना किसी नियम के—अराजकतापूर्वक भीतर ले, बाहर छोडे।
श्वास नाक से लें।

.. श्वास बाहर फेकने पर अधिक जोर लगाएं, इससे श्वास का भीतर आना सहज हो जायेगा।

श्वास का लेना और छोडना खूब तीव्रता मे और जल्दी-जल्दी करें—और अपनी पूरी ताकत इसमे लगा दें।

इसे बढाते ही चले जाएँ—आपका पूरा व्यक्तित्व एक तेज श्वास-प्रश्वास ही बन जाये।

.. भीतर ध्यानपूर्वक देखते रहे—श्वास आयी, श्वास गयी।

दूसरा चरण :

अब पूरी तरह शरीर को गति करने दें तथा आन्तरिक भावावेगों को प्रकट होने दें।

. भीतर से जो कुछ बाहर निकलता हो, उसे बाहर निकलने में सहयोग करें।

पूरी तरह से पागल हो जायें—रोएँ चीखें, चिल्लाएँ, नाचे, उछलें, कूदे, हँसे—जो भी होना हो—उसे सहयोग करे, उसे तीव्रता दे।

यदि शरीर की गति और भावो का रेचन और प्रकटीकरण न होना हो, तो चीखना, चिल्लाना, रोना, हँसना इत्यादि मे से किसी एक को चुन लें और उसे करना शुरू करे। शीघ्र ही आपके स्वर के भीतर के सगृहीत और दमित आवेगो का झरना फूट पडेगा।

ख्याल रखे कि आपका मन और आपकी बुद्धि इस प्रक्रिया मे बाधक न बने। यदि फिर भी कुछ न होना हो, तो श्वास की चोट जारी रखें और किसी आन्तरिक अभिव्यक्ति को प्रकट होने मे सहयोग करें।

तीसरा चरण :

अब दोनो बाजू ऊपर उठा ले, और एक ही जगह पर उछलते हुए, समग्रता मे—पूरी ताकत से महामन्त्र 'हू-हू-हू' का उच्चार करें।

ऊर्जा के बढते हुए प्रवाह को अनुभव करे।

'हू' की चोट को और अधिक तीव्र करते चले जाए—तथा आनन्दपूर्वक इस चरण को शिखर-तीव्रता की ओर ले चले।

चौथा चरण

. अचानक सारी गतियाँ, क्रियाएँ और 'हू-हू' की आवाज़ आदि सब बन्द कर दे और शरीर जिस स्थिति मे हो, उसे वही थिर कर लें।

. शरीर को किसी भी प्रकार से व्यवस्थित न करें।

पूरी तरह से निष्क्रिय और सजग बने रहे।

एक गहरी शान्ति, मौन और शून्यता भीतर घटित होगी।

पाँचवाँ चरण :

.. अब भीतर छा गये आनन्द, मौन और शान्ति को अभिव्यक्त करें।

.. आनन्द और अहोभाव से भरकर नाचे, गायें और उत्सव मनाये।

...शरीर के रोयें-रोयें से भीतर की जीवन-ऊर्जा और चैतन्य को प्रकट होने दें।

ध्यान का यह प्रयोग तो यहाँ समाप्त हुआ, पर दिनभर आपको आन्तरिक ताज़गी, शान्ति, चैतन्य और आनन्द का अनुभव होता रहेगा।

ध्यान रहे, यदि आप ऐसी जगह ध्यान कर रहे हो, जहाँ पहले तथा दूसरे चरण मे भावावेगो के प्रकटीकरण तथा तीसरे चरण मे 'हू-हू' की आवाज करने की सुविधा न हो, तो दूसरे चरण मे रेचन-क्रिया शारीरिक मुद्राओ द्वारा ही होने दें—तथा तीसरे चरण मे 'हू' की आवाज़ बाहर न करके भीतर-ही-भीतर करे। लेकिन, आवाज़ करना अधिक श्रेयस्कर है, क्योंकि तब ध्यान अधिक गहरा हो जाता है।

रजनीश-ध्यान-योग के सम्बन्ध में अधिक विस्तार से जानने के लिए—कि कैसे-कैसे यह साधक के भीतर एक विस्फोट की तरह काम करता है—जिन खोजा तिन पाइयाँ तथा Meditation A New Dimention पढ़नी चाहिए।

२. कुण्डलिनी ध्यान

यह एक अद्‌भुत ध्यान-पद्धति है और इसके ज़रिये मस्तिष्क से हृदय मे उतर आना आसान हो जाता है।

एक घन्टे के इस ध्यान मे पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के चार चरण हैं।
पहले और दूसरे चरण मे आँखे खुली रखी जा सकती हैं,
लेकिन तीसरे और चौथे चरण मे आँखें बन्द रखनी हैं।
साँझ इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय है।

पहले चरण की सगति सपेरे के बीन-स्वर के साथ बिठायी गयी है।
जैसे बीन-स्वर पर साँप अपनी कुण्डलिनी तोडकर उठता है—और फन काढकर नाचने लगता है, वैसे ही इस ध्यान के सम्यक् प्रयोग पर साधक की सोयी हुई कुण्डलिनी शक्ति जाग उठती है।

पहला चरण

शरीर को बिलकुल ढीला छोड दें और पूरे शरीर को कँपाएँ, शेक करें। अनुभव करें कि ऊर्जा पाँव से उठकर ऊपर की ओर बढ रही है।

दूसरा चरण

सगीत की लय पर नाचे, जैसा आपको भाये—और शरीर को, जैसा वह चाहे, गति करने दे।

तीसरा चरण

.. बैठ जाएँ या खड़े रहे, लेकिन सीधे और निश्चल।

चौथा चरण

निष्क्रिय हो लेट जाएँ।

कुण्डलिनी ध्यान का विशेष रूप से तैयार किया गया वाद्यसगीत का कैसेट—**श्री रजनीश आश्रम, १७ कोरेगांव पार्क, पूना—४११ ००१** से प्राप्त किया जा सकता है।

३ मण्डल ध्यान

घन्टेभर के इस शक्तिशाली ध्यान मे पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के चार चरण हैं। पहला चरण खडे होकर करना है, दूसरा बैठकर, तीसरा और चौथा सर्वथा निष्क्रिय होकर।

सूर्योदय के बाद या सूर्यास्त के पहले, इसे कभी भी किया जा सकता है।

पहला चरण

. आँखे खुली रख के एक ही स्थान पर खडे-खडे दौडे।
जहाँ तक बन पडे घुटनो को ऊपर उठाये।
श्वास को गहरा और सम रखे।
इससे ऊर्जा सारे शरीर मे घूमने लगेगी।

दूसरा चरण

आँखे बन्द कर बैठ जाये।

मुँह को शिथिल और खुला रखे—और, धीमे-धीमे चक्राकार झूमे—जैसे हवा मे पेड-पौधे झूमते हैं।

इससे भीतर जागी ऊर्जा नाभि-केन्द्र पर आ जायेगी।

तीसरा चरण

अब आँखे खोल के पीठ के बल सीधे लेट जायें—और दोनो आँखो की पुतलियो को क्लॉक वाइज़—बाये से दाये वृत्ताकार घुमाये।

पहले धीरे-धीरे घुमाना शुरू करें, क्रमश गति को तेज और वृत्त को बडा करते जाये।

मुँह को शिथिल व खुला रखे तथा सिर को बिलकुल स्थिर।
श्वास मन्द एवम् कोमल बनी रहे।
इससे नाभि-केन्द्रित ऊर्जा तीसरी-आँख पर आ जायेगी।

चौथा चरण

आँखें बन्द कर निष्क्रिय हो रहे।

विश्राम मे चले जायें—ताकि तीसरी-आँख पर एकत्रित हो गयी ऊर्जा अपना काम कर सके।

४. नटराज ध्यान

नटराज ध्यान के सम्बन्ध मे बोलते हुए भगवान् श्री ने कहा है
परमात्मा को हमने नटराज की भाँति सोचा है।
हमने शिव की एक प्रतिमा भी बनाई है नटराज के रूप मे।
परमात्मा नर्तक की भाँति है, एक कवि या चित्रकार की भाँति नही।
एक कविता या एक पेन्टिंग बनकर कवि से, पेन्टर से अलग हो जाती है;
लेकिन नृत्य को नर्तक से अलग नही किया जा सकता।
उनका अस्तित्व एक-साथ है,— कहना चाहिए एक है।

नृत्य और नर्तक एक हैं।
नृत्य के रुकते ही नर्तक भी विदा हो जाता है।
सम्पूर्ण अस्तित्व ही परमात्मा का नृत्य है, अणु-परमाणु नृत्य मे लीन हैं।
परमात्म-ऊर्जा अनन्त-अनन्त रूपो मे,
अनन्त-अनन्त भाव-भगिमाओ मे नृत्य कर रही है।

नटराज-नृत्य एक सम्पूर्ण ध्यान है।
नृत्य मे डूबकर व्यक्ति विसर्जित हो जाता है और अस्तित्व का नृत्य ही शेष रह जाता है।

हृदयपूर्वक पागल होकर नाचने मे जीवन रूपान्तरण की कुञ्जी है।

चले, अब हम भी इस कभी न रुकनेवाले महानृत्य मे चालीस मिनट के लिए सम्मिलित हो जाएँ।

नटराज ध्यान पैंसठ मिनट का है और इसके तीन चरण हैं।
पहला चरण चालीस, दूसरा चरण बीस, और तीसरा चरण पाँच मिनट का है।

जिस समय आप चाहे, इसे कर सकते हैं।

पहला चरण

.. संगीत की लय के साथ-साथ नाचें और नाचें बस, नाचें।

. पूरे अचेतन को उभरकर नृत्य में प्रवेश करने दें।

. ऐसे नाचें कि नृत्य के वशीभूत हो जाएँ।

.. कोई योजना न करें, और न ही नृत्य को नियन्त्रित करें।

.. नृत्य में साक्षी को, द्रष्टा को, बोध को—सबको भूल जाएँ।

. नृत्य में पूरी तरह डूब जाएँ, खो जाएँ, समा जाएँ—बस, नृत्य ही हो जाएँ।

काम-केन्द्र से शुरू होकर ऊर्जा ऊपर की ओर गति करेगी।

दूसरा चरण

वाद्य-संगीत के बन्द होते ही नाचना रोक दें और लेट जाएँ।

.. अब नृत्य एवम् संगीत से पैदा हुई सिहरन को अपने सूक्ष्म तलों तक प्रवेश करने दें।

तीसरा चरण

.. खड़े हो जाएँ।

.. पुनः पाँच मिनट नाचकर उत्सव मनाएँ—प्रमुदित हों।

५ कीर्तन ध्यान

कीर्तन अवसर है—परमात्मा के प्रति अपने आनन्द और अहोभाव को निवेदित करने का।

उसकी कृपा से जो जीवन मिला, जो आनन्द और चैतन्य मिला—उसके लिए परमात्मा के प्रति हमारे हृदय मे जो प्रेम और धन्यवाद का भाव है, उसे हम कीर्तन मे नाचकर, गाकर—उसके नाम-स्मरण की धुन मे—मस्ती मे थिरककर अभिव्यक्त करते हैं।

कीर्तन उत्सव है—भक्ति-भाव से भरे हुए हृदय का।

व्यक्ति की भाव-ऊर्जा का समूह की भाव-ऊर्जा मे विसर्जित होने का अवसर है कीर्तन।

इस प्रयोग मे शरीर पर कम और ढीले वस्त्रो का होना तथा पेट का खाली होना बहुत सहयोगी है।

कीर्तन ध्यान एक घन्टे का उत्सव है, जिसके पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के चार चरण है।

सन्ध्या का समय इसके लिए सर्वोत्तम है।

पहला चरण :

पहले चरण मे कीर्तन-मण्डली सगीत के साथ एक धुन गाती है—जैसे, "गोविन्द बोलो, हरि गोपाल बोलो, राधा रमण हरि गोपाल बोलो।"

इस धुन को पुन गाते हुए आप नृत्यमग्न हो जाएँ।

धुन और सगीत मे पूरे भाव से डूबे और अपने शरीर और भावो को बिना किसी सचेतन व्यवस्था के थिरकने तथा नाचने दें।

नृत्य और धुन की लयबद्धता मे अपनी भाव-ऊर्जा को सघनता और गहराई की ओर विकसित करें।

दूसरा चरण :

दूसरे चरण मे धुन का गायन बन्द हो जाता है, लेकिन सगीत और नृत्य जारी रहता है।

.. अब सगीत की तरगो से एकरस होकर नृत्य जारी रखें।

.. भावावेगो एव आन्तरिक प्रेरणाओ को बच्चो की तरह निस्सकोच होकर पूरी तरह से अभिव्यक्त होने दें।

तीसरा चरण

तीसरा चरण पूर्ण मौन और निष्क्रियता का है।

.. सगीत के बन्द होते ही आप अचानक रुक जाएँ।

.. समस्त क्रियाएँ बन्द कर दे और विश्राम मे डूब जाएँ।

.. जाग्रत् हुई भाव-ऊर्जा को भीतर-ही-भीतर काम करने दे।

चौथा चरण

चौथा चरण पूरे उत्सव की पूर्णाहुति का है।

.. पुन शुरू हो गये मधुर सगीत के साथ आप अपने आनन्द, अहोभाव और धन्यवाद के भाव को नाचकर पूरी तरह से अभिव्यक्त करें।

६. सूफी दरवेश नृत्य

यह एक प्राचीन सूफी विधि है, जो हमे चैतन्य-साक्षी मे केन्द्रित करती है।
इस विधि की शान्त, मद्धम, संगीतपूर्ण लयबद्ध स्वप्निलता
हमे अपने मूल आत्म-स्रोत को अनुभव करने मे विशेष सहयोगी है।

लम्बे समय तक शरीर के गोल घूमने से चेतना का तादात्म्य शरीर से टूट जाता है—शरीर तो घूमता रहता है, परन्तु भीतर एक अकम्प, अचल चैतन्य का बोध स्पष्ट होता चला जाता है।

इस प्रयोग को शुरू करने से तीन घन्टे पूर्व तक किसी भी प्रकार का आहार या पेय नही लेना चाहिए, ताकि पेट हल्का और खाली हो।

शरीर पर ढीले वस्त्र रहे तथा पैर मे जूते या चप्पल न हो तो ज्यादा अच्छा है।

इसके लिए समय का कोई बन्धन नही है, आप घन्टो इसे कर सकते हैं।

यह केवल दो चरणो का ध्यान है।
सूर्यास्त के पहले का समय इस प्रयोग के लिए सर्वोत्तम है।

पहला चरण

अपनी जगह बना लें, जहाँ आपको घूमना है।
आँखे खुली रहेगी।
. अब दाहिने हाथ को ऊपर उठा लें—कन्धो के बराबर ऊँचाई तक,
और उसकी खुली हथेली को आकाशोन्मुख रखें।

.. फिर बायें हाथ को उठाकर नीचे इस तरह से झुका लें कि हथेली जमीन की तरफ उन्मुख रहे।

दायी हथेली से ऊर्जा आकाश से ली जायेगी और बायी हथेली से पृथ्वी को लौटा दी जायेगी।

. अब इसी मुद्रा मे एन्टि-क्लॉकवाइज—याने दाये से बाये—लट्टू की तरह गोल घूमना शुरू करें।

यदि एन्टि-क्लॉकवाइज घूमने मे कठिनाई महसूस हो, तो क्लॉकवाइज—याने बायें से दायें—घूमे।

. घूमते समय शरीर और हाथ ढीले हो—तने हुए न हो।

धीमे-धीमे शुरू कर गति को लगातार बढाते जाएँ—जब तक कि गति आपको पूरा ही न पकड ले।

गति के बढने से चारो ओर की वस्तुएँ और पूरा दृश्य अस्पष्ट होने लगेगा, तब आँखो से उन्हे पहचानना छोड दें और उन्हे और अधिक अस्पष्ट होने मे सहयोग दे।

वस्तुओ, वृक्षो और व्यक्तियो की जगह एक प्रारम्भहीन और अन्तहीन एक गोल-प्रवाह-मात्र रह जाये।

घूमते समय ऐसा अनुभव करे कि पूरी घटना का केन्द्र नाभि है और सब-कुछ नाभि के चारो ओर हो रहा है।

इसमे किसी प्रकार की आवाज या भावावेगो का रेचन, कैथार्सिस न करें।

जब आपको लगे कि अब आप और नही घूम सकते, तो इतनी तेजी से घूमे कि आपका शरीर और आगे घूमने मे असमर्थ होकर आप-ही-आप जमीन पर गिर पडे।

याद रहे, भूलकर भी व्यवस्था से न गिरे।

. यदि आपका शरीर ढीला होगा, तो जमीन पर गिरना भी हल्के-से हो जायेगा और किसी प्रकार की चोट नही लगेगी।

मन का कहना मानकर शरीर को समय से पहले न गिरने दे।

दूसरा चरण

. गिरते ही पेट के बल लेट जाएँ, ताकि आपकी खुली हुई नाभि का स्पर्श

पृथ्वी से हो सके।

यदि पेट के बल लेटने मे अडचन होती हो, तो ही पीठ के बल लेटें।

पूरे शरीर का—नाभि सहित—पृथ्वी से स्पर्श होने दे।

पृथ्वी से एक छोटे बच्चे की भाँति चिपक जाएँ और उन दिनो की अनुभूतियो को पुनरुज्जीवित कर लें, जब आप छोटी उम्र मे अपनी माँ की छाती से चिपके रहा करते थे।

. अब आँखें बन्द कर ले और शान्त और शून्य होकर इस स्थिति मे कम-से-कम पन्द्रह मिनट तक पडे रहे।

...अनुभव करें कि नाभि के माध्यम से आप पृथ्वी से एक हो गये हैं — व्यक्ति विसर्जित हो गया है विराट् मे, व्यक्ति मिट गया है और परमात्मा ही रह गया है।

सूचना विशेष

श्री रजनीश आश्रम पूना मे तथा भारत व भारत के बाहर सारी दुनिया मे फैले हुए रजनीश-ध्यान-केन्द्रो मे व सभी ध्यान-शिविरो मे—"**सक्रिय ध्यान, कुण्डलिनी ध्यान, मण्डल ध्यान, नटराज ध्यान, सूफी दरवेश नृत्य, कीर्तन ध्यान, नाद-ब्रह्म ध्यान, देववाणी ध्यान तथा गौरीशंकर ध्यान**" विशेष रूप से तैयार किये गये वाद्य-सगीत के साथ किया जाता है।

जो साधक घर पर अकेले या सपरिवार ध्यान करते हैं—और जिनके पास अपने टेप-रिकॉर्डर है—वे भी उक्त सभी ध्यान-विधियो को वाद्य-सगीत के साथ करते हैं।

अत जिन साधको के पास टेप-रिकॉर्डर हो, अगर वे वाद्य-सगीत के कैसेट्स उपलब्ध करना चाहे, तो वे **श्री रजनीश आश्रम, १७–कोरेगाँव पार्क, पूना–४११ ००१** से सम्पर्क करे।

ध्यान रहे, इन सभी विधियो को बिना वाद्य-सगीत की सहायता के भी किया जा सकता है—किया जाता है।

७. नाद-ब्रह्म ध्यान

तिब्बत देश की यह बहुत पुरानी विधि है।
बडे भोर मे, दो और चार बजे के बीच उठकर,
साधक इस विधि का अभ्यास करते थे और फिर सो जाते थे।
भगवान् श्री का कहना है
कि हम लोग नाद-ब्रह्म ध्यान सोने के पूर्व मध्य-रात्रि मे करें।
या फिर प्रात काल के समय करे।

ध्यान रहे कि रात के अतिरिक्त जब भी इसे किया जाये,
तब अन्त मे पन्द्रह मिनट का विश्राम अनिवार्य है।

नाद-ब्रह्म ध्यान, सामूहिक और व्यक्तिगत दोनो ढग से किया जा सकता है।
पेट भरे रहने पर यह ध्यान नही करना चाहिए,
क्योकि तब आन्तरिक नाद गहरा नही जायेगा।
यदि इसे अकेले करे तो कान मे रुई या कोई डाट लगाना उपयोगी होगा।

यह ध्यान तीन चरणो का है।
पहला चरण तीस मिनट का है,
और दूसरा तथा तीसरा पन्द्रह-पन्द्रह मिनट का।
आँखे पूरे समय बन्द रहेगी।

पहला चरण

आँखें बन्द कर सुखपूर्वक बैठ जाएँ।
अब मुँह को बन्द रखते हुए, भीतर-ही-भीतर,
हूँ ऊँ ऊँ ऊँ ऊँ ऊँ का नाद शुरू करें।
यह नाद इतने जोर से शुरू करे कि इसका कम्पन आपको पूरे शरीर मे अनुभव हो।
नाद इतना ऊँचा हो कि आस-पास के लोग इसे सुन सकें।
नाद के स्वर-मान मे आप बदलाहट भी कर सकते है।
अपने ढग से गुँजार करें और फिर श्वास भीतर ले जाएँ।

.. अगर शरीर हिलना चाहे तो उसे हिलने दें, लेकिन गति अत्यन्त धीमी और प्रसादपूर्ण हो।

नाद करते हुए भाव करें कि आपका शरीर बाँस की खाली पोगरी है— जो सिर्फ गुँजार के कम्पनो से भरी है।

. कुछ समय के बाद वह बिन्दु आयेगा जब आप श्रोताभर रहेंगे और नाद आप-ही-आप गूँजता रहेगा।

यह नाद मस्तिष्क के एक-एक तन्तु को शुद्ध कर उन्हे सक्रिय करता है तथा प्रभु-चिकित्सा मे विशेष लाभकारी है।

इसे तीस मिनट से अधिक तो कर सकते है, लेकिन कम नही।

दूसरा चरण .

अब दोनो हाथो को अपने सामने रखें और हथेलियो को ऊपर की ओर।

अब दोनो हाथो को आगे की तरफ ले जाते हुए चक्राकार घुमाएँ।

दायाँ हाथ दायी तरफ को जायेगा और बायाँ हाथ बायी तरफ को।

और तब वर्तुल पूरे करते हुए दोनो हाथो को अपने सामने उसी स्थान पर वापिस ले आएँ।

ध्यान रहे कि जितना हो सके हाथो के घूमने की गति धीमी-से-धीमी रखनी है। वह इतनी धीमी रहे कि आपको ऐसा लगे कि जैसे गति हो नही हो रही है।

शरीर हिलना चाहे तो उसे हिलने दे, लेकिन उसकी गति भी बहुत धीमी, मृदु और प्रसादपूर्ण हो।

यह क्रम साढे सात मिनट तक चलेगा।

इसके बाद हथेलियो को नीचे की ओर उलट दें और हाथो को विपरीत दिशा मे घुमाना शुरू करें।

. पहले तो सामने रखे हुए हाथो को अपने शरीर की तरफ आने दें और फिर उसी प्रकार दायें हाथ को दायी तरफ तथा बायें हाथ को बायी तरफ वर्तुलाकार गति करने दें—जब तक कि वे वापिस उसी स्थान पर सामने न आ जाएँ।

.. घूमने के लिए हाथो को अपने-आप न छोडें, बल्कि इसी वर्तुलाकार ढाचे मे धीरे-धीरे उन्हे घुमाते रहे।

यह क्रम भी साढे सात मिनट तक चलेगा।

. हाथो को बाहर की ओर घुमाते समय भाव करे कि ऊर्जा शरीर से बाहर जा रही है और भीतर की ओर घुमाते समय भाव करें कि आप ऊर्जा ग्रहण कर रहे है।

तीसरा चरण

. बिलकुल शान्त और स्थिर बैठे रहे।

संकेत

ध्यान रहे ! भगवान्श्री ने दम्पतियो के लिए नाद-ब्रह्म ध्यान की एक अन्य विधि भी बतायी है, जो इस प्रकार है

. पहले कमरे को ठीक-से अन्धेरा कर मोमबत्ती जला लें।
विशेष सुगन्धवाली अगरबत्ती ही जलाएँ, जो सिर्फ इस ध्यान के समय ही हमेशा उपयोग मे लाएँ।
फिर दोनो अपना शरीर एक चादर से ढक लें।
बेहतर यही होगा कि दोनो के शरीर पर कोई और वस्त्र न हो।
अब एक-दूसरे का तिरछे ढग से हाथ पकड आमने-सामने बैठ जाएँ।
अब आँखे बन्द कर ले और कम-से-कम तीस मिनट तक लगातार .
हूँ ऊँ ऊ ऊँ ऊ ऊ का गुजार करते रहे।
गुँजार दोनो एक-साथ करें।
एक या दो मिनट के बाद दोनो की श्वसन-क्रिया और गुँजार एक-दूसरे मे घुलमिल जाएँगे और दो ऊर्जाओ के मिलन की दोनो को प्रतीति होगी।

रात्रि, सोने के पूर्व इसे करें।

८. देववाणी ध्यान

देववाणी का अर्थ है, परमात्मा की वाणी।
ध्यान के इस प्रयोग के समय निरन्तर भाव करना है
कि परमात्मा ही हमारे माध्यम से बोल रहा है, चल रहा है, हिल रहा है
और मात्र हम वाहन हैं—खाली घडे,
जिसके भीतर से परमात्मा ही बोलता और गति करता है।

इस विधि के दूसरे चरण का प्रयोग कही भी और कभी भी—नहाते हुए,
गाडी चलाते हुए, काम करते हुए—किया जा सकता है।
यह किसी भी प्रार्थना से अधिक शक्तिशाली है।
ओल्ड टेस्टामेन्ट मे इस तरह की बोली को "ग्लोसोलेलिया"—
याने "देववाणी" कहा गया है।

इस ध्यान के चार चरण है और प्रत्येक चरण पन्द्रह-पन्द्रह मिनट का है।
पूरे ध्यान के क्रम मे आँखें बन्द रहेगी।

पहला चरण :

शान्त बैठ जाओ और सगीत को सुनो।
बस, और कुछ नही करना है।

दूसरा चरण :

जब सगीत बन्द हो जाए तब तुम्हे देववाणी के लिए वाहन बन जाना है।

अब धीरे-धीरे और हौले-हौले बोलना शुरू करो—ला ला ला .
और ऐसा तब तक करते रहो जब तक तुम्हारे होठो से अपरिचित-से शब्द न निकलने लगें।

इसे जीभ का लातिहान[1] बन जाने दो।

इस ध्यान के कुछ दिनो के ही प्रयोग के बाद ये शब्द अनभ्यस्त (अजनबी) भाषा का रूप ले लेंगे और तुम पाओगे कि तुम उसके पूरे-पूरे वाक्य बोल रहे हो।

---

१ बस, तुम नहीं हो जाओ और 'उसे' तुमसे होकर बहने दो, गति करने दो।

...यदि शब्द का आना रुक जाये तो फिर से ला . ला ला .
कहना शुरू करो।
शब्द तब फिर से आने लगेंगे।

ध्यान रहे कि इसमे न तो चीखना-चिल्लाना है, न हँसना-रोना ही है।
वैसा करने से लगेगा कि बोलना अर्थपूर्ण हो गया है।
और यह कि वह मस्तिष्क के अनजाने भाग से नही आ रहा है।
इन शब्दो को मस्तिष्क के उस भाग से आना है, जिसका इस्तेमाल तुम अपने बचपन मे करते थे, जब तुमने बोलना शुरू नही किया था।
इन्हे उस भाग से नही आना है जिससे तुम अब सारा दिन सोचते और बकते रहते हो।

तीसरा चरण

खडे हो जाओ और देववाणी मे बोलते रहो।

साथ-ही-साथ लातिहान[1] के ढग से शरीर को भी परमात्मा के इशारे पर हिलने को छोड दो।

शरीर को मुलायम और ढीला रहने दो और शीघ्र ही तुम्हे तुम्हारे भीतर सूक्ष्म ऊर्जा का अनुभव होगा।

और यही ऊर्जा तुम्हारे शरीर को हिलाए।

तुम मत हिलो, ऊर्जा ही हिले-हिलाए।

चौथा चरण

लेट जाओ और पूरी तरह निष्क्रिय और निश्चल हो रहो।

सकेत

अगर आपके पास देववाणी ध्यान के पहले चरण के लिए विशेष रूप से तैयार किया गया सगीत का कैसेट-टेप न हो तो पहले चरण मे शान्त बैठकर चारो ओर जो ध्वनियाँ हो रही है, उन्हे चुपचाप पन्द्रह मिनट तक सुनते रहे, फिर दूसरे चरण मे प्रवेश करें।

---

१ इन्डोनेशिया के सन्त सुबुद का ध्यान-विधि—जिसमें शान्त-शिथिल खड़े होकर भीतर से जैसे भी 'वह' गति करना चाहे—बस, उसे बाहर अभिव्यक्त करने में सहयोग करते हैं।

९. प्रार्थना ध्यान

प्रार्थना एक भाव-दशा है—निसर्ग के साथ बहने की, एक होने की प्रक्रिया है। यदि प्रार्थना मे तुम बोलना चाहो तो बोल सकते हो—लेकिन याद रहे कि तुम्हारी बातचीत अस्तित्व को प्रभावित नही करने जा रही है, वह तुम्हे प्रभावित करेगी।
तुम्हारी प्रार्थना परमात्मा के मन को बदलनेवाली नही है, वह तुम्हे बेशक बदल सकती है।
और अगर वह तुम्हे नही बदलती है तो समझो कि वह मन की एक चालाकीभर है।
यह विराट् आकाश तुम्हारे साथ होगा, यदि तुम उसके साथ हो सको।
इसके अतिरिक्त प्रार्थना का कोई दूसरा ढग नही है।
मैं प्रार्थना करने को कहता हूँ—लेकिन यह ऊर्जा आधारित घटना हो, न कि कोई भक्ति की बात।

पहला चरण :

- तुम चुप हो जाओ, तुम अपने को खोलभर लो।
- दोनो हाथ सामने की ओर उठा लो।
- हथेलियाँ आकाशोन्मुख हो और सिर सीधा उठा हुआ रहे।
- ... और तब अनुभव करो कि अस्तित्व तुममे प्रवाहित हो रहा है।

जैसे ही ऊर्जा या प्राण तुम्हारी बाहो से होकर नीचे की ओर बहेगा, वैसे ही तुम्हे हल्के-हल्के कम्पन का अनुभव होगा।

- तब तुम हवा मे कँपते हुए पत्ते की भाँति हो जाओ।
- शरीर को ऊर्जा से झनझना जाने दो—और जो भी होता हो, उसे होने दो।
- ... उसे पूरा सहयोग करो।

दूसरा चरण :

. दो या तीन मिनट के बाद—या जब भी तुम पूरी तरह भरे हुए अनुभव करो, तब तुम आगे झुक जाओ और माथे को पृथ्वी से लगा लो।

दोनो हाथ सिर के आगे पूरे फैले रहेगे और हथेलियाँ भी पृथ्वी को स्पर्श करेंगी।

. पृथ्वी की ऊर्जा के साथ दिव्य-ऊर्जा के मिलन के लिए तुम वाहन बन जाओ।
अब पृथ्वी के साथ प्रवाहित होने का, बहने का अनुभव करो।

. अनुभव करो कि पृथ्वी और स्वर्ग, ऊपर और नीचे, यिन और याँग, पुरुष और नारी—सब एक महाआलिगन मे आबद्ध है।
तुम बहो, तुम घुलो।
अपने को पूरी तरह छोड दो और सर्व मे निमज्जित हो जाओ।

दोनो चरणो को छह बार और दुहराओ, ताकि सभी सातो चक्रो तक ऊर्जा गति कर सके।

इन्हे अधिक बार भी दुहराया जा सकता है, लेकिन सात से कम पर छोडा तो बेचैनी अनुभव होगी—रात मे सो न सकोगे।

अच्छा हो कि यह प्रार्थना रात मे करो।
प्रार्थना के समय कमरे को अन्धेरा कर लो और उसके बाद तुरन्त सो जाओ।

सुबह मे भी इसे किया जा सकता है,
लेकिन तब अन्त मे पन्द्रह मिनट का विश्राम आवश्यक हो जायेगा।
अन्यथा तुम्हे लगेगा कि तुम तन्द्रा मे हो—नशे मे हो।
यह ऊर्जा मे निमज्जन प्रार्थना है।
यह प्रार्थना तुम्हे बदलेगी।
और तुम्हारे बदलने के साथ ही अस्तित्व भी बदल जायेगा।

१०. सामूहिक प्रार्थना ध्यान

सामूहिक प्रार्थना ध्यान के लिए कम-से-कम तीन व्यक्ति होने चाहिए।
बडी सख्या के साथ करना अधिक श्रेयस्कर है।
और मन्ध्या का समय सर्वाधिक योग्य है इमके लिए।

पहला चरण

एक घेरे मे खडे हो जाओ, आँखे बन्द कर लो और अगल-बगल के मित्रो के हाथ अपने हाथ मे ले लो।

फिर धीरे-धीरे लेकिन आनन्दपूर्वक और तेज स्वर मे 'ओ ऽऽऽऽऽऽम्' —ऐसा उच्चार शुरू करो।

बीच-बीच मे, उच्चार के अन्तराल के बीच एक मौन की घाटी को प्रविष्ट होने दो।

अपनी और अपने परिवेश की दिव्यता और पूर्णता का अनुभव करो और अपने अहकार को घुलकर उच्चार मे निमज्जित हो जाने दो।

जिनके पास आँखे हैं, वे देखेंगे कि समूह के बीच से ऊर्जा का एक स्तम्भ ऊपर उठ रहा है।
कोई अकेला आदमी बहुत-कुछ नही कर सकता है—लेकिन, यदि पाँच सौ व्यक्ति सम्मिलित होकर इस प्रार्थना मे योग दें, तो इसकी बात ही कुछ और है।

दूसरा चरण :

दस मिनट के बाद, समूह के नेता के इशारे पर जब हाथ से हाथ छूटकर नीचे आ जायें, तब सब कोई ज़मीन पर झुक जाओ, पृथ्वी माता को प्रणाम करो, और ऊर्जा को पृथ्वी मे प्रविष्ट हो जाने दो।

११. खिलखिला के हँसना

सुबह जैसे ही आपको पता चले कि नीद खुल गई हे—आँखे मत खोलें।

जैसे ही अनुभव मे आये कि नीद खुल गई—पहला काम करे
जैसा कि बिल्लियाँ या कुत्ते पूरे शरीर को खीचते है, तानते है—
वैसा पूरा शरीर के अगो को खीचे, तानें और शिथिल करे।
ताकि पूरे शरीर मे शक्ति का प्रवाह हो जाए।

सारे अगो को खीचे और ढीला छोड दे—खीचे और ढीला छोड दें।

पैरो को, हाथो का, गर्दन को—पूरे शरीर को अकडाए—और सब तरह से, जैसा कि पशु करते है।
ताकि शरीर मे शक्ति पूरी तरह प्रवाहित हो जाए।

अढाई मिनट—दो, अढाई मिनट।

अभी भी आँख न खोले।
और जब दो-अढाई मिनट ऐसा करने के बाद आप पायें कि स्फूर्ति आ गयी,
सारा शरीर जग गया—रोआँ-रोआँ जग गया,
तब अढाई मिनट के लिए खिल-खिला के पागल की तरह हँसे।
आँख बन्द ही रखे।

उसके बाद ही बिस्तर से उठे।

संकेत

सम्भव है शुरू-शुरू मे आपको हँसी न आये और प्रयासपूर्वक झूठी हँसी लानी पडे। लेकिन कुछ ही क्षणो मे सब बाधा गिर जायेगी और वास्तविक हँसी का झरना फूट पडेगा।

यह भी हो सकता हे कि सचमुच की हँसी आने मे कुछ दिन लग जायें, क्योकि इस भाँति पहले हम कभी हँसे नही हैं। पर थोडे ही दिनो मे जब हँसी सहज ही आने लगेगी, आप पायेंगे कि पूरे दिन की गुणवत्ता ही बदल गयी है।

१२. रात्रि-ध्यान — ओ ऽ ऽ ऽ

रात्रि, सोने के पूर्व, बिस्तर पर लेट जाएँ, कमरे मे अन्धेरा कर लें, और आँख बन्द कर के जोर से स्वाँस मुँह से बाहर निकाले।

निकालने से शुरू करें—एग्जेहलेशन, लेने से नही, निकालने से।
जोर से स्वाँस मुँह से बाहर निकालें, और निकालते समय
'ओ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ' की ध्वनि करें।
जैसे-जैसे ध्वनि साफ होने लगेगी, 'ओम्' अपने-आप निर्मित हो जायेगा,
आप सिर्फ ओऽऽऽऽऽऽऽऽ का उच्चार करे।
ओम् का आखिरी हिस्सा, अपने-आप, जैसे ध्वनि व्यवस्थित होगी—
आने लगेगा।

आपको 'ओम्' नही कहना है, आपको सिर्फ 'ओऽऽऽ' कहना है—
'म्' को आने देना है।
पूरी स्वाँस को बाहर फेंक दे, फिर ओठ बन्द कर लें
और शरीर को स्वाँस लेने दे।
आप मत लें।

निकालना आप को है, लेना शरीर को है, लेने का काम शरीर करलेगा।
श्वास रोकनी नही हे।
लेते समय आप को कुछ भी नही करना है
न लेना है, न रोकना है—बस, छोडना है।

तो दस मिनट तक ओऽऽऽऽ की आवाज के साथ स्वाँस को छोड़ें—मुँह से, फिर नाक से स्वाँस लें, फिर मुँह से छोडे, फिर नाक से लें .और ऐसे ओऽऽऽऽ की आवाज करते-करते, करते-करते सो जाएँ।

इससे निद्रा गहरी और स्वप्नरहित हो जायेगी तथा सुबह उठने पर एक अपूर्व ताजगी का अनुभव होगा।

१३ जिबरिश

अंग्रेज़ी का 'जिबरिश' शब्द 'जब्बार' नाम के एक सूफी सन्त से बना है।
जब्बार अक्सर अनर्गल, अनाप-शनाप भाषा मे बोला करते थे।
वे इस भाँति बोलते थे कि कोई समझ नही पाता था कि वे क्या बोल रहे है।
इसलिए लोगो ने उनकी भाषा को "जिबरिश" नाम ही दे दिया—
जब्बार से जिबरिश।

ईसाइयो के एक मत मे इस तरह के ध्यान को 'ग्लेसोलालिया' कहते है,
टाकिग इन टग्ज़।

अत इस ध्यान-प्रयोग मे आप को भी जब्बार बन जाना है।

यह एक घन्टे का ध्यान है, बीस-बीस मिनट के तीन चरण हैं।

साय तीन से छह बजे के बीच इसे करें।

पहला चरण

. खुले आकाश के नीचे विश्रामपूर्ण मुद्रा मे लेट जाएँ और खुली आँख से
आकाश मे झाँके।

किसी बिन्दु-विशेष पर नही, बल्कि सम्पूर्ण आकाश मे।

दूसरा चरण :

...अब बैठ जाएँ, आँखें खुली रखें और आकाश के सामने जिबरिश मे—
याने अनाप-शनाप बोलना शुरू करें।
...बीस मिनट के लिए 'जब्बार-जैसे' बन जाएँ—जो भी मन मे आये, बोलें।
...चीखें, चिघाडें, किलकारियाँ मारें, ठहाके लगाएँ—कुछ भी।

लेकिन इसे सार्थक बनाने की कोशिश न करें।
क्योकि तब इसका कोई अर्थ नही रह जायेगा, तब सब व्यर्थ हो जायेगा।

ध्यान रहे, आप किसी व्यक्ति से नही, बृहत् आकाश से बोल रहे हैं।
और आकाश कुछ भी नही समझता।
भाषा इसमे सहयोगी नही है।
भाषा से मन का कभी अतिक्रमण नही होता।
आकाश के सामने,
आकाश के समक्ष ऊल-जलूल बात करने से मन तत्काल गिर जाता है;
उसकी ज़रूरत ही नही रह जाती है।
लेकिन मन कहेगा ' यह क्या कर रहे हो? पागल हो गये हो?
पर मन की न सुनें।
उसे कह दें ज़रा प्रतीक्षा करो, जो मै करता हूँ मुझे करने दो।

बस, बीस मिनट इसका खूब मजा लें।

तीसरा चरण ·

· शान्त हो जाएँ, आँखें बन्द कर लें और विश्राम मे चले जाएँ।
· अब भीतर के आकाश मे—अन्तर्आकाश मे झाँकें।

बीस मिनट अनाप-शनाप बक चुकने पर आप अपने को इतने शान्त और आकाशवत् महसूस करेंगे कि आप कल्पना भी नही कर सकने कि आपके भीतर इतना बडा आकाश है।

लेकिन, इसे अकेले करें।

१४. शिवनेत्र ध्यान

यह एक घन्टे का ध्यान है और इसमे दस-दस मिनट के छह चरण है। साधको के सामने जरा हटकर, थोडी ऊँचाई पर, एक नीले रग का प्रकाश—याने बिजली का बल्ब जलता है, जो प्रकाश को घटाने-बढाने वाले एक यन्त्र[१] के द्वारा, दस मिनट मे तीन बार, बारी-बारी धीमा और तेज किया जाता है। उसके सहारे ही यह ध्यान सचालित होता है।

पहला चरण

. बिलकुल स्थिर बैठे।

.. हल्के-हल्के, बिना आँखो मे कोई तनाव लाये सामने जल रहे प्रकाश को देखे।

दूसरा चरण

. आँखें बन्द कर लें और कमर से ऊपर के भाग को हौले-हौले दाये मे बायें और बायें से दाये हिलाएँ।

और साथ-ही-साथ यह भी अनुभव करते रहे कि आपकी आँखो ने पहले चरण के समय जो प्रकाश पीया है, वह अब 'शिवनेत्र'— यानी 'तीसरी-आँख' मे प्रवेश कर रहा है।

यह सचमुच घटित होता है।

दोनो चरणो को बारी-बारी तीन बार दोहराएँ।

---

१ प्रकाश को घटाने-बढाने वाले यन्त्र (Dimming Switch) के साथ ३०० वॉट का नीले रग का प्रकाश इसके लिए आदर्श है, लेकिन साधारण नीले प्रकाश या मोमबत्ती से भी काम चलाया जा सकता है।

१५. गौरीशंकर ध्यान

घन्टेभर के इस ध्यान मे चार चरण हैं और प्रत्येक चरण पन्द्रह मिनट का है।

पहले चरण को ठीक-से करने पर आपके रक्त-प्रवाह मे कार्बन-डाय-आक्साइड का तल इतना ऊँचा हो जायेगा कि आप अपने को गौरीशकर—एवरेस्ट-शिखर पर महसूस करेंगे।
वह आपको इतना ऊपर उठा देगा।

इस ध्यान-प्रयोग के दूसरे चरण मे साधकों के सामने प्रकाश का एक बल्ब[1] तेजी से सतत जलता-बुझता रहता है।

पहला चरण

आँखे बन्द कर बैठ जाएँ।

अब नाक से उतनी गहरी श्वास भीतर लें, जितनी ले सकते हैं।

और इस श्वास को भीतर तब तक रोके रहे, जब तक ऐसा न लगने लगे कि अब अधिक नही रोका जा सकता।

फिर धीरे-धीरे श्वास को मुँह से बाहर निकाल दे।

और फिर तब तक भीतर जानेवाली स्वॉस न लें, जब तक लेना मजबूरी न हो जाये।

यह क्रम पन्द्रह मिनट तक जारी रखे।

दूसरा चरण

श्वसन-क्रिया को सामान्य हो जाने दें।

आँखे खोल ले और सतत जलने-बुझते हुए तेज प्रकाश[1] को धीमे-धीमे देखते रहे।

और शरीर को पूरी तरह स्थिर रखें।

---

1. The flashing light should be a synchronised strobe

तीसरा चरण

.. खड़े हो जाएँ, आँखें बन्द कर ले और शरीर को 'लातिहान'[1] के ढग से धीरे-धीरे हिलने दें।

...लातिहान के द्वारा आप अपने अन्तस् को शरीर के माध्यम से प्रकट होने दें और उस अभिव्यक्ति मे पूरा सहयोग दे।

चौथा चरण

...लेट जाएँ और सर्वथा निष्क्रिय हो रहे।

१ इन्डोनेशिया के सन्त सुबुद् की ध्यान-विधि—जिसमें शान्त-शिथिल खड़े होकर, भीतर से जैसे भी 'वह' गति करना चाहे, प्रकट होना चाहे—बस, उसे बाहर अभिव्यक्त करने मे सहयोग करते हैं।

१६. अग्निशिखा ध्यान

अच्छा हो कि शाम के समय अग्निशिखा ध्यान किया जाये।
और यदि मौसम गर्म हो तो कपड़े उतारकर।
इस ध्यान-विधि मे पाँच-पाँच मिनट के तीन चरण है।

पहला चरण

. .कल्पना करें कि आपके हाथ मे एक ऊर्जा का गोला है—गेंद है।
थोडी देर मे यह गोला कल्पना से यथार्थ-सा हो जायेगा।
वह आपके हाथ पर भारी हो जायेगा।

दूसरा चरण

...ऊर्जा की इस गेद के साथ खेलना शुरू करें।
. इसके वजन को, इसके द्रव्यमान को अनुभव करें।
...जैसे-जैसे यह ठोस होता जाये, इसे एक हाथ से दूसरे हाथ मे फेकना शुरू करे।
. यदि आप दक्षिणहस्तिक हैं तो दाये हाथ से शुरू करें और बायें हाथ से अन्त, और यदि वामहस्तिक हैं तो यह प्रक्रिया उलटी होगी।

गेंद को हवा मे उछालें, अपने चारो ओर उछालें, अपने पैरो के बीच से उछालें—लेकिन ध्यान रखें कि गेंद जमीन पर न गिरे।
अन्यथा खेल फिर सें शुरू करना पड़ेगा।

.. इस चरण के अन्त मे गेंद को बाये हाथ मे लिए हुए दोनो हाथ सिर के ऊपर उठा लें और फिर गेंद को दोनो हथेलियो के बीच मे रख ले।

. अब गेंद को नीचे लाएँ और अपने सिर पर आकर उसे टूट-फूट जाने दें, ताकि उसकी ऊर्जा से आपका शरीर आपूरित हो जाए।

कल्पना करें कि आप पर ऊर्जा की वर्षा हो रही है—और आपके शरीर के चारो ओर ऊर्जा का आवरण बन गया है।

अब आपके चारो तरफ से ऊर्जा आपकी तरफ आकर्षित होने लगेगी,
उसकी पर्त-दर-पर्त आप पर बरसेगी।
यहाँ तक कि दूसरे चरण के अन्त मे आप ऊर्जा की सात पर्तो मे समा जाएँगे।

भाव के साथ नाचें, इसका मजा ले, इसमे स्नान करें—और अपने शरीर को भी इस उत्सव मे भाग लेने दें।

तीसरा चरण .

जमीन पर झुक जाएँ और दोनो हाथो को प्रार्थना की मुद्रा मे सामने फैला दें—और फिर कल्पना करें कि आप ऊर्जा की अग्निशिखा हैं—आपसे होकर ऊर्जा भूमि से ऊपर उठ रही है।

धीरे-धीरे आपके हाथ, आपकी भुजाएँ, आपके सिर के भी ऊपर उठ जाएँगी और आप का शरीर अग्निशिखा का आकार ले लेगा।

१७. त्राटक ध्यान—१

यह ध्यान चालीस मिनट का है और इसमे बीस-बीस मिनट के दो चरण हैं।

पहला चरण

पाँच या छह फुट की ऊँचाई पर भगवान्‌श्री रजनीश का एक बडा-सा फोटो दीवाल पर इस प्रकार टाँगें, कि फोटो पर पर्याप्त प्रकाश पडे।

. शरीर पर कम-से-कम और ढीले वस्त्र रखें।

. फोटो से चार-पाँच फुट की दूरी पर खडे हो जाएँ।

. दोनो हाथ ऊपर उठाएँ, एकटक भगवान्‌श्री के फोटो को देखें—और 'हू-हू-हू' की तीव्र आवाज लगातार करते हुए उछलना शुरू करे।

भगवान् श्री की उपस्थिति अनुभव करे और 'हू-हू' की आवाज तेज़ करें।

न आँखे बन्द करे, न पलकें झपकाएँ।

आँसू आते हो तो आने दें।

आँखे फोटो पर एकाग्र रखें और शरीर मे जो भी कम्पन और क्रियाएँ होती हो, उसे सहयोग करके तीव्र करें।

महामन्त्र —'हू' की चोट से भीतर की काम-ऊर्जा ऊपर की ओर उठेगी तथा भगवान् श्री के फोटो से दिव्य-ऊर्जा का शक्तिपात आप पर होता रहेगा।

दूसरा चरण

अब सारी क्रियाएँ—'हू-हू' की आवाज, उछलना और भगवान्‌श्री के चित्र को एकटक देखना—सब बन्द कर दें।

शरीर को बिलकुल स्थिर कर लें, आँखे मूँद लें और भीतर की ऊर्जा को अनुभव करे।

गहरे ध्यान मे डूब जाएँ।

बीस मिनट के बाद गहरे ध्यान से वापिस लौट आएँ।

इस प्रकार यह त्राटक ध्यान पूरा होगा।

१८. त्राटक ध्यान—२

यह प्रयोग एक घन्टे का है।
पहला चरण चालीस मिनट का और दूसरा बीस मिनट का।

पहला चरण :

. कमरे को चारो ओर से बन्द कर लें
और एक बडे आकार का दर्पण अपने सामने रखे।
. कमरा बिलकुल अन्धेरा होना चाहिए।
. अब एक दीपक या मोमबत्ती जलाकर दर्पण के बगल मे इस प्रकार रखे
कि उसकी रोशनी सीधी दर्पण पर न पडे।
. सिर्फ आपका चेहरा ही दर्पण मे प्रतिबिंबित हो, न कि दीपक की लौ।
अब दर्पण मे अपनी दोनो आखो मे बिना पलक झपकाये देखते रहे—
लगातार चालीस मिनट तक।
.. अगर आँसू निकलते हो तो उन्हे निकलने दें,
लेकिन पूरी कोशिश करें कि पलक गिरने न पाये।
. आँखों की पुतलियो को भी इधर-उधर न घूमने दें—
ठीक दोनो आँखो मे झाँकते रहे।

दो-तीन दिन के भीतर ही विचित्र घटना घटेगी
आपके चेहरे दर्पण मे बदलने प्रारम्भ हो जायेंगे।
आप घबडा भी सकते है।
कभी-कभी बिलकुल दूसरा चेहरा आपको दिखाई देगा—
जिसे आपने कभी नही जाना है कि वह आपका है।
पर ये सारे चेहरे आपके ही हैं।
अब आपके अचेतन मन का विस्फोट प्रारम्भ हो गया है।
कभी-कभी आपके विगत् जन्म के चेहरे भी उसमे आयेंगे।
करीब एक सप्ताह के बाद यह शक्ल बदलने का क्रम बहुत तीव्र हो जायेगा,
बहुत सारे चेहरे आने-जाने लगेंगे, जैसा कि फिल्मो मे होता है।
तीन सप्ताह के बाद आप पहचान न पायेंगे कि कौन-सा चेहरा आपका है।

आप पहचानने मे समर्थ न हो पायेंगे,
क्योकि इतने चेहरो को आपने आते-जाते देखा है।
अगर आपने इसे जारी रखा, तो तीन सप्ताह के बाद, किसी भी दिन,
सबसे विचित्र घटना घटेगी
अचानक आप पायेंगे कि दर्पण मे कोई चेहरा नही है—
दर्पण बिलकुल खाली है और आप शून्य मे झाँक रहे है!
यही महत्त्वपूर्ण क्षण है।

तभी आँखें बन्द कर लें और अपने अचेतन का साक्षात् करें।
. जब दर्पण मे कोई प्रतिबिम्ब न हो, तो सिर्फ आँखें बन्द कर लें, भीतर देखें—
और आप अचेतन का साक्षात् करेंगे।

वहाँ आप बिलकुल नग्न हैं—निपट, जैसे आप हैं।
सारे धोखे वहाँ तिरोहित हो जायेंगे।
यह एक सत्य है, पर समाज ने बहुत-सी पर्तें निर्मित कर दी हैं
ताकि मनुष्य उससे अवगत न हो पाये।
एक बार आप अपने को पूरी नग्नता मे देख लेते हैं,
तो आप बिलकुल दूसरे आदमी होने शुरू हो जाते है।
तब आप अपने को धोखा नही दे सकते है।
अब आप जानते है कि आप क्या हैं।
और जब तक आप यह नही जानते कि आप क्या हैं,
आप कभी रूपान्तरित नही हो सकते।
कारण, कोई भी रूपान्तरण इस नग्न-सत्य के दर्शन मे ही सम्भव है,
यह नग्न-सत्य किसी भी रूपान्तरण के लिए बीजरूप है।
अब आपका असली चेहरा सामने है, जिसे आप रूपान्तरित कर सकते हैं।
और वास्तव मे,
ऐसे क्षण मे रूपान्तरण की इच्छा-मात्र से रूपान्तरण घटित हो जायेगा;
और कुछ भी करने की जरूरत नही है।

दूसरा चरण :
.. अब आँखें बन्द कर विश्राम मे चले जाएँ।

१९. त्राटक ध्यान—३

त्राटक एक प्राचीन यौगिक पद्धति है—
जो मन को एकाग्र करती है, साइकिक केन्द्रो को सक्रिय करती है,
मूलाधार-चक्र मे छिपी प्रसुप्त कुण्डलिनी-शक्ति को जगाती है—
और इस प्रकार साधक को गहरे ध्यान मे ले जाती हे।

यह प्रयोग बहुत ही शक्तिशाली है और बेजोड असरदार भी।
खासकर, जब इसे ऐसे विषय पर किया जाये जो मन को बेहद पसन्द हो।

त्राटक की यह विधि यूँ तो मन की किसी भी प्रिय वस्तु पर की जा सकती हे,
लेकिन ज्यादा अच्छा है भगवान्श्री के चित्र पर त्राटक करना।
इसके लिए आप भगवान्श्री का ऐसा चित्र उपयोग मे लाएँ,
जिसमे उनकी आँखे—आप कही से भी देखे—आपकी ओर देखती हो।

त्राटक करते समय चित्र को अपने सिर से थोडा ऊपर रखें।
सूरज डूबने के पूर्व या सोने के पहले इसे किया जा सकता हे।
यह एक घन्टे का ध्यान है और सिर्फ दो चरणो का।
पहला चरण है चालीस मिनट का और दूसरा हे बीस मिनट का।

पहला चरण :

सबसे पहली बात, इस प्रयोग मे चालीस मिनट तक लगातार अपलक ताकते रहना है।

सारी चेतना आँखो मे इकट्ठी हो जाए—इसलिए आपको बिलकुल आँख ही हो जाना ह।

हर चीज को, पूरे शरीर को बिलकुल ही भूल जाएँ और सिर्फ आँख बन जाएँ।

बिना पलक झपकाये सिर्फ देखते रहे।

आँखो मे इस तरह केन्द्रित होकर चेतना
आपको तनाव की चरम सीमा तक ले जायेगी।
आँख शरीर मे सबसे ज्यादा कोमल और सुकुमार हिस्सा है।
यही कारण है शरीर के किसी दूसरे अग की बजाय
आँखे बहुत जल्दी तनावपूर्ण हो सकती है।
और आँखो के तनावपूर्ण होने से पूरा मनस् ही तनावपूर्ण हो जाता है।
आँखे मन के द्वार-धर है।

जब आप मात्र आँख ही रह जाते हैं
तो मन का तनाव बढने-बढते अपनी आखिरी सीमा तक पहुँच जाता है।
और तनाव के उस चरम शिखर से गिरने पर
विश्राम की परम खाई को आप उपलब्ध होते है।
विचारो का चलना स्वत रुक जाता है।
और धीरे-धीरे, जैसे-जैसे आप इसमे आगे बढते है,
चेतना आँखो मे और भी ज्यादा केन्द्रित होती जाती है।

तो आप, बस, सिर्फ होश से भरे रहेगे, भीतर कोई चिन्तन नही चल सकेगा।
क्योकि आँखे विचार नही कर सकती हैं।

आँखो के द्वारा कोई भी चिन्तन सम्भव नही है।
जब सम्पूर्ण चेतना आँखो मे केन्द्रित हो जाती है,
तो मन को सोचने के लिए कोई ऊर्जा ही नही मिल पाती है।
और, फलस्वरूप, मन मे विचारो का उठना तत्क्षण रुक जाता है।

तो जब आँखे झपकना चाहती हो,
तो उसी क्षण सचेत होने और इस स्थिति को दूर हटाने की जरूरत है,
क्योकि सोचने के लिए ऊर्जा प्राप्त करने की यह मन ही कोशिश कर रहा है।

यही कारण है कि प्रयोग के समय निरन्तर स्थिर-दृष्टि से
अपलक देखते रहने की आवश्यकता है।
आँखो के थोडा-सा हिलने से भी मन को सक्रिय होने के लिए ऊर्जा मिल जाती है।

.. इसलिए, आँखो को हिलाएँ नही, सिर्फ स्थिर-दृष्टि से अपलक देखते रहे।
जब आँखो को बिना हिलाए अपलक देखते है तो मन भी स्थिर हो जाता है।

मन आँखो के साथ ही गति करता है।
आँखें मन का बाह्य अग है, उसी का दूसरा छोर है।
आँखें द्वार है—वैसा द्वार—जो अन्दर की ओर मन मे खुलता है
और बाहर की ओर ससार मे भी।
आँखे अगर पूर्णतया स्थिर हो जाएँ, तो मन वस्तुत रुक जाता है—
चाहने पर भी चल नही सकता।
अगर मन रुक जाता है, तो आपकी आँखो का हलन-चलन भी रुक जाता है।

अत इस प्रयोग मे आँख से शुरू करना है,
क्योकि मन से शुरू करना अति कठिन है।
आँख बाह्य चीज है और आप इसके साथ कुछ कर सकते हैं।

तो, सामने रखे चित्र की दोनो आँखो मे सिर्फ अपलक देखते रहे।
चित्र की दोनो आँखो से आपकी दोनो आँखें बिलकुल बँध जाएँ।
कोई गति न हो—और शरीर भी बिलकुल स्थिर हो।
आँसू बहने लगें तो बहने दे।

सिर्फ दोनो आँखो मे अपलक देखते रहने से ही भीतर कुछ घटित होना शुरू हो जाता है।

दूसरा चरण

आँखें बन्द कर पूर्ण विश्राम मे चले जाएँ—लेट जाएँ।

इस प्रयोग का राज यह है कि स्थिरदृष्टि मन को भी स्थिर करती है।
और मन की बजाय आँखो को स्थिर करना ज्यादा सुगम है।

संकेत

भगवान्श्री ने अन्यत्र एक जगह इस सन्दर्भ मे कहा है
"यह प्रयोग करते-करते, ध्यान मे थोडी गहराई बढने के बाद, चित्र पर एकाग्र दृष्टि जमाने पर एक समय ऐसा आएगा कि चित्र अदृश्य हो जाएगा, वहाँ बिलकुल शून्य प्रतीत होगा।

"तब, जैसे ही चित्र शून्य हो जाए, आँखे बन्द कर लें।
ऐसे क्षण मे मुझसे सम्पर्क स्थापित हो सकता है।
उसमे समय और दूरी कोई व्यवधान नही डाल सकते।"

आगे उन्होने कहा है
"मैं जब तक इस शरीर मे हूँ, यह सम्पर्क बना लेना बिलकुल ही आसान है।
मेरे शरीर के छूटने के बाद, फिर बहुत कठिनाई होगी।
और अगर अभी सम्पर्क सध जाए, तो मेरे शरीर के छूटने के बाद भी सम्पर्क मुझसे बना रहेगा।"

२० ओंकार-साधना

सारा धर्म तुम्हारे हृदय की वीणा की ठोकठाक है, साज बिठाना है।
जिस दिन साज बैठ जायेगा, उस दिन तो बच्चा भी तार छेड दे
तो भी सगीत उत्पन्न होने लगेगा।
असली बात साज़ का बैठ जाना है।
और उस साज को बिठाने के लिए ही सारी साधना है।
ओकार के रटन को कहा जाता है, वह सिर्फ साज को बिठाना है।
वह सगीत नही है, वह सिर्फ हथौडी से ठोक रहे है तबले को,
कस रहे हैं तागे को।

मैं भी तुमसे कहूँगा
एक घडी चौबीस घडी मे निकाल ही लेनी चाहिए जब तुम कुछ भी न करो,
खाली बैठ जाओ, ओठ बन्द कर लो, जीभ को तालू से लग जाने दो,
रीढ सीधी हो और तुम भीतर ओकार का नाद करने लगो।
ओकार के नाद को भीतर करने का मतलब है
कि तुम ओठ से आवाज बाहर मत निकालो, अन्दर ही गुँजाओ।
लेकिन गुँजाओ इतने जोर से कि बाहर लोगो को सुनाई पडे।
ओठ से न निकले, सुनाई जरूर पडे।
तुम्हारे रोएँ-रोए से निकले, तुम एक गूँज बन जाओ।

बडा मीठा अनुभव होता है,
भीतर जैसे अमृत झरने लगता है थोडे ही दिनो मे।
और यह अभी असली ओकार नही है!
नकली ओकार इतना कर देना है तो असली की तो बात ही मत करो,
उसकी तो कोई तुलना ही नही हो सकती।
तुम सिर्फ आँख बन्द करके, रीढ सीधी करके—

रीढ सीधी इसलिए ताकि तुम्हारे भीतर सारा शून्यसीधा खड़ा हो जाए
और तुम ओंकार को गुँजाने लगो।
जब श्वास बाहर जाये तो तुम ओंकार की ध्वनि करो— ओऽम् ..ओऽम्...
जब श्वास भीतर जायेगी तब तो ध्वनि न कर पाओगे।
तो एक रिदम, एक लय पैदा हो जायेगी।
श्वास बाहर जायेगी, तुम श्वास को ओंकार की ध्वनि से भर दो।
फिर श्वास भीतर जायेगी, शून्य रहेगा।
फिर श्वास बाहर जायेगी, फिर ओंकार की ध्वनि।

करो इतने जोर से कि बाहर कोई गुजरता हो तो उसे सुनाई पड़े।
जैसे एक मधुमक्खियों का जत्था जा रहा हो तो एक गूँज मालूम पड़ती है,
ऐसी ही गूँज बाहर मालूम पड़ेगी।
और वह गूँज तुम्हारे शरीर को भी स्वस्थ करेगी,
तुम्हारे बिखरे मन को बाँधेगी और तुम्हारे भीतर एक अपूर्व शान्ति का
जन्म होगा—और एक मस्ती छा जाएगी।

ध्वनि की अपनी सुरा है।
इसीलिए तो संगीत सुनते-सुनते तुम्हारा सिर हिलने लगता है,
जैसे शराबी का हिल रहा हो।
संगीत की अपनी सुरा है, वैसी सूक्ष्म कोई भी सुरा नहीं,
और सब शराबें स्थूल हैं।

अगर तुमने अपने भीतर ओंकार के नाद को गुंजाया—
और ध्यान रखना कि यह तुम्हारा नाद है,
अभी तुम्हें असली नाद का पता ही नहीं है,
तो भी तुम्हारे भीतर एक मस्ती पैदा होगी, तुम एक मदमस्ती में जीने लगोगे।
तुम चलोगे और ढंग से, स्फूर्ति और होगी,
उठोगे और ढंग से, आँखों में एक नशा छाया रहेगा।
जैसे जिन्दगी में एक पहली दफा उत्सव की घड़ी आयी है।

अगर तुम इस तरह ओंकार की ध्वनि करते रहो—
करते रहो, करते रहो, करते रहो—

तो किसी दिन अचानक तुम पाओगे कि तुम्हारी धुन तो जारी है ही,
एक और धुन तुम्हारे भीतर पैदा हो रही है।
वह उसी दिन पैदा होती है,
जिस दिन तुम्हारी वीणा पूरी कस जाती है और तैयार होती है,
साज राजी होता है।
उस दिन तुम पाओगे—एक धुन तो तुम कर रहे हो,
जो अब कुछ भी नहीं है, एक फीका स्वर है, कार्बन कॉपी है—
असली धुन अब पैदा हो रही है।

तब तुम अपनी धुन को बन्दकर देना, तब तुम सुननेवाले बन जाना।
(अब तक तुम कर्त्ता थे, अब तुम सुननेवाले बन जाना।
अब तुम आँखे गडा लेना भीतर।
अब तुम प्राणो को थाम लेना, क्योकि भीतर जो घट रहा है, वह अपूर्व है,
वह अतुलनीय है, उसकी कोई उपमा नहीं है।
भीतर अमृत की धार बहने लगेगी,
रोआँ-रोआँ किसी अपूर्व प्रकाश से भर जाएगा।
अन्धकार गया, दुर्दिन गये—महासुख बरसेगा।
मिलन का क्षण करीब आ गया !)

ओंकार तुम शुरू करो, मगर तुम खीचे मत जाना।
और प्रतीक्षा करना उस दिन की, जिस दिन भीतर का ओंकार फूटने लगे।
उस दिन तुम जिद मत करना अपने ओंकार को थोपने की।
उस दिन तुम बिलकुल चुप हो जाना।
तुम्हारा ओंकार तो सिर्फ आयोजन था,
ताकि रास्ता बन जाये उस ओंकार के बहने के लिए,
ताकि तुम्हारे यन्त्र से मार्ग बन जाए उस ओंकार को झेलने के लिए।
तुम्हारा ओंकार तो सिर्फ पूर्व-तैयारी थी, रिहर्सल था।
असली नाटक तो तब शुरू होता है,
जब तुम्हारा ओंकार तो गया और उसका ओंकार शुरू हुआ।

एक ओंकार सत्नाम।

ओंकार साधना सार-संक्षेप

एक घड़ी चौबीस घड़ी में निकाल लो, जब तुम कुछ भी न करो।
खाली बैठ जाओ, ओंठ बन्द कर लो, जीभ को तालू से लग जाने दो,
रीढ़ सीधी हो और तुम भीतर ओंकार का नाद करने लगो।

ओंकार के नाद को भीतर करने का मतलब है
कि तुम ओंठ से आवाज बाहर मत निकालो, अन्दर ही गुंजाओ।
लेकिन गुंजाओ इतने जोर से कि बाहर वह सुनाई पड़े।
तुम्हारे रोएँ-रोएँ से निकले, तुम एक गूँज बन जाओ।

अगर तुम इस तरह ओंकार की ध्वनि करते रहो—करते रहो—करते रहो—
तो किसी दिन अचानक तुम पाओगे कि तुम्हारी धुन तो जारी है,
एक और धुन तुम्हारे भीतर पैदा हो रही है।
तब तुम अपनी धुन को बन्द कर देना, तब तुम सुननेवाले बन जाना।
और तुम्हारा रोआँ-रोआँ किसी अपूर्व प्रकाश से भर जायेगा।

२१. मन्त्र-साधना

मन को जो मार दे, वह मन्त्र है।
मन की जिससे मृत्यु घटित हो जाए, वह मन्त्र है।
और मन जब नही रह जाता,
तो तुम्हारे और शरीर के बीच जो सेतु है वह टूट जाता है।
मन ही जोड़े हुए हे तुम्हे शरीर से।
अगर बीच का सेतु, बीच का सम्बन्ध टूट जाए,
तो शरीर अलग, तुम अलग हो जाते हो।
और जिसने जान लिया अपने को शरीर से अलग और मन से शून्य,
वह शिवत्व को उपलब्ध हो जाता है।
वह परम केवली है।

इसलिए मन्त्र को समझ लें, उसका प्रयोग जीवन मे क्रान्ति ला सकता है।
पर एक-एक कदम बढना जरूरी है, और धैर्य रखना होगा।
मन्त्र बहुत धीरज का प्रयोग है।
अधैर्य जिनके मन मे बहुत ज्यादा है, उन्हे मन्त्र से लाभ न होगा,
नुकसान हो सकता है।
क्योकि वैसे ही तुम काफी परेशान हो,
मन्त्र एक और नयी परेशानी बन जायेगी, अगर अधैर्य हुआ।

तो मन्त्र के साथ अत्यन्त धैर्य चाहिए, अन्यथा उस झझट मे मत पडना।
फल की बहुत जल्दी आकाक्षा मत करना।
वह जल्दी आयेगा भी नही, क्योकि वह परम फल है।
यह कोई मौसमी फूल नही है कि बोया और पन्द्रह दिन के भीतर आ गया!
जन्म-जन्म लग जाते है।
और एक कठिन बात जो समझ-लेने की है
वह यह है कि जितना धैर्य हो, उतना जल्दी फल आ जाएगा,
और जितना अधैर्य हो, उतनी ज्यादा देर लग जाएगी।
एक आदमी जा रहा था रास्ते से, उसका जूता काट रहा था।
जूता छोटा था, वह जूते को गालियाँ दे रहा था और परेशान था।

नसरुद्दीन ने उससे पूछा "मेरे भाई, इतना तंग जूता कहाँ से खरीदा ?"
वह आदमी वैसे ही जला-भुना था, वैसे ही क्रोध मे था, उसने कहा
"जूता कहाँ से खरीदा ? झाड़ से तोड़ा है !"
नसरुद्दीन ने कहा
"मेरे भाई, थोडी देर रुक जाते तो पैर के नाप का तो हो जाता !
कच्चा तोड लिया ?"

मन्त्र कभी कच्चा मत तोडना, नही तो बुरे फँस जाओगे।
जूते को तो कोई फेंक दे, मन्त्र को फेंकना बहुत मुश्किल है,
क्योंकि जूता तो बाहर है, मन्त्र भीतर होता है।
और अगर गलती मे मन्त्र मे फँस गये,
तो निकलना बहुत मुश्किल हो जाता है।
बहुत-से धार्मिक लोग पागल हो जाते हैं—
उसका कारण है कि मन्त्र मे फँस गये, कुछ जल्दी कर ली तोडने की,
फल पक नही पाया था, कच्चा तोड लिया।

पके, तो फल बहुत मीठा हो जाता है,
कच्चा बहुत तिक्त होगा, बहुत कडवा होगा, जहरीला होगा।
पहली पर्त है शरीर।
तो मन्त्र का पहला प्रयोग शरीर से शुरू करना जरूरी है,
क्योंकि वही तुम हो, वही से इलाज शुरू होगा।
अगर तुमने वह पर्त छोडकर मन का इलाज शुरू किया,
तो बीमारी तुम्हारी रह जायेगी—मिटेगी नही,
कल नही परसो, कच्चा फल हाथ आयेगा।

ध्यान रखना, यात्रा वही से शुरू की जा सकती है, जहाँ तुम खडे हो,
कही और से यात्रा की तो वह सपना है।
तुम अभी शरीर हो, तो अभी मन्त्र को शरीर से ही शुरू करना होगा।
उचित होगा कि प्रयोग खुले मे मत करना, बन्द मे करना।
छोटा कमरा हो, बन्द हो—और बिलकुल खाली हो,
वहाँ कोई भी चीज न हो।

इसलिए मन्दिर, मस्जिद या चर्च बहुत अच्छा है—
जहाँ कुछ भी नही है, कोई सामान नही।
या घर मे एक कोना साफ कर लेना, जहाँ कुछ भी नही है।
वहाँ देवी-देवताओ को भी मत रखना, वे भी उपद्रव है,
बिलकुल खाली कर देना।
बस, खालीपन ही एक परमात्मा है, बाकी सब चीजें मन का ही खेल हैं।

तो कमरे को बिलकुल खाली रखना है।
जितना शून्य हो, उतना अच्छा है, क्योंकि इसी शून्य की भीतर तलाश है।
यह कमरा तुम्हारे भीतर के शून्य का प्रतीक हो।
और छोटा हो, क्योंकि मन्त्र मे उसका उपयोग है।
और खाली हो, उसका भी उपयोग है।

पूर्व-तैयारी

विधि को समझ लो।
पहले दस मिनट शान्त बैठ जाना।
शान्त बैठने के पहले—क्योंकि शान्त बैठना आसान नही है—
पाँच मिनट नाचना, उछलना, कूदना।
और दिल खोलकर उछलना, कूदना, नाचना—
ताकि शरीर के भीतर, रग-रग, रेशे-रेशे मे जो रेस्टलेसनेस, जो बेचैनी है,
वह निकल जाए।
तभी तुम दस मिनट शान्ति से बैठ पाओगे।

शान्ति से बैठने के लिए यह जरूरी है रेचन।
दस-पाँच मिनट—जितना तुम्हे ठीक लगे, जितनी तुम्हारी बेचैन हो,
उस हिसाब से तुम नाचना, कूदना, डोलना।
शरीर को सब तरफ मे हिलाना,
ताकि फिर दस मिनट शरीर हिलने की आकाक्षा न करे।
उसकी हिलने की तृप्ति कर देना।
दस मिनट शरीर को हिलाना, डुलाना, नाचना, कूदना, दौडना—
फिर बैठ जाना।

और फिर बैठ जाना बिलकुल थिर, दस मिनट अब शरीर न हिले।

आँख आधी खुली रखना,
क्योंकि आँख जब पूरी खुली होती है,
तो तुम दरवाजे पर खड़े हो अपने मकान के।
पीठ मकान की तरफ, मुँह ससार की तरफ।
एकदम-से पीठ न मुड़ेगी, एकदम-से परिवर्तन आसान नही—
तुम सिर्फ आधी आँख खोलना,
आधी ससार की तरफ बन्द और आधी अपनी तरफ खुली।
आधी आँख खुली होने का यही अर्थ है कि आधा ससार देख रहे हैं,
आधा अपने को।
यही से शुरू करना, जल्दी की कोई आवश्यकता नही है।

आधी आँख जब खुली होती है, तो तुम एक तन्द्रा-जैसी स्थिति अनुभव करोगे।
तो अपनी नाक के शीर्ष-भाग को देखते रहना।
बस, उतनी ही आँख खोलनी है।
एकाग्रता नही करनी है।
शान्तभाव से नाक का अगला हिस्सा दिखाई पड रहा है—
नासाग्र दिखाई पड रहा है।

पहला चरण

अब "ओम्" का पाठ जोर से शुरू करना—शरीर से,
क्योकि शरीर मे तुम हो।
तो जोर से ओम् की ध्वनि करना
कि कमरे की दीवालो से टकराकर तुम पर गिरने लगे।
इसलिए खाली कमरा जरूरी है, खाली होगा तो प्रतिध्वनि होगी।
जितनी प्रतिध्वनि हो, उतनी लाभ की है।
अगर तुमने ईसाइयो के केथेडरल देखे हो तो वह मन्त्र के लिए बनाया गया था।
वहाँ कुछ भी बोलो तो ध्वनि हजारो-गुनी होकर तुम पर लौट आती है।
हिन्दुओ ने मन्दिर बनाया था अर्द्धवृत्त मे—

सिर्फ इसलिए कि उसके गुम्बज मे ध्वनि टकराकर वापस लौट आयेगी।
वृत्ताकार वस्तु मे कोई भी ध्वनि बाहर नही जा सकती है,
भीतर लौट आती है।

वे मन्त्र के लिए थे।

तो तुम बैठ जाना, जोर से ओंकार— ओम् ओम्
जितने जोर से कर सको—क्योकि शरीर का उपयोग करना है।
तुम्हारा पूरा शरीर निमज्जित हो जाए ओम् मे।
ऐसा लगने लगे कि तुमने अपनी पूरी जीवन-ऊर्जा ओम् मे लगा दी,
कुछ बचाया नही।
जैसे इसी पर जीवन-मरण टिका है।

इससे कम मे मन्त्र पूरा नही होता।
ऐसे धीरे-धीरे मुर्दे की तरह कहते रहो, आधे-आधे, उससे हल न होगा—
समग्रभाव से।
जैसे कि इसी पर निर्भर है कि अगर तुमने पूरी तरह ओम् कहा,
तो ही तुम बचोगे, अन्यथा मर जाओगे।
दाँव पर लगा देना—जैसे सिंहनाद होने लगे।
आधी आँख खुली, आधी बन्द, जोर से ओम् का पाठ—
और तुम इतने जल्दी-जल्दी ओम् कहना कि ओवरलैपिंग हो जाए,
एक मन्त्र-उच्चार के ऊपर दूसरा मन्त्र-उच्चार हो जाए—ओम् ओम्

दो ओम् के बीच जगह मत छोडना।
पसीना-पसीना हो जाना, सारी ताकत लगा देना।
थोडे ही दिनो मे तुम पाओगे कि पूरा कक्ष ओम् से भर गया।
तुम पाओगे कि पूरा कक्ष तुम्हे साथ दे रहा है, ध्वनि लौट रही है।
अगर तुम कोई गोल कक्ष खोज पाओ तो ज्यादा आसान होगा।
अगर गुम्बदवाला कक्ष खोज पाओ तो और भी आसान होगा।
भीतर बिल्कुल कुछ भी न हो, ताकि ध्वनि पूरी तरह तुम पर बरसने लगे।
तुम्हारा शरीर स्नान से गुजर जायेगा और तुम पाओगे
कि ऐसी शीतलता जल के स्नान से भी कभी नही मिलती।

जब चारो तरफ से ओंकार तुम पर बरसने लगेगा, लौटने लगेगा,
तुम्हारी ध्वनि वर्तुलाकार हो जायेगी।
तुम पाओगे कि शरीर का रोआँ-रोआँ प्रसन्न हो रहा है,
रोएँ-रोएँ से रोग झड रहा है—शान्ति, स्वास्थ्य प्रगाढ हो रहा है।
तुम हैरान होकर पाओगे
कि तुम्हारे शरीर की बहुत-सी तकलीफें अपने-आप खो गयी,
क्योकि यह बडा गहरा स्नान है
और बडी गहराई तक इसकी पकड और पहुँच है।
शरीर ध्वनि का ही जोड है, और ओंकार से अद्भुत कोई ध्वनि नहीं।

तो पहले दस मिनट ओंकार का उच्चार जोर से, शरीर के माध्यम से।

दूसरा चरण

अब आँखें बन्द कर लेना।
जीभ तालू से लग जाए।
इस तरह मुँह बन्द कर लेना कि कोई जगह न बचे,
क्योकि अब जीभ का उपयोग नही करना है।

दूसरा कदम है, दस मिनट तक अब ओम् का उच्चार करना भीतर, मन में।
अभी तक कक्ष था चारो तरफ, अब शरीर है चारो तरफ।
अभी तक मकान के भीतर थे तुम, अब शरीर है चारो तरफ।
अभी तक मकान के भीतर थे तुम, अब शरीर मकान है।
इस दस मिनट मे अब तुम अपने भीतर मन मे ही ओम् को गुँजाना—
ओठ का, जीभ का, कंठ का कोई उपयोग न करना—
सिर्फ मन मे ओम् ओम् .ओम्
लेकिन गति वही रखना, तीव्रता वही रखना।

जैसे तुमने कमरे को भर दिया था ओंकार से,
ऐसे ही अब शरीर को भीतर से भर देना ओंकार से...
कि शरीर के भीतर ही कम्पन होने लगे—
ओम्-ओम् दोहरने लगे पैर से लेकर सिर तक।

और इतनी तेजी से यह ओम् करना है जितनी तेजी से तुम कर सको।
और दो ओम् के बीच जरा भी जगह मत छोडना,
क्योंकि मन का एक नियम है कि वह एकसाथ दो विचार नही कर सकता।
एकसाथ दो विचार असम्भव हैं।
अगर तुमने इतने जोर से गुँजाया कि दो ओम् के बीच मे जरा-सी भी सन्धि न बची, तो कोई विचार न आ सकेगा,
अगर जरा-सी भी सन्धि बची तो विचार आ जाएगा, सन्धि-शून्य उच्चार।

और ध्यान रखना, शरीर का उपयोग नही करना है इसमे।
आँखे इसीलिए अब बन्द कर ली, शरीर थिर है, मन मे ही गूँज करनी है।
शरीर से ही टकराकर गूँज मन पर वापिस गिरेगी,
जैसे कमरे से टकराकर गिर रही थी।
उससे शरीर शुद्ध हुआ, इससे मन शुद्ध होगा।
और जैसे-जैसे गूँज गहन होने लगेगी, तुम पाओगे कि मन विसर्जित होने लगा।
एक गहन शान्ति——जैसी तुमने कभी नही जानी,
उसका स्वाद मिलना शुरू हो जाएगा।

तीसरा चरण

दस मिनट तक तुम भीतर गुँजार करना——
और दस मिनट के बाद गर्दन झुका लेना कि तुम्हारी दाढी
तुम्हारी छाती को छूने लगे।
दो-चार दिन तकलीफ भी मालूम होगी गर्दन मे,
उसकी फिक्र मत करना, वह चली जाएगी।

तीसरे चरण मे दाढी छाती को छूने लगे।
जैसे गर्दन कट गयी, उसमे कोई जान न रही।
और अब तुम मन मे भी ओम् का गुँजार मत करना,
अब तुम सुनने की कोशिश करना।
जैसे ओंकार हो ही रहा है और तुम सिर्फ सुननेवाले हो——करनेवाले नही।
क्योंकि मन के बाहर तभी जा सकोगे, जब कर्त्ता छूट जायगा।

अब तुम साक्षी हो जाना।
अब तुम गर्दन झुकाकर यह कोशिश करना कि भीतर ओंकार चल रहा है, मैं उसे सुनूँ।
गालिब का बहुत प्रसिद्ध वचन है
"दिल के आईने मे है तस्वीरे यार, जब जरा गर्दन झुकाई देख ली।"

वह गर्दन झुकाना जरूरी है।
जैसे ही गर्दन झुकती है, दिल का आईना सामने आ जाता है।
और उस परमप्रिय की तस्वीर वहाँ है, प्रतिबिम्ब वहाँ है,
लेकिन गर्दन झुकाना तुम्हे नही आता।
तुम तो गर्दन अकडाकर चलते हो।
जहाँ गर्दन झुकाने की बात आयी, वही तुम और तन जाते हो।
तुम अगर परमात्मा को खो रहे हो, तो सिर्फ एक अकड से
कि तुम गर्दन झुकाने को राजी नही—समर्पण की तुम्हारी तैयारी नही।
यह तो प्रतीक है।
गर्दन को लटका देना है, जैसे कट गयी, ताकि तुम झुक सको।
और जैसे ही गर्दन झुकती है, भीतर देखना आसान हो जाता है,
जैसे ही गर्दन झुकती है, विचार मुश्किल हो जाते है।

तो तुम झुककर सुनने की कोशिश करना।
अभी तक तुम मन्त्र का उच्चार कर रहे थे,
अब तुम मन्त्र के साक्षी बनने की कोशिश करना।
और तुम चकित होओगे कि भीतर सूक्ष्म उच्चार चल रहा है।
वह ओम्-जैसा है, वह ओम् नही है, क्योकि भाषा मे उसे लेना कठिन है :
ठीक ओम्-जैसा है।
तुम अगर शान्ति से सुनोगे तो अब वही सुनाई पडेगा।

शरीर से तुम हट गये,
पहले मन्त्र के प्रयोग ने तुम्हे शरीर से काट दिया,
दूसरे मन्त्र के प्रयोग ने तुम्हे मन से काट दिया,
अब तीसरा मन्त्र का प्रयोग साक्षी का है।

तो दो चरण तो तुम मन्त्र करोगे, तीसरे चरण मे तुम मन्त्र को सुनोगे—
श्रावक बनोगे, साक्षी बनोगे।
दो तक कर्त्ता रहोगे—क्योकि शरीर और मन कर्त्तृत्व का हिस्सा है,
और तीसरा चरण साक्षी-भाव का है।
शरीर कटा, मन कटा, तब तुम बच गये।
प्याज़ के छिलके अलग हुए, अब सिर्फ शुद्ध अस्तित्व बचा।
वही शिवत्व है।
और एक बार इसका स्वाद आ जाये, तो फिर तुम जल्दी-जल्दी जाने लगोगे।
फिर स्वाद ही खीचने लगेगा।
फिर स्वाद एक मैगनेट बन जाता है।

मन्त्र की यह प्रक्रिया—तीसरा चरण—जितनी देर तुम रह सको, सभालना।
तुम इस भाँति इस प्रयोग को करना।
और तीन महीने चिन्ता मत करना कि क्या परिणाम आ रहे हैं।
तुम परिणाम का विचार ही मत करना, तुम सिर्फ किये जाना।
तुम एक तारीख तय कर लेना कि तीन महीने के बाद
फलाँ तारीख को लौटकर सोचेंगे कि कुछ हुआ कि नही।
और तीन महीने अगर धैर्य से किया, तो बडे मीठे रस से भर जाओगे,
जिसको कबीर ने "गूँगे का गुड" कहा है।
और एक बार वह गुड का स्वाद आ जाये, फिर कोई कठिनाई नही है।
फिर ससार स्वप्नवत् हो जाता है।
जीवन एक अभिनय से ज्यादा नही रह जाता।
तुम साक्षी हो जाते हो।
तुम्हारा साक्षित्व ही शिवत्व है।

मन्त्र-साधना : सार-संक्षेप

सावधानी

यह प्रयोग खुले मे मत करना, बन्द मे करना।

छोटा कमरा हो, बन्द हो—और बिल्कुल खाली हो।

वहाँ कोई भी चीज न हो।

वहाँ देवी-देवताओ को भी मत रखना, बिल्कुल खाली कर देना।

पूर्व-तैयारी

पहले दस मिनट शरीर को हिलाना, डुलाना, नाचना, कूदना, उछलना—दिल खोलकर, ताकि शरीर के भीतर, रग-रग, रेशे-रेशे मे जो बेचैनी है, वह निकल जाए।

और फिर बैठ जाना थिर—दस मिनट, अब शरीर न हिले।

आधी आँख खुली रखना—

और अपनी नाक के शीर्ष-भाग को शान्त-भाव से देखते रहना।

एकाग्रता नही करनी है।

पहला चरण :

अब ओम् का पाठ जोर से शुरू करना।

..आधी आँख खुली, आधी बन्द और जोर से ओम् का पाठ।

और इतनी जल्दी-जल्दी ओम् कहना कि ओवरलैपिंग हो जाए,

एक मन्त्र-उच्चार के ऊपर दूसरा मन्त्र-उच्चार हो जाए—

ओम् ओम् ओम्

.. दो ओम् के बीच जगह मत छोडना।

...पसीना-पसीना हो जाना, सारी ताकत लगा देना।

संकेत . सभी चरण दस-दस मिनट करें।

दूसरा चरण ·

.. अब आँखें बन्द कर लेना।

.. जीभ तालु से लग जाए।

. और इस तरह मुँह बन्द कर लेना कि कोई जगह न बचे।

. अब ओम् का उच्चार करना भीतर—मन मे।

. अब तुम अपने भीतर मन मे ही गुँजाना— ओठ का, जीभ का, कठ का कोई उपयोग न करना, सिर्फ मन मे ओम् ओम् ओम् गुँजाना।

लेकिन गति वही रखना, तीव्रता वही रखना
कि शरीर के भीतर ही भीतर कम्पन होने लगे—ओम् ओम् ओम्।

तीसरा चरण

अब इस भाँति गर्दन झुका लेना कि तुम्हारी दाढी तुम्हारी छाती को छूने लगे। जैसे गर्दन कट गयी।

. और अब तुम मन मे भी गुँजार मत करना।

. अब तुम सुनने की कोशिश करना—जैसे ओंकार भीतर हो ही रहा है।

अब तुम साक्षी हो जाना।

तुम्हारा साक्षित्व ही शिवत्व है।

३

साधना सोपान

३. साधना सोपान

भगवान् श्री रजनीश द्वारा पुनरुद्घाटित ध्यान की २१ निष्क्रिय विधियाँ

साधना सोपान : प्रवेश के पूर्व

आगे के इन पृष्ठो मे ध्यान की निष्क्रिय विधियाँ सगृहीत की गयी है।
ये ध्यान-विधियाँ भगवान्श्री के विविध प्रवचन-सकलनो— यथा

१ मैं मृत्यु सिखाता हूँ, २ साधना पथ, ३ युक्रान्द—पाक्षिक पत्रिका
४ जिन-सूत्र भाग-तीसरा, ५ ध्यान एक वैज्ञानिक दृष्टि,
६ ताओ उपनिषद् भाग-दूसरा, ७ कहे कबीर दिवाना,
८ सूली ऊपर सेज पिया की, ९ गीता-दर्शन अध्याय–दसवाँ,
१० महावीर मेरी दृष्टि मे, ११ SANNYAS अंग्रेजी-द्विमासिक
१२ The Book of Secrets Vol I, १३ रजनीश दर्शन—द्विमासिक
१४ १५ मै मृत्यु सिखाता हूँ, १६ ताओ उपनिषद् भाग–पहला,
१७ The Ultimate Alchemy Vol I,
१८-१९-२० गीता दर्शन अध्याय–चौथा,
२१ गीता-दर्शन अध्याय–ग्यारहवाँ से क्रमश सगृहीत की गयी है।

इन विधियो को राजयोग की विधियाँ कहना असगत न होगा,
क्योंकि ये प्राय मन से प्रारम्भ होती है, मन का सहयोग इनमें अनिवार्य है।
हाँ, कुछ विधियाँ इनमे ऐसी भी है, जिनके लिए सिर्फ समझ पर्याप्त है।

इन विधियो मे सलग्न होने से पहले इनका ठीक-से अध्ययन कर लेना उचित होगा—पश्चात् आप अपनी समस्या, जरूरत व सुविधा के अनुकूल विधि चुनकर उसका अभ्यास कर सकेंगे।

इनमे कुछ विधियाँ तो ऐसी हैं,
जिनके लिए अलग से समय निकालने की आवश्यकता ही नही है,

अपने काम-काज मे लगे हुए आप इनका अभ्यास कर सकते है।

जैसे "मूलबध" है या "यौन-मुद्रा"—
इनके अभ्यास के लिए अलग से समय निकालने की आवश्यकता नही है।
जहाँ भी, जब भी मन को कामवासना पकडे,
तभी और वही इन विधियो का अभ्यास करना है।

या फिर "आत्मोपलब्धि की पाँच तान्त्रिक विधियाँ" की 'छठवी विधि' है।
काम-काज मे लगे हुए ही उसे साधना है, उसे निरन्तर करना है।

फिर है "सयम साधना" तथा "शान्ति सूत्र नियति की स्वीकृति"।
इनके लिए तो सिर्फ थोडी समझ, थोडी अवेयरनेस, थोडा होश ही काफी है।
शेष विधियो मे जो आपको रुचे, जो आपके मन को भाये,
उसका अभ्यास आप करे।

पर मेरी समझ से अगर इस प्रकार का क्रम आप रख पाये—
तो बडी तीव्रता से ध्यान मे गति हो सकती है।

सुबह, जगते ही, पाँच मिनट का प्रयोग "खिलखिला के हँसना"।
दिन मे ध्यान की कोई भी एक स्वतन्त्र तथा एक सहायक सक्रिय विधि तथा
एक निष्क्रिय विधि तथा "रात्रि ध्यान—ओऽऽऽ"।
इतना कर लेना बहुत काफी है।

लेकिन यह नियम नही है, सुझाव है।
आप चाहे तो एक सक्रिय विधि तथा एक निष्क्रिय विधि करे।
अथवा सक्रिय विधि के साथ—या निष्क्रिय विधि के साथ
"खिलखिला के हँसना" व "रात्रि ध्यान—ओऽऽऽ" जोड लें।

पर जैसा आपको ठीक लगे—आपकी जैसी सुविधा, जरूरत और रुचि हो।

साधको को इन विधियो के अभ्यास मे कठिनाई न हो,
इसलिए विधियो का सार "सार-सक्षेप" शीर्षक से— सूत्र-रूप मे
हर विधि के अन्त मे बडे अक्षरो मे रख दिया है।

१. निष्क्रिय ध्यान—१

आराम से किसी भी आसन मे, जैसा आपको सुविधापूर्ण लगे, बैठ जाएँ।
रीढ और गर्दन बिलकुल सीधी रखनी है।
शरीर के सारे हलन-चलन को छोड दें।
फिर आँखे बन्द कर ले।
आँखे बन्द करते समय यह ध्यान रहे कि आँखो पर कोई तनाव न पडे।
पलकों को बिलकुल ढीला छोड देना है।
ओठ बन्द हो और जीभ तालू से लगी हो।
श्वास शान्त, धीमी, पर गहरी लेनी है—
और ध्यान नाभि के पास रखना है।

नाभि-केन्द्र पर श्वास के कारण जो कम्पन मालूम होता है,
उसके प्रति कोई प्रतिक्रिया नही करें,
उस पर कोई विचार नही करें।
शब्द न हो और हम अकेले साक्षी हो।
जो भी हो रहा है, हम केवल उसे दूर खडे जान रहे हैं,
ऐसे भाव मे अपने को छोड देना है,
उसके प्रति जागरूक बने रहना है।
केवल देखते रहना है—विचार को, श्वास को, नाभि-स्पन्दन को—
और कोई प्रतिक्रिया नही करनी है।

ऐसे ही क्षण मे कुछ होता है, जो हमारे चित्त की सृष्टि नही है।
जो हमारी सृष्टि नही, वरन् जो हमारा होना है, हमारी सत्ता है—
वह उद्‌घाटित हो जाती है और हम आश्चर्यों-के-आश्चर्य
स्वय के समक्ष खडे हो जाते है।

२. निष्क्रिय ध्यान—२

ध्यान में, हमे उस जगह जाना है जहाँ मरने का कोई उपाय नही रह जाता—
भीतर, भीतर, और भीतर।
बाहर की वह सारी परिधि छोड देनी है, जो मृत्यु मे छूट जाती है।
मृत्यु मे शरीर छूट जाता है, भाव छूट जाते है, विचार छूट जाते हैं,
मित्रता छूट जाती है, शत्रुता छूट जाती है—
रह जाते है सिर्फ अकेले हम, सिर्फ चेतना रह जाती है।

तो ध्यान मे सब छोडकर मर जाना है।
सिर्फ इतना ही रह जाये कि "मै जानता हुआ, द्रष्टा-मात्र रह जाऊँ"।
इस ध्यान-विधि मे चार चरण हैं।

पहला चरण

प्रथम चरण है, शरीर की शिथिलता—रिलेग्जेशन।
शरीर को इतना शिथिल छोड देना है कि ऐसा लगने लगे
कि वह दूर ही पडा रह गया है, हमारा उससे कुछ लेना-देना नहीं है।
शरीर से सारी ताकत को भीतर खींच लेना है।
हमने शरीर मे ताकत डाली है।
जितनी ताकत हम शरीर मे डालते है, उतनी पडती है,
जितनी हम खीच लेते है, उतनी खिच जाती है।

आपने कभी ख्याल किया है किसी से झगडा हो जाये
तो आपके शरीर मे ज्यादा ताकत कहाँ से आ जाती है?
आप इतना बडा पत्थर उठाकर फेंक सकते है क्रोध की हालत मे,
जितना बडा पत्थर आप शान्ति की हालत मे हिला भी न सकते थे!
कभी आपने सोचा है कि शरीर आपका ही है,
लेकिन यह ताकत कहाँ से आ गयी?
यह ताकत आप डाल रहे है।
जरूरत पड गयी है, खतरा है, मुसीबत है, दुश्मन सामने खडा है,
पत्थर को उठाएँ नही तो जिन्दगी खतरे मे पड जायेगी।

और आप अपनी सारी ताकत शरीर मे डाल देते हैं।

शरीर मे हमारी शक्ति डाली हुई है,
लेकिन निकालने का हमे कोई पता नही कि हम वापिस कैसे निकालें।
रात मे हमे इसीलिए आराम मिल पाता है
कि अपने-आप शक्ति भीतर वापिस चली जाती है
और शरीर शिथिल होकर पड जाता है,
सुबह हम फिर ताजे हो जाते है।
लेकिन कुछ लोग रात को भी अपनी शक्ति बाहर नही निकाल पाते हैं,
शरीर मे शक्ति रह ही जाती है।
तब नीद मुश्किल हो जाती है।
इनसोमनिया या नीद का न आना सिर्फ एक ही बात का लक्षण है
कि शरीर मे डाली गयी ताकत पीछे लौटने का रास्ता नही जानती है।

इस ध्यान-प्रयोग के पहले चरण मे
शरीर मे सारी शक्ति को भीतर खीच लेना है।
और यह बडे मजे की बात है
कि सिर्फ भाव करने से शक्ति अन्दर वापिस लौट जाती है।
अगर थोडी देर तक कोई मन मे यह भाव करता रहे
कि मेरी शक्ति अन्दर वापिस लौट रही है
और शरीर शिथिल होता जा रहा है,
तो वह पायेगा कि शरीर शिथिल हो गया।
और शरीर उस जगह पहुँच जायेगा
कि खुद ही अपना हाथ उठाना चाहे तो नही उठा सकेगा।
इतना सब शिथिल हो जायेगा।

पहली बात है, शरीर से सारे प्राण का भीतर वापिस पहुँच जाना।
तो शरीर खोल की तरह बाहर पडा रह जायेगा—
और बराबर ऐसा दिखाई पड़ेगा कि हम अलग हो गये हैं
और शरीर की खोल बाहर पडी है—वस्त्रो की भाँति।

अत इम प्रथम चरण मे पहले बैठ जाएँ या लेट जाएँ—
जैसा आपको सुविधापूर्ण लगे।
लेट जाना सरल पडेगा।
फिर आँखे बन्द कर ले।
आँखें बन्द करने का अर्थ पलको पर तनाव डालना नही है—
बस, पलको को ढीला छोड दे और आँखो को स्वत बन्द हो जाने दे।
शरीर को भी ढीला छोड दें और दो-तीन मिनट तक
हृदयपूर्वक भीतर यह भाव करे कि 'शरीर शिथिल हो रहा है
शरीर शिथिल हो रहा है शरीर शिथिल हो रहा है'
यह भाव करते हुए शरीर को भी हर आर मे ढीला छोडते चले जाएँ।

दूसरा चरण

फिर दूसरी बात है श्वास को शिथिल छोडना।
श्वास और गहरे मे हमारे प्राणो को पकडे हुए है।
इसलिए श्वास के टूटते ही आदमी मर जाता है।
श्वास शरीर और आत्मा के बीच सेतु है, वही से हम बँधे हुए है।

बहुत प्रयोग इस सम्बन्ध मे होते है।
अगर कोई व्यक्ति अपनी श्वास को पूरा शिथिल छोड दे, शान्त छोड दे,
तो क्या होता है ?
धीरे-धीरे श्वास उस जगह आ जाती है
कि भीतर पता ही नही चलता है
कि श्वास चल रही है कि नही चल रही है।
कई बार शक हो जाता है कि कही मै मर तो नही गया!
श्वास इतनी शान्त हो जाती है कि पता ही नही चलता
कि चल रही है या नही चल रही है।

श्वास को ठहराना नही है।
जिसने ठहराया, उसकी श्वास कभी नही ठहरेगी।
यदि ठहराया तो श्वास बाहर निकलने की कोशिश करेगी।

अगर बाहर रोका तो भीतर जाने की कोशिश करेगी।
इसलिए अपनी तरफ से कुछ नही करना है,
सिर्फ शिथिल छोडते जाना है— शान्त शान्त और शान्त।
धीरे-धीरे श्वास एक बिन्दु पर जाकर ठहर जाती है।
श्वास एक क्षण को भी ठहर जाये, तो उसी क्षण
आत्मा और शरीर के बीच अनन्त फासला दिखाई पड जाता है।
जैसे बिजली चमक जाये अभी—
और मुझे आप सबके चेहरे दिखाई पड जाएँएक क्षण मे।
फिर बिजली खो जाये।
लेकिन मैने आपके चेहरे देख लिये।
ठीक एक क्षण को जब श्वास बिलकुल मध्य मे ठहर जाती है,
तो उस क्षण मे बिजली पूरे व्यक्तित्व मे कौध जाती है—
और दिखाई पड जाता है कि शरीर अलग, मै अलग।
मृत्यु घटित हो गयी।

तीसरा चरण

तीसरे तल पर मन को शिथिल छोडना है।
क्योकि अगर श्वास भी शिथिल हो जाये और मन शिथिल न हो पाये,
तो बिजली कौध जायगी, लेकिन आपको दिखाई नही पडेगा कि क्या हुआ।
क्योकि मन तो अपने विचारो मे उलझा रहेगा।
अगर यहाँ बिजली चमक जाये और मै अपने ख्यालो मे खोया रहूँ,
तो बिजली चमक जायेगी तब मुझे पता चलेगा कि कुछ हो गया।
लेकिन तब तक बिजली चमक चुकी है
और मै अपने विचारो मे खोया रह गया हूँ।
बिजली तो चमक जायेगी श्वास के ठहर जाते ही,
लेकिन उस पर ध्यान तभी जायेगा जब विचार भी बन्द हो गये।
नही तो ध्यान नही जायेगा और मौका चूक जायेगा।
इसलिए तीसरी चीज है विचार को शिथिल छोड देना।
तो तीसरे चरण मे मन को भी शिथिल छोड दे,

और भाव करे कि 'विचार शान्त होते जा रहे हैं
विचार शान्त होतेजा रहे है   विचार शान्त होते जा रहे हैं।'

चौथा चरण

ये तीन चरण हम प्रयोग करेंगे और चौथे चरण मे हम दस मिनट—
या उससे अधिक, जितनी देर तक आप इस अवस्था मे रह सकते हो—
के लिए चुपचाप बैठे रहेंगे।
इस अन्तिम चरण मे जो भी भीतर होता हो,
उसे साक्षी-भाव से देखते हुए मौन मे ठहर जाना है।
इसी मौन के किसी क्षण मे मृत्यु घटित हो जाती है।
और आप होशपूर्वक देखते रह जाते हैं
कि आप मृत्यु के भी द्रष्टा हैं, मृत्यु भी पार हैं।
यही अमृत की उपलब्धि है।

निष्क्रिय ध्यान—२   सार-संक्षेप

पहले चरण मे लेट जाएँ या बैठ जाएँ और आँखे बन्द कर ले।
शरीर को भी ढीला छोड दे और दो तीन मिनट तक
हृदयपूर्वक भीतर यह भाव करे   शरीर शिथिल हो रहा है
शरीर शिथिल हो रहा है   शरीर शिथिल हो रहा है
दूसरे चरण मे श्वास को शिथिल छोड दे
और दो तीन मिनट तक भाव करे कि 'श्वास शिथिल हो रही है .
श्वास शिथिल हो रही है   श्वास शिथिल हो रही है
तीसरे चरण मे मन को भी शिथिल छोड दे
और भाव करे कि   विचार शान्त होते जा रहे है
विचार शान्त होते जा रहे है   विचार शान्त होते जा रहे हैं .
चौथे चरण मे दस मिनट या अधिक चुपचाप पडे रहे—
जो भी भीतर हो उसे साक्षी-भाव से देखते हुए मौन मे डूब जाएँ।

३. बहना, मिटना, तथाता

पहला प्रयोग · पाँच मिनट

आँखें आहिस्ता से बन्द कर ले और शरीर को ढीला छोड दें।
किसी तरह का शरीर पर कोई तनाव, स्ट्रेन न रह जाये।
कल्पना करें पहाडो के बीच मे एक बडी नदी बही जा रही है।
जोर की लहरे हैं, जोर का बहाव है, पहाडी नदी है।
भीतर देखे कि दो पहाडो के बीच मे एक बडी नदी तेजी से बही जाती है।
जोर का बहाव है, जोर की आवाज है, लहरें है, तेज गति है—
और नदी बही जा रही है।

देखे, उसे स्पष्ट देखे।
नदी तेजी से बही जा रही है, वह साफ दिखाई पडने लगी है।
इस नदी मे आपको उतर जाना है, लेकिन तैरना नही है,
जस्ट फ्लोटिंग।
इस नदी मे आप उतर जाएँ और बहना शुरू कर दें।
हाथ-पैर न चलाएँ, सिर्फ बहे जाएँ, बहे जाएँ, बहे जाएँ।
हाथ-पैर चलाएँ ही मत, तैरना नही है, सिर्फ बह जाना है।
नदी मे हमने अपने को छोड दिया है— और नदी भागी चली जा रही है—
और हम उसमे बहे चले जाते हैं।

बहे जा रहे हैं, बहे जा रहे है, बहे जा रहे हैं।
कही पहुँचना नही है, किसी किनारे पर नही जाना है, कोई मंजिल नही है।
इसलिए तैरने का कोई सवाल नही है— बस, सिर्फ बहना है।
छोड दे और बहे।
नदी मे बहने की जो अनुभूति होगी,
वह फिर ध्यान को समझने मे सहयोगी होगी।

एक पाँच मिनट के लिए अपने को उस नदी मे छोड दे और बहते जाएँ।
नदी का कोई अन्त ही नही है, वह बही ही चली जा रही है।
आप भी उसमे बहते रहे।
कुछ करना नही हे।
हाथ-पैर भी नही चलाना ह, सिर्फ बहते जाना हे, बहते जाना है।

देखे, नदी बह रही है, आप भी उसके साथ बहने लगे हैं।
जरा भी तैरना नही है।
पाँच मिनट के लिए मै चुप हो जाता हूँ—
आप बहने का, फ्लोटिग का अनुभव करे।

बहे जा रहे हैं, बहे जा रहे हैं, नदी मे छोड दिया है।
ज़रा भी तैरना नही है, हाथ-पैर भी नही हिलाना ह, बहे जा रहे हैं।
जैसे एक सूखा पत्ता नदी मे बहता चला जाता हो, एसे ही छोड दे।

देखे, बहते चले जाएँ
और बहने के साथ ही एक अनुभव होना शुरु हो जायेगा—
समर्पण का, सरेण्डर का।
नदी के साथ छोड दे अपने को—
'लेट गो' का एक अनुभव होना शुरू हो जायेगा।

बहे, बहते चले जाएँ।
नदी तेजी मे बहती जा रही हे,
लहरे तेजी से भागी जा रही है,
आप भी नदी मे छूट गये है और बहे जा रहे है।
कुछ करना नही हे, बहते चले जाना है।

बिलकुल छोड दें और बह जाएँ।
नदी और तेजी से बही जा रही है, बही जा रही हे,
इसको ठीक-से अनुभव कर लें।
बहने की इस प्रतीति को,
बहने के इस अनुभव को ठीक-मे समझ लें 'क्या है',

फिर ध्यान मे वह सहयोगी होगा।
ठीक-से समझ लें कि यह बह जाने का अनुभव क्या है—
जब हाथ-पैर भी नही चल रहे है
और नदी हमे लिये जा रही है, लिये जा रही है।
सब-कुछ नदी कर रही है, हम कुछ भी नही कर रहे है—
इसे ठीक-से देख लें ताकि यह ख्याल मे रह जाये
सब-कुछ नदी कर रही है, हम कुछ भी नही कर रहे है,
हम सिर्फ बह रहे है एक सूखे पत्ते की तरह।

अब धीरे-धीरे आँख खोल लें और दूसरा प्रयोग, पाँच मिनट के लिए,
मैं कहता हूँ, वह समझ ले और दूसरा प्रयोग करे।
धीरे-धीरे आँख खोल ले।

दूसरा प्रयोग : पाँच मिनट

ध्यान है, समर्पण।
ध्यान है, अपने को खो देना।
ध्यान है, मिट जाना।
ध्यान है, सब भाँति विसर्जित हो जाना।
हमारा गिरना जरूरी है, हमारा मिटना जरूरी है, हमारा होना बाधा है।
जैसे एक वृक्ष को कोई काट दे और वृक्ष गिर जाये,
जैसे एक बीज जमीन पर पडा हो और टूटे और मिट जाये,
ठीक ऐसे ही, हमे भी भीतर से बिखर जाना और मिट जाना है।

दूसरा प्रयोग इस मिटने की दिशा मे समझे।
आँख बन्द कर लें और अपने को ढीला छोड दें।
पहली बात हमने समझी बहने की, दूसरी बात समझें मिटने की—
बिलकुल मिट जाने की।
आँख बन्द करें।
बहुत आहिस्ता से आँख बन्द कर लें और शरीर ढीला छोड दें।
आँख बन्द कर ली है, शरीर ढीला छोड दिया है।

देखें, सामने एक चिता जल रही है।
लकडियाँ है, जोर से आग की लपटें पकड गयी है, चिता जोर से जल रही है।
चिता को जलता हुआ देखें।
लकडियो मे आग पकड गयी हे, चिता का जलना शुरू हो गया है।
ठीक-से देखे, चिता को आग पकड गयी है।
लपटें जोर से ऊपर भाग रही हैं आकाश की तरफ, चिता जल रही है।

दूसरी बात ख्याल से देखें कि इस चिता को आप देख ही नही रहे हैं,
इस चिता पर आप चढे हुए हैं।
आप ही इस चिता पर चढा दिये गये है,
सब मित्र, प्रियजन चारो ओर खडे हुए है,
आग लगा दी गयी है,
आप चिता पर चढा दिये गये है।
लकडी ही नही, आप भी जल रहे है।
लकडियो मे लपटें लगी है और आप भी जले जा रहे हैं।
थोडी देर मे सब राख हो जायेगा—लकडी भी और आप भी।
अपने को ही चिता पर चढा हुआ अनुभव करें।

देखें, सामने अपना ही शरीर उस चिता पर चढा है
और आग मे जला जा रहा हे।
एक पाँच मिनट इस अनुभव को करें,
ताकि मिटने का बोध ख्याल मे आ सके।
एक दिन चिता जलेगी ही।
एक दिन आप उस पर चढेंगे ही।
सभी को उस पर चढ जाना है।
तो आज अपने मन के सामने ठीक-से देख लें—
चिता की जलती हुई लपटे,
आकाश की तरफ भागती हुई अग्नि-शिखाएँ,
और आप चढे है।
लकडियाँ ही नही जल रही है, आप भी जले जा रहे है।

देखें, जोर से लपटें बढती चली जाती हैं, आपका शरीर भी जला जा रहा है।
थोडी देर मे आग भी बुझ जायेगी, राख रह जायेगी,
लोग विदा हो जायेंगे, मरघट खाली, सुनसान हो जायेगा।
अब देखें, चिता पर चढे हुए हैं आप।
मैं चुप हो जाता हूँ, लपटें जलती रहेगी।
आपको कुछ करना नही है, लपटें जलेंगी, जला देंगी—
सब राख हो जायेगा।
थोडी देर भीड खडी रहेगी मित्रो की, प्रियजनो की—आसपास—
फिर वे भी विदा हो जायेंगे,
फिर राख ही पडी रह जायेगी।
मरघट सुनसान रह जायेगा।

देखें, शुरू करें, लपटे साफ देखे।
ऊपर आप ही चढे हुए है और जल रहे है।
कुछ करना नही है।
जलने मे क्या करना हे?
जल जाना है।
आग काम कर देगी।
लपटे काम कर देंगी।
आपको तो कुछ नही करना है, जल जाना है, मिट जाना है।
पाँच मिनट के लिए आग पर, चिता पर अपने को चढा हुआ देखते रहे।
फिर धीरे-धीरे लपटे बुझ जाएँगी, सब शान्त हो जायेगा।

इस मिट जाने के अनुभव को ठीक-से स्मरण रख लेना,
वे ध्यान मे काम पड सकेंगे।
लपटें बढती जा रही हैं, शरीर जलता जा रहा है,
आप भी मिटते चले जा रहे हैं।
सब धुआँ हो जायेगा, सब राख हो जायेगी, मरघट शान्त हो जायेगा।
जरा भी अपने को बचाने की कोशिश मत करना, छोड देना लपटों मे—
ताकि सब जल जाये, सब मिट जाये, सब राख हो जाये।

देखें, लपटे बढती चली जाती है, धुआँ बढता चला जाता है,
सब जला जा रहा है।
आप भी जले जा रहे हैं, मिटे जा रहे हैं—
इसे बहुत साफ देख लें ताकि यह ध्यान मे सहयोगी हो जाये।
क्योंकि ध्यान भी एक तरह की मृत्यु ही है।

देखे, साफ देखें
सब जल रहा है, सब मिट रहा है, सब समाप्त हो रहा है।
और आपको कुछ भी नही करना है।
बस मिट रहा है, सब समाप्त हो रहा है।
और आपको कुछ भी नही करना है, बस जल जाना है, मिट जाना है।
आग सब काम कर रही है, जलाए दे रही है।
लपटें भागी चली जा रही है, सब मिटता चला जा रहा है।
नदी मे तो तैर भी सकते थे, यहाँ तो तैर भी नही सकते है।
यहाँ तो तैरने का कोई उपाय ही नही है।
सब मिटा जा रहा है।
लपटे सब समाप्त किये दे रही हैं।

देखें, धुआँ रह जायेगा, राख रह जायेगी, मरघट सुनसान हो जायेगा,
लोग विदा हो जाएँगे।
हवाएँ चल रही है, लपटें और जोर से बढी जा रही हैं।
हवाएँ लपटो को बढाये दे रही है—
सब जला जा रहा है सब जला जा रहा है।
थोडी देर मे सब राख हो जायेगा।
हवाओ मे लपटे और जोर पकड रही है।

देखें, सब जल गया है, लपटें बुझती जा रही है, राख पडी रह गयी है,
लोग विदा होने लगे है, मरघट पर सन्नाटा छा गया है।
हवाएँ फिर भी चलती रहेगी, राख उडती रहेगी, मरघट पर कोई न होगा।
लोग विदा होने लगे, सब सन्नाटा हो गया, आप मिट गये हैं,
राख ही पडी रह गयी है।

इसे ठीक-से देख लें।
यह ध्यान मे देखना अत्यन्त जरूरी है।
ठीक-से देख लें, सब पड़ा हुआ रह गया है।
राख ही पडी रह गयी है।
बुझे हुए अंगार रह गये है।
लोग जा चुके है और मरघट पर कोई नही है।
आग भी बुझ गयी है और आप भी मिट गये हैं।

अब धीरे-धीरे आँख खोल ले और तीसरे प्रयोग को समझें और उसे करें।
धीरे-धीरे आँख खोल ले और बैठ जाएँ।

पहली बात हे यह समझ लेना कि बहने का अर्थ क्या है,
दूसरी बात है यह समझ लेना कि मिटने का क्या अर्थ है,
और अब तीसरी बात समझनी है,
तीसरी बात का नाम है, "तथाता"—"सचनेस"।

यह तीसरी बात उन दोनो मे ज्यादा आगे ले जानेवाली है।
यह तीसरा बिन्दु है, तथाता।
तो पाँच मिनट चीजें ऐसी है, हमें कुछ करना नही है।
करने का कोई उपाय भी नही है।
हम नही थे, तब भी चीजे ऐसी थी।
समुद्र तब भी इसी तरह शोर करता रहा,
कौवे बोलते रहे, पक्षी चिल्लाते रहे, रास्ता चलता रहा।
हम नही होगे, तब भी चीजे ऐसी ही होगी।

तो जब हम है, तब भी चीजे ऐसी रहे तो अडचन क्या है, कठिनाई क्या है?
हमारे 'होने-न-होने' का इस सारे से क्या सम्बन्ध?

आँख बन्द करे आहिस्ता से।
आँख ढीली छोड दे, शरीर को आराम मे छोड दे।
शरीर को ढीला, रिलेक्स छोड दे।
आँख बन्द कर लें, शरीर ढीला छोड दें और अब तीसरे प्रयोग मे उतरें।

तीसरा प्रयोग . पाँच मिनट

तथाता, चीजे ऐसी है।
हमे कुछ करना नही है चीजें ऐसी है ही, जगत् ऐसा है ही।
फिर कौन-सी तकलीफ है चीजें ऐसी है ?
बच्चा, बच्चा है, बूढा, बूढा है, स्वस्थ, स्वस्थ है, बीमार, बीमार है,
पक्षी आवाज कर रहे हैं, घास हरी है, आकाश नीला है,
कही धूप पड रही है, कही छाया है— ऐसा है।

अब ख्याल करें, चीजें ऐसी है।
हमारा कोई विरोध नही है, इन चीजो के बीच मे हम भी हैं।

एक पाँच मिनट ऐसा ख्याल करे
कोई विरोध नही है, कोई विरोध नही है, कोई विरोध नही है—
जो है, जैसा है, हम उससे राजी है।
न हम कुछ बदलना चाहते है, न कुछ हम मिटाना चाहते हैं,
न कुछ हम बनाना चाहते—जैसा है, वैसा है, हम उससे राजी है।

एक पाच मिनट के लिए इस राजी होने की स्थिति मे अपने को छोड दें।
देखे, यह कौवे की आवाज और तरह की सुनाई पडेगी।
जब हम राजी हो जायेंगे तो यह कौवे की आवाज और तरह की सुनाई पडेगी।
कोई विरोध नही है तो हमारे और इसके बीच की दीवार टूट जायेगी।

सुनें— सडक की आवाज और तरह की सुनाई पडेगी।
अगर हमारा कोई विरोध नही है
तो सडक की आवाज और तरह की सुनाई पडेगी।
समुद्र का शोर अब दुश्मन की तरह नही मालूम पडता,
एक डिस्टर्बेन्स नही मालूम पडता।

सुनें, हमारा कोई विरोध नही है जो है, जैसा है—है।
पाँच मिनट के लिए जो है, उससे राजी होकर डूब जायें।
देखे, अब धूप वैसी मालूम नही पडती, जो है, है।

कुछ भी वैसा मालूम नही पडता।
हम शत्रु की तरह नही हैं, एक मित्र की तरह हैं जो है, उससे राजी है।

इस तीसरे सूत्र को भी ठीक-से ध्यान मे रख लेना
तथाता, सचनेस, चीजे ऐसी हैं।
इसे ठीक-से समझ लेना कि चीजे ऐसी हैं
कोई विरोध नही, कोई शत्रुता नही।
कुछ अन्यथा हो, इसकी आकाँक्षा नही, चीजें ऐसी है।
धूप गरम हे, छाया सर्द है, समुद्र अपने काम मे लगा है,
रास्ते पर चलनेवाले लोग अपने काम मे लगे है, जरा भी विरोध न रखें—
बस, ऐसा हो रहा है, हो रहा है, हो रहा है और हम जान रहे है।
कुछ बदलना नही ह, कुछ मिटाना नही है, कुछ परिवर्तन नही करना है।

इस तीसरे सूत्र को ठीक-से समझ लेना,
क्योकि ध्यान की गहराई मे जाने के लिए यह अत्यन्त ज़रूरी है।
चीजे ऐसी हैं।

अब धीरे-धीरे आँख खोल ले।

४. कल्पना-भोग

किसी सुन्दर युवती को देखकर
जाने क्यों मन उसकी ओर आकर्षित हो जाता है ।
मेरी उम्र पचास की हो गयी है, फिर भी ऐसा क्यों होता है ?
मुझे क्या करना चाहिए, कृपया मार्ग-निर्देश करें ।

जाग के अपने मन मे दबी हुई वासनाओ का अन्तर्दर्शन करना होगा ।
अब मत दबाओ, कम-से-कम अब मत दबाओ ।
अब तक दबाया, उसका यह दुष्फल है, अब इस पर ध्यान करो ।
क्योकि अब उम्र भी नही है कि तुम स्त्रियो के पीछे दौडो ।
वह बात जँचेगी नही ।

अब, जो जीवन मे नही हो सका है उसे ध्यान मे घटाओ ।
अब एक घन्टा रोज़ आँख बन्द कर के कल्पना को खुली छूट दो,
वो किन्ही पापो मे ले जाय— जाने दो,
तुम रोको मत,
तुम साक्षी-भाव से उसे देखो कि यह मन जो-जो कर रहा है— मैं देखूँ ।

जो शरीर के द्वारा पूरा नही कर पाये, वह मन के द्वारा पूरा हो जाने दो ।
तुम नियम से कामवासना के लिए एक घन्टा ध्यान मे लगा दो ।
आँख बन्द कर लो और जो-जो तुम्हारे मन मे कल्पनाएँ उठती है,
स्वप्न उठते है—जिनको तुम दबाते होओगे निश्चित ही—
उनको प्रकट होने दो ।

घबडाओ मत, क्योकि तुम अकेले हो ।
किसी के साथ कोई पाप कर भी नही रहे हो ।
किसी को कोई चोट पहुँचा भी नही रहे हो ।

किसी के साथ तुम कोई अभद्र व्यवहार भी नही कर रहे हो...
कि किसी स्त्री को घूर के देख रहे हो।
तुम अपनी कल्पना को ही घूर रहे हो।

लेकिन पूरी तरह घूरना और उसमे कजूसी मत करना।
मन बहुत कहेगा कि "अरे ! इस उम्र मे यह क्या कर रहे हो ?"
मन बहुत बार कहेगा कि यह तो पाप है।
मन बहुत बार कहेगा कि शान्त हो जाओ, कहाँ के विचारो मे पडे हो।
मगर उस मन की मत सुनना— कहना,
कि एक घन्टा तो दिया है इसी ध्यान के लिए, इस पर ही ध्यान करेंगे।
और एक घन्टा जितनी स्त्रियो को जितना सुन्दर बना सको, बना लेना।
इस एक घन्टे मे जितने "कल्पना-भोग" मे डूब सको, डूब जाना।
और साथ-साथ पीछे खडे देखते रहना कि मन क्या-क्या कर रहा है—
बिना रोके, बिना निर्णय किये कि पाप है, कि अपराध है।
कुछ फिकर मत करना।

तो जल्दी ही,
तीन-चार महीने के निरन्तर प्रयोग के बाद हल्के हो जाओगे,
मन से धुआँ निकल जायेगा।
तब तुम अचानक पाओगे बाहर स्त्रियाँ है,
लेकिन तुम्हारे मन मे देखने की कोई आकांक्षा नही रह गयी।
और जब तुम्हारे मन मे किसी को देखने की आकांक्षा नही रह जाती,
तब लोगो का सौन्दर्य प्रकट होता है।
वासना तो अन्धा कर देती है, सौन्दर्य को देखने कहाँ देती है !
वासना ने कभी सौन्दर्य जाना ?
वासना ने तो अपने ही सपने फैलाये !
वासना दुष्पूर है, उसका कोई अन्त नही है।

तुम चकित होओगे,
अगर तुमने एक-दो महीने भी इस प्रक्रिया को
बिना किसी विरोध को भीतर उठाये,

बिना अपराध-भाव के निश्चित मन से किया,
तो तुम अचानक पाओगे धुएँ की तरह कुछ बाते खो गयी।
महीने-दो-महीने के बाद तुम पाओगे
तुम बैठे रहते हो, घडी बीत जाती है, कोई कल्पना नही आती।
कोई वासना नही उठती।

कल्पना-भोग . सार-संक्षेप

" एक घन्टा रोज आँख बन्द कर के कल्पना को खुली छूट दो।
वो किन्ही पापो मे ले जाये— जाने दो, तुम रोको मत।
तुम साक्षी भाव से उसे देखो कि यह मन जो-जो कर रहा है, मै देखूं।

५. सन्तुलन ध्यान—१

लाओत्से के साधना-सूत्रो मे से एक गुप्त सूत्र आपको कहता हूँ,
जो उसकी किताबो मे उल्लिखित नही है।
पर वह कानो-कान लाओत्से की परम्परा मे चलता रहा है।

वह साधना है
पालथी मारकर बैठ जाएँ और भीतर अनुभव करें
कि एक तराजू, बैलेन्स है—
जिसके दोनो पलडे
आपकी दोनो छातियो के पास लटके हुए हैं।
और उसका काँटा ठीक आपकी दोनो आँखो के बीच—
तीसरी-आँख जहाँ समझी जाती है— मे स्थित है।

तराजू की डडियाँ आपके मस्तिष्क मे हैं,
उसके दोनो पलडे आपकी दोनो छातियो के पास लटके हुए है।

चौबीस घन्टे ध्यान रखें कि वे दोनो पलडे बराबर रहे और काँटा सीधा रहे।

लाओत्से कहता है कि अगर भीतर उस तराजू को साध लिया,
तो सब सध जायेगा।

लेकिन आप बडी मुश्किल मे पडेगे।
जब आप इसका प्रयोग करेंगे, तब आपको पता चलेगा
कि जरा-सी साँस भी ली नही
कि एक पलडा नीचे हो जायेगा, दूसरा पलडा ऊपर हो जायेगा।

अकेले बैठे हैं और एक आदमी बाहर निकल गया दरवाजे से—
उसको देखकर—
उसने कुछ किया भी नही है—
लेकिन इतने मे ही एक पलडा ऊपर और एक नीचे हो जायेगा।

लाओत्से ने कहा है कि भीतर चेतना को एक सन्तुलन दें।
जीवन मे सुख हो या दुख,
सम्मान हो या अपमान,
अन्धेरा हो या उजाला—
भीतर के तराजू को साधते चले जाएँ।
तो चेतना एक दिन उस परम सन्तुलन पर आ जाती है,
जहाँ जीवन तो नही होता, अस्तित्व होता है,
जहाँ लहरे नही होती, सागर होता है,
जहाँ मैं नही होता, सब होता है।

सन्तुलन ध्यान–१ सार-संक्षेप

पालथी मारकर बैठ जाएँ
और भीतर अनुभव करे कि एक तराजू है
जिसके दोनो पलडे आपकी दोनो छातियो के पास लटके हुए हैं
और उसका काँटा ठीक आपकी दोनो आखो के बीच मे स्थित है।
चौबीस घन्टे ध्यान रखे कि दोनो पलडे बराबर रहे
और काँटा सीधा रहे।
अगर भीतर इस तराजू को साध लिया
तो बाहर सब सध जायेगा।

५. सन्तुलन ध्यान–२

तिब्बत की एक छोटी-सी विधि है 'वैलेन्सिग'—
'सन्तुलन' उस विधि का नाम है।

कभी घर मे खडे हो जाएँ सुबह स्नान करके,
दोनो पैर फैला ले और ख्याल करें .
आपके दाये पैर पर ज्यादा जोर पड रहा है
कि बाये पैर पर ज्यादा जोर पड रहा है ?
अगर बायें पर पड रहा है
तो फिर आहिस्ते से जोर को दाये पैर पर ले जाएँ।
दो क्षण दाये पैर पर जोर रखे, फिर बाये पर ले जाएँ।

एक पन्द्रह दिन, सिर्फ शरीर का भार, बाये पर है कि दाये पर—
इसको बदलते रहे।
और यह तिब्बती प्रयोग कहता है कि फिर इस बात का प्रयोग करे
कि दोनो पर भार न रह जाये।

एक तीन सप्ताह का प्रयोग और जब आप बिलकुल बीच मे होगे—
भार न बायें पर होगा, न दायें पर होगा—
जब आप बिलकुल बीच मे होगे—
तब आप ध्यान मे प्रवेश कर जायेंगे।
ठीक उसी क्षण मे आप ध्यान मे चले जाएँगे।

ऊपर से देखने पर लगेगा, इतनी-सी आसान बात !
करेंगे तो आसान भी मालूम पडेगी और कठिन भी।
बहुत सरल मालूम पडती है, दो पंक्तियो मे कही जा सकती है,

लेकिन लाखो लोग इस छोटे-से प्रयोग के द्वारा
परम आनन्द को उपलब्ध हुए है।
जैसे ही आप बैलेन्म्ड होने है—
न बायें पर रह जाते, न दायें पर रह जाते—
दोनो के बीच मे रह जाने है,
वैसे ही आप पाते हैं कि वह बैलेन्सिग, सन्तुलन—
आपकी कॉन्शसनेस का, आपकी चेतना का भी हो गया,
चेतना भी बैलेन्स्ड हो गयी, चेतना भी सन्तुलित हो गयी।

और तब तत्काल तीर को तरह भीतर गति हो जाती है।

६ सन्तुलन ध्यान–२ सार-सक्षेप

सुबह स्नान करके खडे हो जाएँ,
दोनो पैर फैला ले और ख्याल करें
"आपके दाये पेर पर ज्यादा जोर पड रहा है कि बाये पर?"

अगर बाये पर पड रहा है
तो आहिस्ते से जोर को दाये पर ले जाएँ—
दाये पर पड रहा है तो बाये पर ले जाएँ।
इसका प्रयोग करे कि दोनो पर भार न रह जाये।

जब आप बिलकुल बीच मे होंगे—
भार न बाये पर होगा, न दाये पर होगा—
तब आप ध्यान मे प्रवेश कर जाएंगे।

७. मूलबंध : ब्रह्मचर्य-उपलब्धि की सरलतम विधि

जीवन ऊर्जा है—शक्ति है।
लेकिन साधारणत तुम्हारी जीवन-ऊर्जा नीचे की ओर प्रवाहित हो रही है।
इसलिए तुम्हारी जीवन-ऊर्जा अन्तत कामवासना बन जाती है।
कामवासना तुम्हारा निम्नतम चक्र है।
तुम्हारी ऊर्जा नीचे गिर रही है।
और सारी ऊर्जा धीरे-धीरे काम-केन्द्र पर इकट्ठी हो जाती है।
इसलिए तुम्हारी सारी शक्ति कामवासना बन जाती है।

वह जो मूलाधार चक्र है—जहाँ से ऊर्जा काम-ऊर्जा बनती है,
उसे बाँध लेना है, उसे सिकोड़ लेना है।
इसलिए योग ने—पतंजलि ने—हठयोग ने—
बहुत-सी प्रक्रियाएँ खोजी है 'मूल' को बाँधने की।
मूल अगर बँध जाए, तो ऊर्जा अपने-आप ऊपर उठने लगती है,
क्योकि नीचे का द्वार बन्द हो जाता है, अवरुद्ध हो जाता है।

एक छोटा-सा प्रयोग, जब भी तुम्हारे मन मे काम-वासना उठे तो करो।
तो धीरे-धीरे तुम्हे राह साफ हो जायेगी।
जब भी तुम्हे लगे कि कामवासना मन को पकड रही है, तब डरो मत,
शान्त होकर बैठ जाओ और जोर से श्वास को बाहर फेंको—उच्छ्वास।
भीतर मत लो श्वास को—
क्योकि जैसे ही तुम भीतर गहरी श्वास लेते हो,
श्वास काम-ऊर्जा को नीचे की तरफ धकाती है।

तो जब तुम्हे कामवासना पकडे, तब एग्ज्हेल करो, बाहर फेंको श्वास को।
नाभि को भीतर खीचो, पेट को अन्दर लो और श्वास को बाहर फेको।
. जितनी फेक सको।
धीरे-धीरे अभ्यास होने पर
तुम सम्पूर्ण रूप से श्वास को बाहर फेकने मे सफल हो जाओगे।

जब सारी श्वास बाहर फिक जाती है,
तो तुम्हारा पेट और नाभि वैक्यूम हो जाता है, शून्य हो जाता है।
और जहाँ कही शून्य हो जाता है,
वही आस-पास की ऊर्जा शून्य की तरफ प्रवाहित होने लगती है।
शून्य खीचता है,
क्योकि प्रकृति शून्य को बरदाश्त नही करती है, शून्य को भरती है।
तुम्हारी नाभि के पास शून्य हो जाये,
तो मूलाधार से ऊर्जा तत्क्षण नाभि की तरफ उठ जाती है।

और तुम्हे बडा रस मिलेगा—जब तुम पहली दफा अनुभव करोगे
कि एक गहन ऊर्जा बाण की तरह आकर नाभि मे उठ गयी।
तुम पाओगे तुम्हारा सारा तन-मन एक गहन स्वास्थ्य मे भर गया!
एक ताजगी!

ठीक वैसे ही अनुभव होगा ताजगी का—
जैसे सम्भोग के बाद उदासी का होता है,
जैसे ऊर्जा के स्खलन के बाद एक शिथिलता पकड लेती है।
सम्भोग के बाद जैसे विषाद का अनुभव होता है—वैसे ही,
अगर ऊर्जा नाभि की तरफ उठ जाये,
तो तुम्हे हर्ष का अनुभव होगा—एक प्रफुल्लता घेर लेगी।
ऊर्जा का रूपान्तरण शुरू हुआ।
तुम ज्यादा शक्तिशाली, ज्यादा सौमनस्यपूर्ण, ज्यादा प्रफुल्ल,सक्रिय,
अनथके और विश्रामपूर्ण मालूम पडोगे।
जैसे गहरी नीद के बाद उठे हो, ताजगी आ गयी हो।

इसलिए जो लोग भी मूलाधार से शक्ति को सक्रिय कर लेते है,
उनकी नीद कम हो जाती है।
जरूरत ही नही रह जाती।
वे थोडे घन्टे सोकर उतने ही ताजा हो जाते हैं।

ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन बडा अनूठा अनुभव है।

और पहला अनुभव होता है मूलाधार से,
जब ऊर्जा का नाभि की तरफ संक्रमण होता है।

यह मूलबंध की सहजतम प्रक्रिया है कि तुम श्वास को बाहर फेंक दो।
नाभि शून्य हो जायेगी, ऊर्जा उठेगी नाभि की तरफ —
मूलाधार का द्वार अपने-आप बन्द हो जायेगा।
वह द्वार खुलता है ऊर्जा के धक्के से।
जब ऊर्जा मूलाधार मे नही रह जाती, वह धक्का नही पडता,
द्वार बन्द हो जाता है।

इसे अगर तुम निरन्तर करते रहे,
अगर इसे तुमने एक सतत साधना बना लिया—
और इसका कोई पता किसी को नही चलता
तुम इसे बाजार मे खडे हुए कर सकते हो, किसी को पता भी नही चलेगा,
तुम दुकान पर बैठे हुए कर सकते हो, किसी को पता भी नही चलेगा।
अगर एक आदमी दिन मे कम-से-कम तीन सौ बार क्षणभर को मूलबंध लगा ले,
तो कुछ ही महीनो के बाद पायेगा कामवासना तिरोहित हो गयी,
काम ऊर्जा रह गयी, वासना तिरोहित हो गयी।

और तीन सौ बार करना बहुत कठिन नही है।
यह मैं सुगमतम मार्ग कह रहा हूँ, जो ब्रह्मचर्य की उपलब्धि का हो सकता है।
फिर और कठिन मार्ग है,
जिनके लिए सारा जीवन छोड के जाना पडेगा।
पर कोई जरूरत नही है।
यह किसी को पता भी नही चलेगा कि कब तुमने बाहर फेक दिया साँस को।
बाजार मे अपनी दूकान पर, कुर्सी पर दफ्तर मे बैठे हुए,
कब तुमने चुपचाप अपने पेट को खीच लिया।

एक क्षण मे ऊर्जा ऊपर की तरफ स्फुरण कर जाती है।
और तुम पाओगे कि उसके बाद घडी-आधा-घडी के लिए
तुम एकदम शान्त हो गये, हल्के हो गये,

एक नयी ताज़गी आ गयी।

बस तुमने अगर एक बार सीख लिया कि ऊर्जा कैसे नाभि तक आये,
फिर चिन्ता नही करनी है।
तुम ऊर्जा को, जब भी कामवासना उठे, नाभि मे इकट्ठा करते जाओ।
जैसे-जैसे ऊर्जा बढेगी नाभि मे, अपने-आप ऊपर की तरफ उठने लगेगी।
जैसे बर्तन मे पानी भरता है तो पानी की सतह उठती है।

असली बात मूलाधार का बन्द हो जाना है।
घडे के नीचे का छेद बन्द हो गया,
अब नीचे की ऊर्जा इकट्ठी होती जायेगी,
घडा अपने-आप भरता जायेगा।
एक दिन तुम अचानक पाओगे कि धीरे-धीरे नाभि के ऊपर ऊर्जा आ रही है,
तुम्हारा हृदय एक नयी सवेदना से आप्लावित हुआ जा रहा है।

जिस दिन हृदय-चक्र पर आयेगी तुम्हारी ऊर्जा,
तुम पाओगे, भर गये तुम प्रेम से।
तुम जहाँ भी उठोगे, बैठोगे, तुम्हारे चारो तरफ एक हवा बहने लगेगी प्रेम की।
दूसरे लोग भी अनुभव करेगे कि तुममे कुछ बदल गया, तुम अब वही नही हो।
तुम कोई और ही तरग लेकर आते हो।
तुम्हारे साथ कुछ और ही लहर आती है।
कि उदास प्रसन्न हो जाता है।
कि दुखी थोडी देर को दुख भूल जाता है।
कि अशान्त शान्त हो जाता है।
कि तुम जहाँ छू देते हो, जिसे छू देते हो,
उस पर ही एक छोटी-सी प्रेम की बरसात हो जाती है।

लेकिन, हृदय मे ऊर्जा आयेगी, तभी यह होगा।
ऊर्जा जब बढेगी—हृदय से कठ मे आयेगी—
तब तुम्हारी वाणी मे एक माधुर्य आ आयेगा।

जब तुम्हारी वाणी मे एक सगीत, एक सौन्दर्य आ जायेगा,

तुम साधारण-से शब्द बोलोगे और उन शब्दो मे काव्य होगा।
दो शब्द किसी से कह दोगे और उसे तुम तृप्त कर दोगे।
तुम चुप भी रहोगे, तो तुम्हारे मौन मे भी सन्देश छिप जाएँगे।
तुम न भी बोलोगे, तो भी तुम्हारा अस्तित्व बोलेगा।
ऊर्जा कठ पर आ गयी!

ऊर्जा ऊपर उठती जाती है,
एक घडी आती है कि तुम्हारे तीसरे-नेत्र पर ऊर्जा का आविर्भाव होता है।
तब तुम्हे पहली दफा दिखाई पडना शुरू होता है— तुम अन्धे नही होते।
उसके पहले तुम अन्धे हो।
क्योकि उसके पहले तुम्हे सिर्फ आकार दिखाई पडते है,
निराकार नही दिखाई पडता,
और वही असली मे है।

मूलाधार अधा चक्र है।
इसलिए तो हम कामवासना को अधी कहते हैं।
वह अधी है, उसके पास आँख बिलकुल नही है।
आँख तो खुलती है— तुम्हारी असली आँख—
जब तीसरे-नेत्र पर ऊर्जा आकर प्रकट होती है।
जब लहरें तीसरे-नेत्र को छूने लगती हैं—
तीसरे-नेत्र के किनारे पर तुम्हारी लहरे आकर टकराने लगती हैं—
तब पहली दफा तुम्हारे भीतर दर्शन की क्षमता जगती है।

ऊर्जा जब तीसरी-आँख मे प्रवेश करती है, तो अनुभव शुरू होता है।
और ऐसे व्यक्ति के वचनो मे तर्क का बल नही होता, सत्य का बल होता है।
ऐसे व्यक्ति के वचनो मे एक प्रमाणिकता होती है,
जो वचनो के भीतर से आती है— किन्ही प्रमाणो के आधार पर नही।
ऐसे व्यक्ति के वचन को ही हम शास्त्र कहते हैं।
ऐसे व्यक्ति के वचन वेद बन जाते हैं
जिसने जाना है, जिसने जिया है,

जिसने परमात्मा को चखा है—पिया है,
जिसने परमात्मा को पचाया है,

जो परमात्मा के साथ एक हो गया है।

फिर ऊर्जा और ऊपर जाती है—सहस्रार को छूती है।
पहला, सबसे नीचे का चक्र है, "मूलाधार",
और सबसे अन्तिम चक्र है, "सहस्रार"।
उसे हम सहस्रार कहते हैं— आखिरी चक्र को,
क्योंकि वह ऐसा है—जैसे सहस्र पखुडियोंवाला कमल हो।
बड़ा सुन्दर है!
और जब खिलता है तो भीतर ऐसी ही प्रतीति होती है,
जैसे पूरा व्यक्तित्व सहस्र पखुडियोंवाला कमल हो गया,
पूरा व्यक्तित्व खिल गया।

जब ऊर्जा टकराती है सहस्रार से,
तो उसकी पखुडियाँ खिलनी शुरू हो जाती हैं।
सहस्रार के खिलते ही व्यक्तित्व से आनन्द का झरना बहने लगता है।
मीरा उसी क्षण नाचने लगती है।
"पद घुघरु बाँध मीरा नाची।"
उसी क्षण चैतन्य महाप्रभु पागलों की तरह उन्मत्त होकर नाचने लगते हैं।
उसी क्षण चेतना तो नाचती है,
शरीर का रोआँ-रोआँ भी आनन्दित हो उठता है।

मूलबंध : सार-संक्षेप

जब भी तुम्हें लगे कि कामवासना मन को पकड़ रही है,
तब शान्त होकर बैठ जाओ और जोर से श्वास को बाहर फेंको,
नाभि को भीतर खींचो, पेट को भीतर लो और श्वास को बाहर फेंको।

८. यौन-मुद्रा काम-ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन की एक सरल विधि

एक तो यौन का जैविक, बायोलॉजिकल पहलू है— पौद्गलिक, पदार्थगत,
जो शरीर से जुडा हुआ है—शरीर के अणुओं से जुडा हुआ है,
दूसरा यौन का शक्तिगत, आत्मिक पहलू है—जो मन से, चेतना से जुडा हुआ है ।

बायोलॉजिकल हिस्सा हम सब को प्रत्यक्ष है—
जिसे हम वीर्य कहे, यौन-ऊर्जा कहे—या कोई और नाम दें,
लेकिन एक और पहलू भी उसके पीछे जुडा हुआ है,
जो आत्मगत है, शक्तिगत है ।
उसे आत्म-ऊर्जा— या जो भी नाम हम देना चाहे, दे सकते हैं ।

यह ऐसे है, जैसे कि एक लोहे का चुम्बक होना है ।
एक तो लोहे का टुकडा होता है, जो साफ दिखाई पडता है,
और एक मैगनेटिक फील्ड होता है उसके चारो तरफ,
जो दिखाई नही पडता है ।
लेकिन, अगर हम आस-पास लोहे के टुकडे रखें,
तो चुम्बक की मैगनेटिक शक्ति उसे खीच लेती है ।
एक क्षेत्र है, जिसके भीतर वह शक्ति काम करती है ।

यह ज़मीन हमे खीचे हुए है,
उसका हमे पता नही चलता है, क्योकि वह दिखाई पडनेवाली बात नही है ।
जो दिखाई पडता है, वह ज़मीन है,
जो नही दिखाई पडता है, वह उसका ग्रेविटेशन है ।
जो दिखाई पडता है, वह शरीर है,
वह जो नही दिखाई पडता है, वह मनस् और आत्मा है ।

ठीक ऐसे ही—काम के साथ, यौन के साथ,
दो पहलुओ को समझ लेना ज़रूरी है
जो दिखाई पडता है, वह जैविक कोष्ठ है,

जो नही दिखाई पडता है, वह काम-ऊर्जा है।
इस सत्य को ठीक-से न समझने से
आगे बातें फैलाकर देखनी कठिन हो जाती हैं।

इस देश के योगियो ने कहा है कि काम-ऊर्जा, सेक्स-इनर्जी,
नीचे से ऊपर की तरफ ऊर्ध्वगमन कर सकती है।
वैज्ञानिक कहता है "हम शरीर मे काटकर भी देख लेते हैं,
योगी के वीर्य-कण तो वही पडे रहते हैं।
उसी जगह, जहाँ साधारण आदमी के शरीर मे पडे होते हैं।
वीर्य ऊपर चढता हुआ दिखाई नहीं पडता है।"

वीर्य ऊपर चढता भी नही है, चढ भी नही सकता।
लेकिन जिस काम-ऊर्जा के चढने की बात की है, उसे हम समझ नही पाये।
वीर्य-कणो की भी बात नही है,
वीर्य-कणो के साथ एक और ऊर्जा जुडी है, जो दिखाई नही पडती है।
वह ऊर्जा ऊपर ऊर्ध्वगमन कर सकती है।
जब कोई व्यक्ति यौन-सम्बन्ध से गुजरता है,
तो उसके जैविक परमाणु तो उसके शरीर को छोडते ही हैं,
साथ ही उसकी काम-ऊर्जा, उसकी सेक्स-इनर्जी आकाश मे खो जाती है—
और यौन-कण नये व्यक्ति को जन्म देने की यात्रा पर निकल जाते हैं।

सम्भोग के क्षण मे दो घटनाएँ घटती है एक जैविक और एक साइकिक।
एक तो जीव-शास्त्र की दृष्टि से घटनाएँ घटती है—
जैसा कि बायोलॉजिस्ट अध्ययन कर रहे हैं।
वह वीर्य कण का स्खलन है।
वह वीर्य-कण का यात्रा पर निकलना है अपने विरोधी कणो की खोज मे—
जिससे कि नये जीवन को वह जन्म दे पाये।
पर जिसकी योग खोज करता है, वह दूसरी घटना है।
कृत्य के साथ ही मनस् की शक्ति स्खलित होती है,
जो कि शून्य मे खो जाती है।

इस मनस्-शक्ति को ऊपर ले जाने के उपाय हैं।
जब वीर्य के ऊर्ध्वगमन की बात कही जाती है, तो कोई शरीर-शास्त्री,
कोई डॉक्टर भूलकर यह न समझे कि वह वीर्य की,
या वीर्य-कणो के ऊपर ले जाने की बात है।
वीर्य-कण ऊपर नही जा सकते।
उनके लिए कोई मार्ग नही है शरीर मे—ऊपर।
सहस्रार तथा अस्तित्व तक पहुँचने के लिए कोई उपाय नही है उनके पास।
जो चीज ऊपर जा सकती है, वह मैगनेटिक फोर्स है।
वह जो मैगनेटिक फोर्स है, उसके ही नीचे जाने पर वीर्य-कण सक्रिय होते है।

काम-ऊर्जा अनन्त है, महावीर ने उसे अनन्तवीर्य कहा है।
अनन्तवीर्य से अर्थ जैविक-वीर्य से नही है—'सीमेन' से नही है।
अनन्तवीर्य से अर्थ उस काम-ऊर्जा का है,
जो निरन्तर मन से शरीर तक उतरती है—पर जो मन से नही आती है।
वह आती है आत्मा से मन तक, और मन से शरीर तक।
ये उसकी सीढियाँ है।
उसके बिना वह उतर नही सकती।
अगर बीच मे से मन टूट जाये,
तो आत्मा और शरीर के बीच सारे सम्बन्ध टूट जाएँगे।

जिस शक्ति को योग और तन्त्र ने काम-ऊर्जा कहा है,
वह जीव-शास्त्रीय काम-ऊर्जा नही है।
वह काम ऊर्जा ऊपर की तरफ पुन गति कर सकती है।
किसी बुद्ध मे भी वह काम-ऊर्जा ऊपर की तरफ गति कर जाये,
तो उसकी जिन्दगी उतनी ही सरल, इनोसेन्ट और निर्दोष हो जायेगी,
जितनी छोटे बच्चे की होती है।
वह यौन-ऊर्जा नीचे की तरफ सहज आती है, प्रकृति की तरफ से आती है।

अगर किसी मनुष्य को इस ऊर्जा को ऊपर ले जाना है,
तो यह सहज नही होगा, प्रकृति की तरफ से नही होगा,

यह संकल्प से होगा।
यह मनुष्य के प्रयास, मनुष्य की आकांक्षा, अभीप्सा और श्रम से होगा।
मनुष्य को इस दिशा मे श्रम करना पडेगा,
क्योंकि प्रकृति से उलटी दिशा मे बहना पडेगा ।

नदी मे अगर नीचे की तरफ बहना हो —सागर की तरफ—
तब तैरने की कोई भी जरूरत नही है।
तब हम हाथ-पैर छोडकर सागर की तरफ बह सकते है।
नदी ही सागर की तरफ ले जायेगी, हमे कुछ भी करना नही है।
लेकिन, अगर नदी के मूल-स्रोत की तरफ, उद्गम की तरफ जाना हो,
तो फिर तैरना पडेगा, श्रम उठाना पडेगा।
फिर एक सघर्ष होगा—नदी की धारा से सघर्ष।

जो लोग भी ऊपर की तरफ जाना चाहते हे,
उन्हे दूसरी बात समझ लेनी चाहिए कि सकल्प और सघर्ष मार्ग होगा।
ऊपर जाया जा सकता है, और ऊपर जाने के अपूर्व आनन्द है।
क्योकि नीचे जाकर जब सुख मिलता है—क्षणिक ही सही—
तो ऊपर जाकर क्या मिल सकता हे, उसकी हम कल्पना भी नही कर सकते।

यौन-ऊर्जा नीचे बहकर जो लाती है वह सुख है,
ऊपर उठकर जो लाती है वह आनन्द है।

सकल्प, शक्तियो के रूपान्तरण का नाम है।
जब चित्त माँगता है यौन,
जब चित्त माँगता हे दूसरे को, अपोजिट को—
स्त्री पुरुष को, पुरुष स्त्री को,
जब चित्त माँगता है दूसरे की तरफ बहो।
तब बहाव का रूपान्तरण करना पडेगा।
चित्त जिस ढग से दूसरे को माँगता है उससे उलटी प्रक्रिया करनी पडेगी।
ताकि चित्त की यह माँग परमात्मा की, मोक्ष की माँग बन जाये।

इसके लिए दो-तीन बातें ख्याल मे लेनी जरूरी है।

जैसे ही चित्त यौन की माँग करता है, सेक्स की माँग करता है—
शरीर सेक्स की तैयारी करने लगता है।
यौन-केन्द्र से, मूलाधार से दूसरी माँग का स्फुरण शुरू हो जाता है।
यौन-केन्द्र बहिर्गामी हो जाता है।
इस क्षण मे, तन्त्र कहता है कि अगर यौन-केन्द्र को अन्तर्गामी किया जा सके,
भीतर की तरफ खीचा जा सके—
जिसे "यौन-मुद्रा" का नाम दिया है,
तो तत्काल आप दो क्षण मे पायेंगे कि शरीर ने यौन की मांग बन्द कर दी।

माँग लेकिन पैदा हो गयी थी, शक्ति जग गयी थी।
इस शक्ति को ऊपर ले जाया जा सकता है।
जैसे ही हम सेक्स का विचार करते है,
वैसे ही हमारा चित्त जननेन्द्रिय की तरफ बहने लगता है।
तो तुरन्त जननेन्द्रिय को भीतर की ओर खीच ले,
जननेन्द्रिय से बाहर जानेवाले सब द्वार बन्द हो जायेंगे।
ऊर्जा जग गयी है, उस क्षण मे हम आँखो को बन्द कर ले,
आँख बन्द करके सिर की छत की तरफ अन्दर से—
जैसे ऊपर से देख रहे हो, ऐसे देखना शुरू कर दे।
ऐसे निरन्तर प्रयास मे आप एक महीनेभर के भीतर पायेंगे कि आपके
भीतर से कोई चीज नीचे से ऊपर की तरफ जानी शुरू हो गयी है।

यह वस्तुत अनुभव होगा कि कोई चीज ऊपर बहने लगी,
कोई चीज ऊपर उठने लगी।
उसेकोई 'कुण्डलिनी' के नाम से कहता है,
उसे कोई और नाम दे सकता है।

इसमे दो बिन्दुओ पर ध्यान देना जरूरी है
एक तो 'सेक्स-सेन्टर' पर 'मूलाधार' पर, और दूसरे 'सहस्रार' पर।
सहस्रार हमारे ऊपर का केन्द्र है—
और मूलाधार हमारे सबसे नीचे का केन्द्र है।
मूलाधार को सिकोड ले भीतर की तरफ,

उसमे जो शक्ति पैदा हुई है वह शक्ति मार्ग खोज रही हे,
और अपने चित्त को ले जायें ऊपर की तरफ,
क्योकि वही मार्ग खुला रह जाता है।

चित्त जिस तरफ देखता है——
उसी तरफ शरीर की शक्ति बहनी शुरू हो जाती हे——
यह ट्रान्सफॉर्मेशन की छोटी-सी विधि ह।
इसका अगर प्रयोग करें तो ब्रह्मचर्य बिना सप्रेशन के फलीभूत होता है।

यह सप्रेशन नही हे, यह सब्लिमेशन है।
यह दमन नही है।
दमन का तो मतलब है कि ऊपर द्वार नही खुला है
और नीचे के द्वार पर रोके चले जा रहे है।
तब उपद्रव होगा, तब विक्षिप्तता होगी, पागलपन होगा।
अगर मार्ग है शक्ति के लिए, तो दमन नही होगा, सिर्फ उर्ध्वगमन होगा,
शक्ति नीचे से ऊपर की तरफ उठनी शुरू हो जायेगी।

यह तो प्रायोगिक बात मैने आपसे कही।
यह प्रयोग करे और समझे।
यह कोई सैद्धान्तिक बात नही है।
न कोई बौद्धिक या शास्त्रीय बात है।
यह करोडो लोगो की अनुभूत घटना है और सरलतम प्रयोग है।
और एक बार मस्तिष्क के ऊपरी छोरो पर रस के फूल खिलने शुरू हो जाएँ,
तो आपकी जिन्दगी से यौन विदा होने लगेगा।
वह धीरे-धीरे खो जायेगा और एक नयी ही ऊर्जा का,
नयी शक्ति का, नये वीर्य का, नयी दीप्ति का, नये आलोक का
और नये ससार का जन्म होगा।

फिजिओलॉजी से इसका कोई लेना-देना नही है।
जो शक्ति ऊपर उठेगी, उसे हम शरीर को काटकर देखें,
तो वह कही भी नही मिलेगी,

वह मैगनेटिक फील्ड की तरह है।
हम हड्डियो को तोडे-फोडें, तो वह कही भी नहीं मिलेगी।
वह शारीरिक घटना नही है, वह घटना साइकिक है।
वह घटना मनस् मे घटती है।

शरीर के तल पर लेकिन अन्तर पडने शुरू हो जायेंगे।
उस शक्ति के नीचे प्रवाहित होने पर
शरीर के वीर्य-कणो का प्रवाह बाहर की तरफ होता है।
यदि वह शक्ति नीचे नही बहेगी,
तो शरीर के वीर्य-कण भी बाहर की ओर बहने बन्द हो जायेंगे
और शरीर सरक्षित होगा।
लेकिन शरीर के सरक्षण के लिए यह प्रयोग नही हे।
क्योकि शरीर की उम्र है और वह मरेगा,
जन्म और मृत्यु के बीच फासला जितना है, वह पूरा कर लेगा।
जो बडी घटना घटेगी वह साइकिक-एनर्जी की हे, वह मनस्-ऊर्जा की है।

जितनी मनस-ऊर्जा व्यक्ति के पास हो,
उतना ही व्यक्ति का विस्तार होने लगता है,
उतना ही वह फैलने लगता हे,
उतना ही वह विराट् होने लगता हे।
और जिस दिन एक कण भी व्यक्ति की मनस्-ऊर्जा का
नीचे को तरफ प्रवाहित नही होता,
उसी दिन व्यक्ति घोषणा कर सकता है—'अह ब्रह्मास्मि'।
वह कह सकता हे—'मै ब्रह्म हूँ'।

यह 'अह ब्रह्मास्मि' की घोषणा कोई तार्किक निष्पत्ति,
कोई लॉजिकल कन्क्लूज़न नही है,
यह एक एग्जिस्टेन्शियल कन्क्लूज़न है, यह एक अस्तित्वगत अनुभव है।
जिस दिन विराट् से सम्बन्ध होता है,
उस दिन पता चलता हे कि मैं व्यक्ति नही हूँ, विराट् हूँ।

लेकिन यह विराट् का अनुभव विराट् शक्ति के सरक्षण से हो सकता है।
और इस शक्ति का सरक्षण,
जब तक काम-ऊर्जा ऊपर की तरफ प्रवाहित न हो,
तब तक असम्भव है।

यौन-मुद्रा सार-संक्षेप

जैसे ही हम सेक्स का विचार करते है,
वैसे ही हमारा चित्त जननेन्द्रिय की तरफ बहने लगता है।
तो तुरन्त जननेन्द्रिय को भीतर खीच ले।
जैसे ही ऊर्जा जगे,
तत्काल आँखे बन्द करके सिर की छत की तरफ अन्दर से—
जैसे ऊपर से देख रहे हो, ऐसे देखना शुरू कर दे।

दो बिन्दुओ पर ध्यान रखे
एक तो सेक्स-सेन्टर पर—मूलाधार पर, दूसरे सहस्रार पर।
मूलाधार को सिकोड ले भीतर की तरफ —
और चित्त को ले जाएँ ऊपर की तरफ।
क्योकि चित्त जिस तरफ देखता है,
उसी तरफ शक्ति बहनी शुरू हो जाती है।

विस्तार के लिए देखें—'सूली ऊपर सेज पिया की' पुस्तक।

९. निश्चल-ध्यान-योग

ध्यान के सैकडो प्रकार है।
और ध्यान के सैकडो मार्गों से लोग ध्यान को उपलब्ध हो सकते है।
निश्चल-ध्यान-योग की तरफ पहुचने के लिए भी सैकडो रास्ते है।
और पृथ्वी पर अनेकानेक रास्तो से चलकर लोग लक्ष्य को उपलब्ध हो गये है—जिसे हम मन का ठहर जाना कहते है।

एक छोटी-सी सरल प्रक्रिया मै आपसे कहूँगा, जिसे आप कर सकें।
और आपको निश्चल मन की थोडी-सी झलक और छाया भी मिलनी शुरू हो जाये, तो आपकी जिन्दगी रूपान्तरित होने लगेगी।
एक नये आदमी का जन्म आपके भीतर हो जायेगा।
पुराना आदमी बिखरने लगेगा, एक नयी चेतना, एक नया केन्द्र,
देखने का एक नया ढग, जीने की एक नयी प्रक्रिया,
होने की एक नयी व्यवस्था आपके भीतर पैदा हो जायेगी।
जैसे अचानक अन्धे की आँख खुल जाये,
जैसे अचानक बहरे को कान मिल जाये,
जैसे अचानक मरा हुआ पुन जीवित हो जाये—
ठीक, ध्यान के योग से ऐसी ही व्यापक क्रान्तिकारी घटना घटती है।

आपने चित्र देखे होगे बच्चो के, जब वे माँ के पेट मे, गर्भ मे होते है।
माँ के पेट मे बच्चा जिस हालत मे होता है—गर्भ मे, उस अवस्था मे—
मनोवैज्ञानिक कहते है, योग की गहरी खोज कहती है
कि माँ के पेट मे जब बच्चा होता है—जिस आसन मे,
उस समय बच्चो के पास न्यूनतम मन होता है,
न-के-बराबर मन होता है।
कह सकते है कि होता ही नही।
और बच्चे की चेतना, माँ के पेट मे, मस्तिष्क मे नही होती।
और न ही बच्चे की चेतना हृदय मे होती है।

शायद आपको पता नही कि माँ के पेट मे बच्चे का हृदय नही धडकता,
नौ माह बच्चा बिना हृदय की धडकन के होता है।
इसलिए एक बात और ख्याल मे लेना
कि हृदय की धडकन से जीवन का कोई सम्बन्ध नही है,
क्योकि बच्चा बिना हृदय की धडकन के नौ महीने जिन्दा रहता है।

जीवन गहरी बात है।
चेतना जब भाव मे होती है तो हृदय केन्द्र होता है,
और चेतना जब विचार मे होती है तो मस्तिष्क केन्द्र होता है।
लेकिन मस्तिक बहुत बाद मे विकसित होता है
और हृदय नौ महीने बाद धडकता है।
उसके भी पहले, चेतना जिस केन्द्र पर होती है, वह नाभि है।
बच्चा माँ से, नाभि से जुडा रहता है,
जीवन का पहला अनुभव बच्चे को नाभि पर होता है।
जिन लोगो को मन के पार जाना है,
उन्हे हृदय और मस्तिष्क दोनो से उतरकर नाभि के पास लौटना होता है।
अगर वे फिर से अपनी चेतना को नाभि के पास अनुभव कर सकें,
तो मन तत्क्षण ठहर जायेगा।

तो इस ध्यान की प्रक्रिया मे—
जिसे मै 'निश्चल-ध्यान-योग' की तरफ एक विधि कहता हूँ—
दो बाते ध्यान मे रखनी जरूरी हैं।
जैसा कि सूफी-फकीरो को अगर आपने देखा हो प्रार्थना करते,
या मुसलमानो को अगर आपने नमाज पढते देखा हो,
तो जिस भाँति वे घुटने मोडकर बैठते हैं, वैसे घुटने मोडकर बैठ जाएँ।
(बच्चे के घुटन ठीक उसी तरह मुडे होते है माँ के गर्भ मे।)
आँखे बन्द कर ले, शरीर को ढीला छोड दें,
और श्वास को बिलकुल शिथिल, रिलेक्स्ड छोड दे।
क्योकि श्वास जितनी धीमी और जितनी आहिस्ता होगी,
आपके लिए उतना अच्छा होगा।

श्वास को शान्त नही किया जा सकता,
अगर आप रोकेंगे तो श्वास तेजी से चलने लगेगी।
रोके मत, सिर्फ ढीला छोड दें।
आँख बन्द कर ले और अपनी चेतना को भीतर नाभि के पास लें जाएँ।
अपने ध्यान को आँख बन्द कर वही लाएँ, जहाँ नाभि कम्पित हो रही है,
जहाँ श्वास के धक्के से पेट ऊपर-नीचे हो रहा है।
थोडी देर मे शरीर आपका आगे झुकेगा
और फिर जाकर जमीन से लग जायेगा।
तब आप ठीक उस हालत मे आ जाएँगे
जिस हालत मे बच्चा माँ के पेट मे होता है।

शान्त होने का इससे ज्यादा कीमती आसन जगत् मे कोई भी नही है।
आसन ऐसा हो जाये, जैसा गर्भ मे बच्चे का होता है—
और आपका ध्यान नाभि पर चला जाये।
बच्चे का ध्यान और चेतना नाभि पर होती है।
आपका ध्यान भी नाभि पर चला जायेगा।

अनेक बार ध्यान उचट जायेगा।
कोई कही आवाज होगी, ध्यान चला जायेगा।
कही कोई बोल देगा कुछ, ध्यान उचट जायेगा।
विचार आ जायेगा और ध्यान हट जायेगा।
उससे लडे मत।
अगर ध्यान हट जाये तो चिन्ता मत करें।
जैसे ही ख्याल आये कि ध्यान हट गया,
तो वापिस अपने ध्यान को नाभि पर ले आएँ।

आप एक अज्ञात-अस्तित्व से जुडे हैं, नाभि के द्वारा ही।
जैसे हम माँ से जुडे होते है इस भौतिक ससार से,
ऐसे ही इस बडे जगत्, इस बडे अस्तित्व से—
इस प्रकृति या अस्तित्व के गर्भ से, नाभि से जुडे होते है।

जैसे ही आप नाभि के निकट अपनी चेतना को लाते है,
मन निश्चल हो जाता है।

जीसस का बहुत अद्‌भुत वचन है,
शायद ही कोई ईसाई उसका अर्थ समझ पाया हो।
जीसस ने कहा कि तुम तभी मेरे प्रभु के राज्य मे प्रवेश करोगे,
जब तुम छोटे बच्चे की भाँति हो जाओ।

यूँ तो इसका अर्थ वही हुआ कि हम छोटे बच्चो की तरह सरल हो जाएँ,
लेकिन गहरे वैज्ञानिक अर्थ मे इसका अर्थ होता है
कि हम बच्चे की उस आन्तरिक अवस्था मे हो जाएँ,
जब बच्चा होता ही नही, माँ ही होती है—
और बच्चा माँ के सहारे ही जी रहा होता है।
न उसमे हृदय की धडकन होती है, न उसका अपना मस्तिष्क होता है—
बच्चा, पूरा समर्पित, माँ के अस्तित्व का अग होता है।

ठीक ऐसी ही हालत 'निश्चल-ध्यान-योग' मे घटती है।
आप शान्त हो जाते है।
परमात्मा के साथ एक हो जाते है और परमात्मा के द्वारा आप जीने लगते है।

निश्चल-ध्यान-योग सार-सक्षेप

मुसलमानो को अगर आपने नमाज पढते देखा हो,
तो जिस भाँति वे घुटने मोडकर बैठते है,
वैसे घुटने मोडकर बैठ जाएँ,
आँखे बन्द कर लें—
शरीर को और श्वास को भी बिलकुल शिथिल छोड दे—
और अपनी चेतना को भीतर नाभि के पास ले आएँ,
जहाँ श्वास के धक्के से पेट ऊपर-नीचे हो रहा है।

जैसे ही आप नाभि के निकट अपनी चेतना को लाते हैं,
मन निश्चल हो जाता है।

१०. अनापानसती-योग

एक सरल-सी प्रक्रिया पर रोज दिनभर ख्याल रखें.
चलते, उठते, बैठते, सोते—जब तक ख्याल रहे, श्वास पर ख्याल रहे;
पूरे वक्त स्मृति श्वास पर रहे।
श्वास भीतर जा रही है तो हमारी स्मृति भी उसके साथ भीतर जाये—
बोध भी कि श्वास भीतर गयी,
श्वास बाहर जा रही है तो बोध भी श्वास के साथ बाहर जाये।

आप श्वास पर ही तैरने लगें, श्वास पर ही चेतना की नाव को लगा दें।
बाहर जाये तो बाहर, भीतर जाये तो भीतर
श्वास के साथ ही आपका भी कम्पन होने लगे।
और इसे बिलकुल न भूलें कभी।
जब भी भूल जायें, और जब याद आये, फौरन फिर शुरू कर दें।
घूमने गये हैं, बगीचे मे गये हैं—कही भी गये हैं,
कार मे बैठे है तो इसको नही छोड देना है, इसको सतत ही स्मरण रखें।

तो एक तीन-चार दिन मे स्मरण टिकने लगेगा।
और जैसे-जैसे स्मरण टिकने लगेगा,
वैसे-वैसे ही आपका चित्त शान्त होने लगेगा।
ऐसी शान्ति, जो आपने कभी नही जानी होगी।
क्योंकि जब चित्त पूर्ण श्वास के साथ चलने लगता है,
तो विचार अपने-आप बन्द होने लगते हैं, विचार का उपाय नही रहता।
क्योंकि ये दो बातें एकसाथ नही हो सकती।
श्वास पर चित्त होगा तो विचार बन्द होंगे,
और विचार पर चित्त जायेगा तो श्वास पर नही रहेगा।
दोनो बातें एकसाथ नही हो सकती, यह असम्भव है।

इसलिए मैं श्वास पर ध्यान रखने के लिए कह रहा हूँ—
ताकि विचार वहाँ से खो जाएँ।
और विचार सीधे हटाने तो बहुत कठिन हैं,
क्योंकि वह तो दबाना हो जाता है।
यहाँ हम हटा नही रहे विचारो को, विचारो से कोई सम्बन्ध ही नही,
हम तो अपनी पूरी चेतना को दूसरी जगह लिए जा रहे हैं।
और चूँकि चेतना वहाँ नही होती जहाँ विचार हे,
इसलिए उनको हट जाना पडता है।

तो विचार छोडने का ख्याल ही नही करना है।
श्वास पर ध्यान चला जाये तो विचार छूट जाते है।
क्योकि श्वास बिलकुल दूसरा तल है, जहाँ विचार नही है।
और विचार एक दूसरा तल है जहाँ श्वास का स्मरण नही हो सकता।
तो ये बिलकुल ही विरोधी प्रक्रियाएँ हैं।
और अगर एक तल पर ले जाते हैं,
तो दूसरे से अपने-आप मुक्ति हो जाती है।

तो पूरे समय – ऐसा नही कि कभी, थोडो-बहुत देर,
क्योकि तब फिर गहरा नही हो पायेगा।
तो पूरे समय श्वास पर ध्यान रखें।
सुबह उठें तो पहला स्मरण श्वास का,
रात सोये तो अन्तिम स्मरण श्वास का।

श्वास पर पूरे वक्त ध्यान रखे।
और घन्टा, आधा घन्टा कभी भी एकान्त मे बैठकर ध्यान रखें।
आँखें बन्द कर ले और श्वास पर ही ध्यान रखें।
क्योकि बाहर चलते है, काम करते हैं, बार-बार चूक हो जाती है।
पैर मे काँटा गड गया है, तो ध्यान कहाँ श्वास पर रहा—
ध्यान तो काँटे पर चला गया।
प्यास लगी, तो ध्यान पानी पर चला जायेगा।
एक घन्टे के लिए कही एकान्त मिल जाये, तो वहाँ बैठ जाएँ।

रात बहुत बढिया होगी।
कही भी दीवार से टिक जाएँ और बैठ जाएँ,
और पूरा घन्टा श्वास को देखने मे ही बिता दें।
तो पन्द्रह दिनो मे उतना बडा काम हो जायेगा,
जो आप अकेले पन्द्रह वर्षो मे नही कर पायेंगे।

हो सकता है कि इसमे दो-चार घटनाएँ घटें—
पर उनकी चिन्ता नही करनी है।
जैसे, श्वास पर जितना ध्यान देंगे, नीद कम हो जायेगी,
उसकी जरा भी चिन्ता न करे।
जितनी देर नीद खुली रहे, बिस्तर पर, श्वास पर ही ध्यान रहे।
चार-पाँच दिन श्वास पर ध्यान रखने से नीद उड भी जा सकती है—
उस पर जरा भी चिन्ता न करें,
क्योकि श्वास पर ध्यान रखने से नीद से जो काम होता है,
वह पूरा हो जाता है—विश्राम मिल जाता है।

नीद दो तरह से खत्म होती है तनाव से भी और विश्राम से भी।
चिन्ता से भी नीद खत्म होती है,
क्योकि चिन्ता इतना तनाव से भर देती है
कि मस्तिष्क शिथिल ही नही हो पाता।
तो नीद खत्म हो जाती है।
और अगर कोई ध्यान का प्रयोग करे, तो चित्त इतना शान्त हो जाता है
कि नीद से जो शान्ति की जरूरत थी, वह पूरी हो जाती है।
इसलिए नीद का कोई कारण नही रह जाता, वह विदा हो जाती है।
तो उसका ध्यान नही करेंगे, ज़रा भी फिक्र नही करेंगे।

और कुछ अजीब-अजीब अनुभव हो सकते है, —
तो उन पर भी चिन्ता नही करेंगे।
वे अलग-अलग सबको हो सकते है, एक-से होते भी नही।
उसकी बात किसी दूसरे से आप मत करें।
क्योकि दूसरा सिर्फ हँसेगा और आपको पागल समझेगा।

क्योंकि वैसा अनुभव उसको नहीं हो रहा है।
इसलिए उसको दूसरे से कहना ही मत कभी,
वह सबको अलग-अलग होता है। '
हो सकता है श्वास पर ध्यान देते समय किसी को एकदम ऐसा लगे कि
उसका शरीर बहुत बडा हो गया है और एकदम फैल गया है—
विस्तार हो गया है उसके शरीर का।
और वह एकदम घबडा जाये कि यह क्या हो गया!
. अब उठ सकेंगे कि नहीं उठ सकेंगे?

. इतना भारी हो जाये कि एकदम पत्थर हो जाये।
इतना हल्का हो जाये कि ऐसा लगे कि जमीन से ऊपर उठ गया है।
जमीन और हमारे बीच फासला हो गया है।
मै ऊपर उठा जा रहा हूँ।
मैं लौट पाऊँगा या नहीं लौट पाऊँगा?

गहन अंधकार का अनुभव हो सकता है।
तेज चमकती बिजलियों का अनुभव हो सकता है।
सुगन्ध अनुभव हो सकती है अजीब तरह की।
दुर्गन्ध अनुभव हो सकती है।
कुछ भी हो सकता है।
बहुत तरह की बातें हो सकती हैं।

तो उनको चुपचाप खुद ही अपने भीतर रखें, किसी से कहे ही नहीं।
जब मै आपको मिलूँगा तो आप मुझको कहे।
और मुझसे कहकर फिर आप दुबारा उसकी किसी से बात मत करें।

उसके कई कारण है
एक तो दूसरा कभी उस पर विश्वास नहीं कर सकता।
कभी नहीं करेगा, क्योंकि वैसा उसको हो नहीं रहा है।
और वह हँसेगा और उसकी हँसी आपको नुकसान पहुँचायेगी।
बहुत गहरा नुकसान पहुँचायेगी।

दूसरी बात है कि हमे जो अनुभव होते हैं,
अगर हम उनकी बात करें तो वे फिर दुबारा नही होते।
क्योंकि वे होते हैं अनायास और जब हम उनकी बात कर देते है,
तो फिर नही होते।

और भी एक बडे मजे की बात है कि ये जो गहरी अनुभूतियाँ हैं,
उनको बिलकुल रहस्य की तरह छिपाना चाहिए,
नही तो ये बिखर जाती है।
उनमे भी बडी ताकत है।

जैसे कि हम तिजोरी मे धन छिपा देते है।
और जैसे कि हम कपडे पहनते हैं और सूरज की गर्मी को भीतर रोक लेते है।
सर्दी पड रही है तो हम कपडे पहने हुए हैं—
इसलिए कि सर्दी हमारी गर्मी को खीच लेगी बाहर
और शरीर मुश्किल मे पड जायेगा।

तो पूरे वक्त हमारा शरीर बाहर के सम्पर्क मे अपनी गर्मी को खो रहा है,
अपनी शक्ति खो रहा है।
जब बहुत गहरी अनुभूतियाँ अन्दर होती हैं,
तो एक खास तरह की शक्ति पैदा होती है उन अनुभवो के साथ।
अगर आपने बात की तो वह तत्काल बिखर जाती है, खो जाती है।

तो उसकी बात ही नही करना।
निकटतम सम्बन्धियो से भी बात मत करना।
पत्नी से भी नही कहना।
उसको बिलकुल अपने अन्दर छिपा लेना, ताकि वह बढे,
गहरी हो और गहरे अनुभवो मे ले जाये।

श्वास पर ध्यान केन्द्रित करना बहुत गहरा प्रयोग है।
इसमे किसी तरह का तनाव और परेशानी भी नही है।
और मैं हर तरह की विधियो की बात करता हूँ—
सिर्फ इस कारण कि बहुत तरह के लोग है,

न-जाने किस को कौन-सी विधि कब पकड मे आ जाये।
तो जिसको जो पकड मे आ जाये, वह उस पर चला जाये।

एक सौ बारह विधियाँ है ध्यान की।
बहुत अच्छा होगा कि मै एक बार उन एक सौ बारह विधियो* पर
सात-आठ दिन बैठकर बात करूँ—
ताकि एक पूर्ण सकलन पूरी विधियो का अलग हो जाये।

---

* ध्यान रहे, ध्यान की एक सौ बारह विधियो पर अंग्रेजी भाषा में भगवान्‌श्री के अस्सी प्रवचन हो चुके हैं—जिसके 'द बुक ऑफ् सिक्रेट्स' के नाम से चार-चार सौ पृष्ठों के पाँचों खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं।

इन पुस्तकों के इच्छुक साधक 'श्री रजनीश आश्रम, १७–कोरेगाँव पार्क, पूना—४११ ००१' से सम्पर्क करें।

सकेत 'द बुक ऑफ सिक्रेट्स' से अनूदित पाँच ध्यान-विधियों पर एक पूरा प्रवचन—'आत्मोपलब्धि की पाँच तान्त्रिक विधियाँ'—देखें।

स्वप्न मे सचेतन प्रवेश की दोनों ध्यान-विधियाँ भी 'द बुक ऑफ् सिक्रेट्स से ली गयी हैं।

११. इक्कीस दिवसीय मौन

भगवान्, इक्कीस दिन के पूर्ण एकान्त और मौन मे—
गहरे ध्यान के विशेष प्रयोग-काल मे
साधक को किन नियमो का पालन करना चाहिए ?

सक्रिय ध्यान प्रत्येक दिन एक बार अवश्य करो,
और श्वास पर सतत ध्यान रखो।
न पढो, न लिखो, न चिन्तन ही करो—
क्योकि पढना-लिखना प्राण-शरीर (इथरिक-बॉडी) के द्वारा
सम्पन्न नही होता है।
यह क्रिया मनस्-शरीर (मेन्टल-बॉडी) के द्वारा सम्पादित होती है,
और यह ऊर्जा को दूसरी दिशा मे प्रवाहित कर देती है।

टहलने के लिए जा सकते हो, क्योकि टहलना प्राण-शरीर का हिस्सा है।
इसलिए, अगर प्राण-शरीर अस्वस्थ हो, तो तुम टहलना पसन्द नही करोगे।
सभी शारीरिक क्रियाएँ प्राण-शरीर से सम्बन्धित हैं,
वे प्राण-शरीर के द्वारा ही सम्पादित होती हैं।

इसलिए इस प्रयोग-अवधि मे देखने मे भी सयम बरतना—
कारण कि देखने की क्रिया प्राण-शरीर के द्वारा सम्पन्न नही होती है,
बल्कि मनस्-शरीर के द्वारा सम्पन्न होती है,
और फलस्वरूप देखने मे हमारी शक्ति गलत दिशा की ओर बहने लगती है।

भ्रमण के लिए जाओ तो आँखें अधखुली हो।
क्योकि अधखुली आँखे रास्ते के अलावा और कुछ नही देख सकती।
नयी उत्तेजनाएँ हो, तो ही विचार-प्रक्रिया सम्भव हो सकती है।
अगर इन्द्रियाँ हमेशा ऊब मे हो, अकेलेपन मे हो,
तो सोच-विचार सम्भव नही हो सकता।

इसलिए विषय-परिवर्तन पर दृष्टि मत रखो,
क्योकि वह विचार को उकसाता है। •

तुम्हे नीरसता के परिवेश मे ही रहना चाहिए—
मात्र एक कमरे मे, ताकि निरन्तर वही फर्श दिखाई पडे।
वह बिलकुल नीरस और उबानेवाला होना चाहिए,
ताकि विचार को सक्रिय होने का मौका न मिले।
तो उस हालत मे तुम कुछ सोच ही नही सकते।

विचार के लिए नयी उत्तेजनाएँ आवश्यक हैं।
चिन्तन हमेशा कुछ नय की अपेक्षा रखता है, ताकि विचार निर्मित हो सके।
इसलिए साधक को ऐसा मौका नही देना चाहिए।

किसी व्यक्ति को मत देखना, तब विचार सक्रिय नही होगे।
क्योकि टेबल, कुर्सी या बिस्तर के साथ तुम सवाद नही कर सकते।
लेकिन, अगर किसी व्यक्ति को देखते हो—
हालाँकि उससे बात भी नही करते,
तो भी विचार सक्रिय होने लगते है, क्योकि उससे सवाद सम्भव है।
हर क्षण अपनी श्वास के प्रति होशपूर्ण रहो—ताकि तुम्हारी पूरी ऊर्जा एव ध्यान बाह्य-वस्तुओ पर न होकर भीतर श्वास पर हो।

चाहो तो टहलने के लिए निकल सकते हो,
लेकिन तब सिर्फ टहलना ही, और कुछ मत करना,
सिर्फ टहलने से ही प्रयोजन रखना।
इससे लाभ होगा।

प्राण-शरीर के अलावा अन्य किसी भी शरीर से सम्पन्न होनेवाली क्रियाओ मे सलग्न नही होना चाहिए।

दिन मे एक या दो बार स्नान कर सकते हो,
वह प्राण-शरीर से ही सम्बन्धित है।
हर चीज को ध्यानपूर्वक, साक्षी-भाव से देखते रहो।
तुम टहलने के लिए निकले हो या चाय पी रहे हो,
उन्हे साक्षी-भाव से देखते रहो।

इन इक्कीस दिनो मे बहुत-सी घटनाएँ घटेंगी,
इसलिए थोडा इस सम्बन्ध मे भी समझ लेना अच्छा होगा।
प्रथम सप्ताह मे अगर बहुत कम नींद की आवश्यकता महसूस हो
तो चिन्तित न होना।
यह सम्भव है—क्योकि सोचने-विचारने आदि बहुत-सारी क्रियाओ को,
जो तुम साधारणत किया करते थे—अब छोड दिया है।
श्वास पर निरन्तर ध्यान देने से इतनी ऊर्जा का जन्म होगा
कि लम्बे समय तक आलस्य मे नही रह सकते हो,
तुम इतने जीवन्त और प्राणवान हो जाते हो कि नींद बहुत कम महसूस होगी।

अत निद्रा आती हो तो ठीक—नही आती हो, तो भी ठीक।
उससे कोई हानि नही होने जा रही है।
इसके बहुत-से कारण हैं।
पहला, जब तुम श्वास पर ध्यान देते हो तो श्वास लयबद्ध हो जाती है।
और उस लयबद्धता से पूरा व्यक्तित्व सगीतपूर्ण हो जाता है।
उस लयबद्धता से ऊर्जा का सरक्षण होता है।

साधारणत हमारी श्वास लयबद्ध नही होती है,
श्वास की गति बडी ऊलजलूल एव विक्षिप्त होती है।
और इस कारण ऊर्जा का व्यर्थ निष्कासन होता है।
लयबद्धता और समस्वरता से ऊर्जा सरक्षित होती है।
और चूँकि तुम हर क्षण जागरूक हो,
श्वास पर ध्यान देने मे अत्यल्प ऊर्जा का व्यय होता है।
क्योकि यह कोई काम नही है,
श्वास पर ध्यान देने मे तुम कुछ कर नही रहे हो,
यह एक तरह की अक्रिया है, तुम बस होशपूर्ण हो।

जिस क्षण तुम कुछ करने लगते हो—चाहे वह सोच-विचार ही क्यो न हो,
क्रिया शुरू हो जाती है।
और इससे ऊर्जा का अपव्यय होता है।

चौबीसों घन्टे निरन्तर श्वास पर ध्यान देने का अर्थ हुआ—
अति-अल्प ऊर्जा का खर्च, ताकि अधिकतम ऊर्जा का सरक्षण हो।
उससे तुम ऊर्जा का एक भण्डार हो जाते हो।
यही ऊर्जा कुण्डलिनी-जागरण मे काम आयेगी।
अन्यथा हम शक्ति का अपव्यय कर-करके
इस मामले मे बिलकुल दीन-हीन हो गये हैं।
और तब कुण्डलिनी के यात्रा-पथ से जब ऊर्ध्वगमन के लिए हम कोशिश करते है, तो इतनी ऊर्जा ही नही होती है हमारे पास कि वह ऊपर की ओर यात्रा कर सके।

नीचे जाने मे कोई बहुत ज्यादा ऊर्जा की जरूरत नही है,
पर ऊर्ध्वगमन के लिए ऊर्जा के एक विशाल भण्डार की आवश्यकता है।
तभी ऊपर के लिए द्वार खुल सकते है, वरना नही।
इसलिए जिनके पास बहुत थोडी ऊर्जा शेष रह गयी है,
उनके लिए एकमात्र काम-वासना का द्वार ही खुला है।

साधारणत हम सोचते हैं कि कामुक व्यक्ति बडा ऊर्जावान् होता होगा,
जो कि बिलकुल गलत बात है।
अति ऊर्जावान् व्यक्ति कामुक कभी नही हो सकता,
क्योकि तब उसकी जीवन-शक्ति ऊपर की ओर यात्रा करने लगती है।
कामुकता भी शक्ति है, पर बहुत अल्प मात्रा की।
उससे तुम ऊपर नही उठ सकते, सिर्फ नीचे ही जा सकते हो।
उस हालत मे सिर्फ अधोगमन ही एकमात्र सम्भावना बचती है—
क्योकि उर्जा कही-न-कही जाना चाहेगी,
वह एक जगह स्थिर नही रह सकती।

ऊर्जा का स्वभाव ही गतिशील रहना है।
इसलिए अगर वह ऊपर नही जा सकती, तो नीचे जायेगी ही।
इससे अन्यथा कोई उपाय नही है।
अगर वह ऊपर की ओर यात्रा करने लगती है,
तो नीचे का द्वार स्वत धीरे-धीरे बन्द होने लगता है।

इसलिए श्वास पर ध्यान देकर
तुम अपनी सारी क्रियाओ को इनकार कर देते हो।
और इस प्रकार ऊर्जा इकट्ठी होती है।

दूसरी बात सिर्फ होश और जागरूकता जीवन-ऊर्जा को ओजपूर्ण बनाने मे काफी मदद पहुँचाती है।
यह ठीक वैसा ही है, जैसे कि अगर तुम पर एक समूह का ध्यान पडे तो तुम ज्यादा जीवन्त महसूस करते हो और आलस्य विदा हो जाता है— क्यो ?

नेता अपने को बडा प्राणवान् अनुभव करते है,
क्योकि एक समूह का बराबर उन्हे ध्यान मिलता रहता है,
उनकी ओर देखने मात्र से उन्हे शक्ति उपलब्ध होती है।
जिस क्षण मे लोगो का ध्यान मिलना उन्हे बन्द होता है,
वे मृतप्राय हो जाते है।
नेता होने का जो सुख है, वह यही है कि समूह द्वारा ध्यान दिये जाने से वे ज्यादा जीवन्त और प्रफुल्लित अनुभव करते हैं।

ऐसा इसलिए होता है,
क्योकि जब बहुत-से लोग तुम्हारी ओर देख रहे हो,
तो तुम स्वय सावधान और जागरूक हो जाते हो।
वही जागरूकता जीवन-ऊर्जा को उत्पन्न करती है।
इसलिए जब तुम अपनी श्वास के प्रति जागरूक होते हो,
तो उससे तुम्हारी जीवन-ऊर्जा का भीतरी स्रोत स्पर्शित होता है।

इसलिए जब निद्रा समाप्त हो जाये तो चिन्तित मत होना।
और अगर किसी ऐसी चीज की वजह से तुम्हारे मन मे उथल-पुथल होने लगे,
जिसके बारे मे तुमने कभी सोचा ही नही था,
तो भी इसके लिए चिन्ता मत करना, उसे साक्षीपूर्वक देखते रहना।
अचेतन मे जो कुछ दबा पडा है,
वह मुक्त होगा और मन की ऊपरी सतह पर आयेगा।
बाहर फेंके जाने के पहले, उसे मन के चेतन भाग मे आना ही होगा।

अगर उसे दबा दोगे, तो वह फिर अचेतन मे चला जायेगा।
अगर उसका अनुसरण करोगे, तो उससे व्यर्थ ही शक्ति का अपव्यय होगा।

इसलिए निरन्तर श्वास पर ध्यान रखना और पृष्ठभूमि मे जो कुछ भी दिखाई पडता या अनुभव मे आता हो, उसे उदासीन-भाव से देखते रहना।
उन चीजो के प्रति बिलकुल उदासीनता का भाव रखना,
मानो उनसे तुम्हे कोई मतलब ही नही है।
और श्वास पर हमेशा ध्यान रखना।
श्वास पर ध्यान तुम्हारी जागरूकता का केन्द्र होगा
और परिधि पर बहुत-सारी घटनाएँ घटती रहेगी।
वहाँ पर विचार होगे, कम्पन होगे लेकिन परिधि पर ही, केन्द्र पर नही,
केन्द्र पर तो सिर्फ श्वास पर ध्यान रखना है।
जैसे कि तुम मुझे सुन रहे हो और मेरी आवाज तुम तक पहुँच रही है।
पर यह आवाज मूल ध्यान-क्षेत्र के अन्दर नही है,
तुम मुझे सुन रहे हो, यही केन्द्र पर है।
आवाज तो परिधि पर, बाहरी सतह पर सुनी जा रही है।
अवचेतन आवाज़ को सुन रहा है,
तुम इस तथ्य के प्रति चेतन हो सकते हो।
जब तुम इसके प्रति चेतन नही हो, तो अवचेतन का इस पर भी ध्यान है,
यह वहाँ है।

बहुत-सी चीजे तुम्हारे ध्यान मे आएँगी।
वैसी चीजे, जो कि मूर्खतापूर्ण प्रतीत होगी।
जो अतर्क्य, अविश्वसनीय, काल्पनिक, दुःस्वप्न आदि प्रतीत होगी।
पर तुम अपनी श्वास को ही देखते रहना—
और उन मूर्खतापूर्ण चीजो को उभरने देना, उनके प्रति, बस उदासीन रहना।
ठीक उसी तरह, जैसे कि सडक पर अनेको लोग गुज़र रहे हैं—
और तुम भी उस रास्ते से गुज़र रहे हो,
पर उन सबो से तुम्हे कोई प्रयोजन नही है।

और तब उन भाव-चित्रो से तुम मुक्त हो जाओगे, उनका रेचन हो जायेगा।

और प्रथम सप्ताह के बाद
तुम पर एक बिलकुल ही नयी शान्ति का आविर्भाव होगा।
क्योकि जब तक अचेतन का पूरा निष्कासन नही हो जाता है,
हम कभी भी पूर्ण मौन को अनुभव नही कर पाते।
जिस क्षण यह अचेतन निष्कासन के बाद हलका होता है,
उसके बाद अचेतन के भीतर कोई शोरगुल नही बच रहता है।

उदासी या विषाद का कोई भाव गहरे अचेतन मे कही दबा पडा होगा,
तो वह बाहर आयेगा और तुमको बिलकुल आन्दोलित और उद्विग्न कर देगा।
वह मात्र एक विचार नही होगा, बल्कि वह तुम्हारी भावदशा होगी।
बहुत सारी चित्त-दशाएँ उभरेगी।
कभी बडी प्रफुल्लता का अनुभव होगा, तो कभी उदासी और ऊब का।
ये भावदशाएँ हैं।

तो जिस तरह विचारो के प्रति तुम उदासीन रहे हो,
उसी तरह इन भावदशाओ के प्रति भी उदासीन रहना,
उन्हे आने-जाने देना, वे स्वत आएँगे और जाएँगे।
उनके चलते कोई चिन्ता करने की जरूरत नही है।
वे भी अवचेतन मे दबे है और उनका निष्कासन होगा।
तब उसके बाद कुछ अज्ञात अनुभवो की घटनाएँ घटेंगी।

इस प्रयोग मे बहुत-कुछ सम्भव है।
हर व्यक्ति को अलग-अलग अनुभव होगे।
लेकिन जो कुछ भी हो, भयभीत मत होना।
भयभीत होने की ज़रा भी आवश्यकता नही है।

उदाहरण के लिए तुम्हे अनुभव हो सकता है कि तुम मर रहे हो।
और अनुभव इतना तीव्र और स्पष्ट प्रतीत होगा
कि और दूसरी कोई सम्भावना ही नही दिखाई पडेगी।
उसे समग्र-भाव से स्वीकार कर लेना।

विचार, भावदशाएँ, अनुभव—

ये सब बडे तीव्र और सत्य प्रतीत होंगे, उन्हे स्वीकार कर लेना।
अगर अनुभव हो कि मृत्यु आ रही है,
तो उसका स्वागत करना और श्वास पर ध्यान रखना।

अनुभूतियो के प्रति उदासीन रहना कठिन है,
पर विचारो और भावदशाओ के प्रति तुम उदासीन रह सकते हो।
यह सब घटित होगा।
ऐसा लगेगा कि मृत्यु आ रही है—
अब सिर्फ एक क्षण की बात है कि तुम मरोगे।
यह इतना तीव्र होगा कि चारो ओर से यह तुममे प्रवेश करेगा।
हर चीज इस घटना के लिए तत्पर और सहयोगी प्रतीत होगी और इससे निकलने का कोई रास्ता नही सूझेगा।
इसलिए इसे स्वीकार कर लो, इसका स्वागत करो।
और जिस क्षण तुम इसका स्वागत करते हो,
तुम इसके प्रति उदासीन रहते हो।
अगर इससे लडने और इसे रोकने की कोशिश करते हो,
तो हर चीज विकृत हो जायेगी।

मृत्यु का अनुभव होगा।
कभी-कभी लगेगा कि तुम अस्वस्थ हो गये हो।
तुम वस्तुत बीमार हुए नही हो, यह अस्वस्थता का भाव भी अवचेतन मे दबा है जो कि अब स्वतन्त्र होकर निष्कासित हो रहा है।
इसलिए बहुत तरह की बीमारियो का अनुभव होगा,
जो एक क्षण पहले बिलकुल अज्ञात थी।
इनके प्रति भी उदासीनता का भाव रखो और श्वास पर ध्यान बनाये रखो।
किसी भी विचार, गतिविधि, भाव या घटना मे
श्वास पर ध्यान अवश्य रहना चाहिए।

प्रथम सप्ताह के बाद कुछ मानसिक अनुभूतियाँ होगी।
शरीर काफी विशाल लग सकता है या बिलकुल छोटा।

कभी ऐसा भी प्रतीत हो सकता है कि शरीर है ही नही !
इस शरीर-शून्यता के बोध से भयभीत न होना।
कभी ऐसे क्षण आ सकते हैं कि तुम महसूस ही नही कर पाओ
कि तुम्हारा शरीर कहाँ पर है !
कभी-कभी शरीर तुम्हारे सामने दिखाई पड सकता है—
बैठा हुआ या लेटा हुआ !
पर इससे भयभीत मत होना।
बिजली के झटके-जैसा भी कभी अनुभव हो सकता है।

प्रत्येक बार जब कोई नया चक्र खुलता है,
तो 'बिजली के झटके सदृश' अनुभव होगा
और पूरा शरीर आन्दोलित हो उठेगा।
इसमे कभी बाधा नही डालना, बल्कि इन प्रतिक्रियाओ के साथ सहयोग करना।
इसमे अवरोध पैदा करने का अर्थ होगा कि तुम स्वय के विरोध मे चले गये हो।
कम्पन, झटका, बिजली का झटका, गर्मी, ठण्डक—
कुछ भी चक्रो पर अनुभव हो, उनके साथ सहयोग करना,
तुमने स्वय इन्हे आमन्त्रित किया है, इसलिए रुकावट मत डालना।
नही तो तुम्हारी ऊर्जा व्यर्थ के अन्तर्संघर्ष मे उलझ जायेगी।

दूसरे सप्ताह के बाद जो भी घटनाएँ घट रही हैं,
उन्हे उदासीन-भाव से देखते हुए अगर तुम श्वास पर ध्यान देते रहे,
सारी मानसिक अनुभूतियो को अगर स्वीकार करते हुए सहयोग किया,
तो तीसरे सप्ताह मे पूर्ण शून्यता का बोध होगा।
मानो हर चीज मिट गयी हो, अनस्तित्व मे समा गयी हो।
सिर्फ शून्यता ही शेष रह जायेगी।

तीसरे सप्ताह के बाद तुम्हे लगेगा, 'इससे बाहर न जायें'।
और पहले सप्ताह के बाद लगेगा कि 'प्रयोग को छोडकर चले जायें'।
प्रथम सप्ताह के बाद यह भाव इतना जोर पकडता है कि लगता है
कि इन नासमझियो से कब निकल भागें।
पर इस पर कभी ध्यान मत देना, इक्कीस दिनो के लिए कही नही जाना है।

(एक बार निश्चयपूर्वक अपने मन से कह दो
कि इक्कीस दिनो के बाद ही अब बाहर जाना सम्भव है, उसके पहले नही।
और तीसरे सप्ताह के बाद ऐसा भाव उठेगा कि बाहर न जायें।)

तो दो-चार दिनो तक इस प्रयोग को जारी रख सकते हो।
तबीयत हो तो लम्बे अरसे के लिए रुक सकते हो।
इक्कीस दिनो के बाद वाले ये दिन बडे लाभप्रद होते हैं।
अगर तुम आनन्द से भरे हो,
और ऐसा लगता हो कि इसमे कोई व्यवधान न हो,
सिर्फ शून्यता और आनन्द मे ही रहने की इच्छा हो,
तो प्रयोग-अवधि को थोडा बढा ले सकते हो—
पर इक्कीस दिनो के पहले तो किसी हालत मे भी इसे नही तोडना है।

(कोई अनुभव जिसे तुम लिख लेना चाहते हो,
उसे एकान्त से बाहर आने के बाद ही लिखना, उससे पूर्व नही।)
प्रयोग के बाद एक-दो दिन समय निकालकर बैठना
और सारी चीजे, जो चाहते हो, लिखना।
इक्कीस दिन के अन्दर तो कुछ भी नही लिखना है।
कुछ याद करने की कोशिश मत करना।
जो कुछ भी भीतर घटित हुआ है,
वह स्मृति मे पूरी स्पष्टता के साथ अंकित रहेगा,
क्योकि मन इसे स्मरण करने की भी कोशिश नही किया है।

तुम किसी चीज को भूल सकते हो,
अगर उसे याद करने की कोशिश किये हो,
पर तुम वैसी चीजो को नही भूल सकते,
जिन्हे याद करने के लिए कभी प्रयास नही किये हो।
तब वह अपने समग्र रूप मे तुम्हारी स्मृति मे आयेगी।
और अगर नही आती है,
तो इसका अर्थ है कि वह किसी काम की नही होगी।
इसलिए उसे छोड ही देना।

अभी व्यर्थ की चीजो की स्मृतियाँ तुममे भरी हैं।
तुम उसे याद करने की कोशिश करते हो जो कि व्यर्थ है—
पर तुम समझते नही हो कि वह व्यर्थ है।

मन स्वत ही कार्य करता है,
जो कुछ भी याद रखने योग्य है, वह सदा ही स्मरण रहता है।
इसलिए दिन, तारीख आदि कुछ भी याद करने की कोशिश मत करना,
उसकी कोई आवश्यकता नही है।
जो भी अनुभूतियाँ घटित हुई है, वह तुम सहज ही स्मरण कर पाओगे,
जो कुछ भी याद रखने योग्य है,
वह प्रयोग से बाहर आने के बाद भी तुम्हारे साथ होगा।
इसलिए जाओ और जितना जल्द हो सके इस प्रयोग मे उतरो।•

कभी-कभी लगता है कि श्वास रुक गयी है, ऐसा क्यो होता है ?

कभी-कभी तुम श्वास को अनुभव नही कर पाओगे।
ऐसा नही है कि श्वास चल ही नही रही है।
पर तुम अनुभव इसलिए नही कर पाते हो,
क्योकि वह इतनी लयबद्ध हो जाती है
कि तुम्हे लगता कि वह बिलकुल ठहर गयी है।

हम सिर्फ बीमारियो को ही अनुभव कर पाते हैं, स्वास्थ्य को नही।
जब तुम्हारे सिर मे दर्द होता है, तभी तुम्हे अपने सिर का पता चलता है।
उसी तरह से हमारी श्वास इतनी बेसुरी और अस्वाभाविक है
कि उसका हमे पता चलता है, वरना उसका अनुभव नही होता है।
यह जान लेना चाहिए कि स्वभाविक, शान्त और लयबद्ध होने के बाद भी
श्वास चलती रहती है, तब उसका सिर्फ पताभर नही चलता है।
पर श्वास-प्रश्वास जारी रहती है।

तुम्हे श्वास पर ध्यान देना है।
शुरू मे इसका अनुभव होगा,
पर धीरे-धीरे यह अनुभव कम होता चला जायेगा,

श्वास बडी सूक्ष्म होती चली जायेगी
और इसके साथ-साथ स्थूल श्वास पर
होश और जागरूकता भी कम होती चली जायेगी,
क्योंकि अब तुम्हे सूक्ष्म प्राण पर ध्यान देना है।
और तब जैसे ही लगे कि श्वास नही चल रही है,
तो इस 'अ-श्वास' के प्रति ही होशपूर्ण रहना,
इस समस्वरता के प्रति ही होशपूर्ण रहना।
तब होश—और जागरूकता और गहराई मे प्रवेश करेगी।

इसके लिए तुम्हे कोई प्रयास नही करना है—बस, तुम जागरूक रहो।
और अगर ऐसा लगे कि श्वास का अनुभव नही हो रहा है,
तो इस 'अ-श्वास' की स्थिति के प्रति भी जागे रहो।
यह बड़े ही आनन्द का क्षण होगा।
जागरूकता जितनी सूक्ष्म होती जायेगी,
उतना ही यह प्राण-शरीर के तल तक पहुँचती है।
तुम हरदम प्राण-शरीर मे स्थित नही हो।

जब तुम अपनी श्वास पर ध्यान देते हो, तो सबसे पहले शारीरिक श्वास—
यानी स्थूल-श्वास के प्रति ही जागे होते हो।
यह जागरूकता स्थूल-श्वास के प्रति है।
तुम अपने स्थूल-शरीर और श्वसन-यन्त्र के प्रति जाग्रत हो,
पर अब श्वास का यात्रा-पथ पीछे छूट रहा है।
जब यह सूक्ष्म और सगीतपूर्ण हो जाता है,
तब तुम प्राण-शरीर के प्रति जाग्रत होते हो, पर श्वास वहाँ क्रियाशील है।
हाँ, यह उतना ज्यादा नही होगा—
क्योंकि उतनी अधिक श्वास की अब जरूरत नही है।

अगर तुम क्रोध मे हो तो ज्यादा ऑक्सीजन की जरूरत पडती है,
क्रोध मे नही हो तो उतनी अधिक ऑक्सीजन की आवश्यकता नही रहती है।
अगर काम-वेग से पीडित हो तो ज्यादा ऑक्सीजन की जरूरत पडती है—
और इसीलिए श्वास तीव्र हो जाती है—

इसलिए आवश्यकतानुसार श्वास की मात्रा घटती-बढ़ती रहती है।
अगर तुम पूर्ण मौन हो, तो श्वास की ज़रा भी आवश्यकता नहीं है।
इसलिए श्वास उतनी ही चलेगी, जितने की आवश्यकता है—
न्यून-से-न्यून, जितने से ज़िन्दा रह सकते हो।
और ज़िन्दा रहने के लिए बहुत थोड़े की ही ज़रूरत है।
इसलिए इस स्थिति को समझ लो।

तुम्हें एक स्थिति का पता था, जब श्वास का अनुभव होता था।
अब एक दूसरी स्थिति के प्रति चैतन्य हो,
जब कि श्वास के चलने का अनुभव नहीं हो रहा है।
जो भी स्थिति आये, उसके प्रति जागरूक रहो।
होश सदा ही मौजूद रहना चाहिए।
अगर कुछ भी अनुभव नहीं हो रहा हो,
तो इस 'गैर-अनुभव' की स्थिति के प्रति भी जागे रहो।
कुछ भी अनुभव नहीं हो रहा है, पर इसका भी होश तुम्हें रहना चाहिए।
तुम्हें सो नहीं जाना है, क्योंकि यही क्षण है जिसकी तुम अपेक्षा कर रहे थे।
अगर सो जाते हो तो वह सप्ताह बेकार गया।

जो कुछ भी घटित हो उसके प्रति सचेत रहो,
श्वास नहीं चल रही है, इसके प्रति भी होश कायम रखो।
और पूर्ण शान्ति में श्वास का अस्तित्व प्राय: नहीं रहता है।
बिलकुल थोड़े की ज़रूरत है, और उतनी ही श्वास चलती है।
मात्रा बहुत घट गयी है और लयबद्धता बढ़ गयी है,
इसलिए श्वास का पता नहीं चलता है।

१२. स्वप्न में सचेतन प्रवेश की दो विधियाँ

भगवान्श्री, इसे स्पष्ट करने की कृपा करें कि कौन-से ऐसे पहलू हैं जिससे कि स्वप्न देखते समय भी होश कायम रखा जा सके ?

यह उन सभी के लिए महत्त्वपूर्ण सवाल है, जिनको ध्यान मे अभिरुचि है,
क्योकि ध्यान वस्तुत स्वप्न-प्रक्रिया का अतिक्रमण किया जाना है।
तुम सतत स्वप्न देख रहे हो—न सिर्फ रात्रि मे, न सिर्फ निद्रा मे—
बल्कि तुम पूरे दिन स्वप्न मे हो।

यह पहली बात ख्याल मे ले लेनी चाहिए कि जब तुम जागे हुए हो,
उस समय भी तुम स्वप्न देखते हो।
दिन मे किसी समय आँखे बन्द कर लो, शरीर को शिथिल होने दो—
और तुम पाओगे कि भीतर स्वप्न चल रहा है।
यह कभी बन्द नही होता है, यह सिर्फ दैनिक कार्यों के चलते दबा रहता है।
यह दिन मे 'आकाश के तारो जैसा' है।

रात्रि मे तारे दिखाई पड़ते है, दिन मे दिखाई नही पड़ते।
पर वे वहाँ हमेशा ही मौजूद हैं।
वे सिर्फ सूर्य की रोशनी की वजह से अदृश्य हो गये है।
अगर तुम एक गहरे कुँए के भीतर चले जाओ,
तो दिन मे भी वहा से तारो को देख सकते हो।
तारो को देखने के लिए अन्धेरे की एक खास मात्रा की जरूरत है,
तारे आकाश मे सदा ही मौजूद है।
ऐसा नही है कि वे रात्रि मे ही होते है और दिन मे नही होते हैं,
वे हमेशा वहाँ होते है।

रात्रि मे तुम उन्हे आसानी से देख सकते हो, पर दिन मे वे नही दिखाई पड़ते;
क्योकि सूर्य की रोशनी बाधा डालती है।
यही स्वप्न के सम्बन्ध मे भी सत्य है।
ऐसा नही है कि जब तुम सोये होते हो, सिर्फ तभी स्वप्न देखते हो।
सोने की हालत मे स्वप्न आसानी से अनुभव मे आते है,

क्योकि रोजमर्रा के बाह्य क्रिया-कलाप बन्द हो जाने के कारण
भीतरी क्रिया-कलाप देखे और अनुभव किये जा सकते हैं।
सबेरे जब तुम निद्रा से उठते हो, भीतर स्वप्न-प्रक्रिया जारी रहती है—
तुम्हारे क्रियाशील हो जाने के बाद भी।
ये रोजमर्रा के क्रिया-कलाप सिर्फ स्वप्न को दबा देते है,
पर स्वप्न जारी रहता है।
अपनी आँखें बन्द कर लो, आरामकुर्सी पर शरीर को शिथिल छोड दो—
और अचानक तुम स्वप्न अनुभव कर सकते हो।
तारे वहाँ मौजूद हैं, वे कभी नही गये थे।
स्वप्न वहाँ हमेशा मौजूद है, उसकी गतिविधि सतत है।

दूसरी बात अगर स्वप्न हर क्षण चल रहा हो,
तो तुम्हे वस्तुत जागा हुआ नही कहा जा सकता।
रात्रि मे तुम ज्यादा सोये हुए हो और दिन मे थोडा कम।
अन्तर सापेक्ष है, क्योकि स्वप्न अगर हर क्षण विद्यमान है,
तो इस स्थिति को जाग्रत की सज्ञा नही दी जा सकती है।
जाग्रत तो तुम तभी कहे जा सकते हो,
जब भीतर कोई स्वप्न शेष नही रह गया हो।

हम बुद्ध को प्रज्ञावान्, परम-जाग्रत कहते है।
यह जागृति क्या है?
यह जागृति सभी आन्तरिक स्वप्नो की गतिविधियो का ठहर जाना है
अब भीतर कोई स्वप्न नही रहा,
भीतर गति करते है, पर वहाँ अब कोई स्वप्न नही है।
यह ऐसा ही है, मानो आकाश मे अब कोई तारे नही रहे,
शुद्ध आकाश ही रह गया है।
जब स्वप्न-जाल समाप्त हो जाते हैं, तो तुम शुद्ध आकाश बन जाते हो।
इस शुद्धता, इस निर्दोषिता,
इस स्वप्न-शून्य चेतना को ही प्रज्ञा या समाधि कहते है।

सदियो से सारे ससार मे अध्यात्म ने—पूर्व एव पश्चिम दोनो ही ने

घोषणा की है कि मनुष्य सोया हुआ है।
जीसस यही कहते हैं, बुद्ध यही कहते है,
उपनिषद् के ऋषि इसी की उद्घोषणा करते है कि मनुष्य सुषुप्तावस्था मे है।
इसलिए जब तुम रात्रि मे सोये हुए हो, तो अपेक्षाकृत ज्यादा सोये हुए हो,
दिन मे अपेक्षाकृत कम सोये हुए हो।
इस सदी मे गुर्जियेफ ने इस तथ्य पर बहुत जोर डाला है
कि मनुष्य सोया हुआ है।
उसने कहा है कि मनुष्य एक प्रकार की निद्रा ही है।
हरएक गहरी नीद मे है।

ऐसा कहने का क्या कारण है?
कारण यह है कि तुम नही जानते,
तुम स्मरण नही कर सकते कि तुम कौन हो।
क्या तुम्हे पता है कि तुम कौन हो?

रास्ते मे कोई तुम्हे मिल जाये और उससे पूछो कि वह कौन है—
और वह कोई जवाब न दे पाये, तो तुम उसके सम्बन्ध मे क्या सोचोगे?
तुम समझोगे कि या तो वह पागल है, नशे मे है—या सोया हुआ है।
अगर 'वह कौन है' का उत्तर नही दे पाये,
तो तुम उसके सम्बन्ध मे क्या अनुमान करने जा रहे हो?

अध्यात्म के मार्ग पर प्रत्येक उसी हालत मे है।
तुम जवाब नही दे सकते कि तुम कौन हो।
यह पहला अर्थ हुआ जब गुर्जियेफ या जीसस
या अन्य कोई कहता है कि मनुष्य सोया हुआ है।

तुम अपने प्रति चेतन नही हो।
तुम स्वय को नही जानते।
तुमने स्वय का कभी साक्षात्कार नही किया है।
बाह्य जगत् की बहुत सारी चीजो को तुम जानते हो,
पर स्वय के बारे मे तुम्हे कुछ पता नही है।

यह आत्म-अज्ञान ही निद्रा है।
और जब तक यह स्वप्न पूर्णरूप से समाप्त न हो जाये,
तुम स्वयं अपने प्रति जाग्रत् नही हो सकते।
पर एकाएक स्वप्न अगर रुक भी जाये,
तो तुम अपने को पहचानने मे समर्थ नही हो पाओगे,
तुम बेहोशी अनुभव करोगे—और घबराहट भी।
तुम चेष्टा करोगे पुनः स्वप्न मे जाने की, क्योकि वह ज्ञात है,
उससे तुम अच्छी तरह परिचित हो, उसमे तुम्हारा तालमेल बैठा हुआ है।

यह कैसे घटित हो?
इसके लिए एक मार्ग है।
विशेषकर जेन-परम्परा मे जो 'सडन-पाथ' के नाम से जाना जाता है।
इन एक सौ बारह विधियो मे बहुत-सी ऐसी विधियाँ हैं
जो तुम्हे अचानक जाग्रत कर दे।
लेकिन वह बहुत ज्यादा हो जायेगा
और तुम इसे झेलने मे समर्थ न हो पाओगे।
तुम टूट जाओगे, और मर भी सकते हो,
क्योकि स्वप्न के साथ तुम इतने लम्बे अरसे तक जीये हो
कि स्वप्न-शून्य स्थिति मे तुम कौन हो,
इसका तुम्हे स्मरण ही नही रह गया है।
तुम्हे स्मरण ही नही रह गया है।

अगर यह पूरा विश्व खो जाये और तुम अकेले छूट जाओ,
तो यह इतना बडा आघात होगा कि तुम मर जाओगे।
यही घटित होगा अगर तुम्हारी चेतना से सारे स्वप्न तिरोहित हो जाएँ।
तुम्हारा ससार विदा हो जायेगा, क्योकि स्वप्न ही तुम्हारा ससार था।
हम वस्तुतः ससार मे नही रहते है।
हमारे लिए ससार वस्तुतः बाह्य चीजो का जोड नही है,
बल्कि हमारे स्वप्नो का जोड है।
इसलिए प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी स्वप्न-जगत् मे जीता है।

ध्यान रहे, यह एक ही ससार नही है जिसकी हम चर्चा करते रहते हैं।
भौगोलिक अर्थ मे तो ऐसा है,
पर मनोवैज्ञानिक अर्थ मे जितने मन है उतने जगत् है।
हरएक मन का अपना एक जगत् है।
और अगर तुम्हारा स्वप्न बिल्कुल तिरोहित हो जाये,
तो तुम्हारा जगत् भी तिरोहित हो जाता है।
बिना स्वप्न के तुम्हारे लिए जीना मुश्किल है।
यही कारण हे कि 'अकस्मात-विधि'[1] समान्यत प्रयोग मे नही लायी जाती है,
सिर्फ 'क्रमिक-विधि'[2] ही इस्तेमाल की जाती है।

इसे ध्यान मे रखना चाहिए कि 'क्रमिक-विधि' का उपयोग इसलिए नही
किया जाता है कि इसकी कोई अनिवार्यता है।
तुम इसी क्षण समाधि मे छलॉग लगा सकते हो, कोई अवरोध नही है।
कभी कोई अवरोध नही रहा है, तुम सदा से ही वही प्रज्ञा हो।
पर उसका अचानक साक्षात्कार खतरनाक और भयानक सिद्ध हो सकता है।
तुम उसे झेलने मे अपने को सक्षम नही पाओगे,
वह तुम्हारे लिए बहुत ज्यादा हो जायेगी।

क्रमिक विधि का प्रयोग होता है—
इसलिए नही कि ज्ञान के लिए समय की आवश्यकता है,
ज्ञान के लिए समय की कोई आवश्यकता नही है।
फिर क्रमिक विधि कौन-सी भूमिका अदा करती है?

वह वस्तुत तुम्हे सीधा ज्ञान प्राप्ति के लिए मदद नही करती,
वह तो सिर्फ तम सत्य को सहन कर सको,
इसके लिए तुम्हे तैयारभर करती है।
वह तुम्हे इस योग्य और इतना शक्तिशाली बनाती है,
कि जब घटना घटे तो तुम उसे झेल पाओ।
इस स्वप्न का, इस गहरी निद्रा का कैसे अतिक्रमण किया जाये,
इसके लिए दो आसान विधियो की चर्चा आज मै करूँगा।

---

१. सडन मेथड (Sudden Method) २ ग्रेजुअल मेथड (Gradual Method)

पहली विधि

पहली विधि है
तुम ऐसा व्यवहार करना शुरू करो मानो यह पूरा जगत् एक स्वप्न-मात्र है—
जो कुछ भी तुम कर रहे हो, स्मरण रखो कि यह एक स्वप्न है।
जब तुम भोजन कर रहे हो, या टहल रहे हो,
तो उस समय स्मरण रखो कि यह एक स्वप्न है।
जब तक तुम जागे हुए हो,
अपने मन को हर क्षण इस स्मरण से भरे रहने दो कि हर चीज स्वप्न है।

इसे स्मरण रखना,
स्वप्न को बदलने के लिए कुछ मत करना,
सिर्फ इसे सतत स्मरण रखना।
तीन सप्ताह निरन्तर यह स्मरण रखने की कोशिश करो
कि तुम जो कुछ भी कर रहे हो वह स्वप्न है।
शुरू मे यह कठिन मालूम पडेगा,
मन के पुराने ढाँचे मे तुम बार-बार गिर पडोगे और सोचने लगोगे
कि यह सत्य है।
तुम्हे अपने को सतत जागरूक रखना पडेगा
ताकि ध्यान बना रहे कि यह स्वप्न है।

अगर तीन सप्ताह तक लगातार इस धारणा को बरकरार रखते हो,
तो चौथे या पाँचवे सप्ताह मे, किसी वक्त—स्वप्न देखते वक्त—
अचानक तुम्हे स्मरण आयेगा कि यह स्वप्न है।

स्वप्न मे सचेतन रूप से प्रवेश की यह एक विधि है।
और अगर रात्रि मे स्वप्न देखते वक्त
तुम यह स्मरण रख सकते हो कि यह स्वप्न है,
तो दिन मे स्मरण रखने मे कि यह भी एक स्वप्न है,
किसी श्रम की आवश्यकता नही पडेगी, तब तुम इसे जानोगे।

प्रारम्भ मे, जब तुम इसका अभ्यास करोगे,
तो इस पर विश्वास करके चलना पडेगा,
इस विश्वास के साथ प्रारम्भ करना पडेगा कि 'यह स्वप्न है'।
लेकिन, रात स्वप्न मे जब तुम स्मरण कर सकोगे कि 'यह स्वप्न है',
तो फिर तुम्हारे लिए यह एक तथ्य हो जायेगा।
तब सवेरे जागते वक्त तुम्हे ऐसा नही लगेगा कि तुम नीद से जाग रहे हो,
बल्कि ऐसा लगेगा कि तुम एक स्वप्न से जाग रहे हो
और दूसरे मे प्रवेश कर रहे हो।
तब यह एक तथ्य हो जायेगा और चौबीस घन्टे इस स्वप्न का बोध बना रहेगा,
तब तुम अपने को स्व-केन्द्र पर स्थित पाओगे।
तुम अगर स्वप्न देख रहे हो, और उन्हे स्वप्न ही समझ रहे हो,
तो स्वप्न-द्रष्टा भी तुम्हारे अनुभव मे आने लगेगा।

दूसरी विधि

गुर्जियेफ ने इस दूसरी विधि का उपयोग किया था।
यह दूसरी विधि इस्लाम की सूफी-परम्परा से आती है।
उन लोगो ने इस पर बडी गहराई तक काम किया है।

इस दूसरी विधि मे हर क्षण यह स्मरण रखना है कि 'मै हूँ'।
जो कुछ भी तुम कर रहे हो, उसमे इस स्मरण को जोड लो कि 'मै हूँ'।
तुम पानी पी रहे हो या भोजन कर रहे हो—स्मरण रखो 'मै हूँ'।
खाते जाओ और स्मरण भी कायम रखो कि 'मै हूँ'।
इसे भूलना मत।

यह थोडा कठिन है।
कारण कि पहले ही तुम समझते हो कि तुम्हे पता है कि तुम कौन हो।
तो फिर इसे स्मरण किये जाने की क्या जरूरत है?
तुम कभी स्मरण नही करते, पर यह एक बहुत शक्तिशाली प्रयोग है।
जब टहल रहे हो, तो स्मरण रखो 'मै हूँ'।

टहलना जारी रखो, पर निरन्तर इस आत्म-स्मरण—
'मै हूँ—मैं हूँ' पर भी ख्याल रखो।
इसे भूलना मत।

तुम मुझे सुन रहे हो
अभी इसे यही करके देखो।
तुम मुझे सुन रहे हो, तो इसे सुनते जाना, साथ ही
'मै हूँ—मै हूँ' इस स्मरण पर भी ध्यान रखना।
इस 'मै हूँ' को अपनी चेतना का, होश का अग बन जाने दो।

यह बड़ा ही कठिन है।
लगातार एक मिनट तक भी तुम यह स्मरण कायम नही रख सकते हो।
कभी कोशिश करो
अपनी घड़ी को अपने सामने रख लो और सेकेन्डवाली सूई को देखो।
हर सेकेन्ड को होशपूर्वक देखते जाओ—
एक सेकेन्ड, दो सेकेन्ड, तीन सेकेन्ड
इस तरह देखते जाओ।

इसम दो चीजे करो
सेकेन्डवाली सूई की गति को भी देखो और लगातार 'मैं हूँ—मैं हूँ'—
इसे भी स्मरण करते रहो,
हर सेकेन्ड के साथ 'मै हूँ' का भी स्मरण करते जाओ।
पाँच-छह सेकेन्ड के अन्दर ही तुम अनुभव करोगे कि तुम भूल गये हो।
अचानक तुम्हे याद आयेगा कि बहुत सेकेन्ड गुजर गये।
और 'मै हूँ' का मै स्मरण नही रख सका।

लगातार एक मिनट तक भी स्मरण रख पाना एक चमत्कार है।
और अगर एक मिनट तक स्मरण रख सकते हो
तो यह विधि तुम्हारे काम की है, तब इसे करो।
इस प्रयोग के द्वारा तुम स्वप्न के पार जाने मे समर्थ हो पाओगे—
और यह जानने मे भी कि स्वप्न स्वप्न है।

यह विधि कैसे काम करती है ?
अगर तुम पूरे दिन 'मैं हूँ' का स्मरण करते हो,
तो यह तुम्हारी नीद मे भी प्रवेश कर जायेगा ।
और जब तुम स्वप्न देख रहे होओगे,
तो लगातार यह भी स्मरण बना रहेगा कि 'मै हूँ' ।
अगर स्वप्न मे तुम स्मरण रख पाते हो कि 'मैं हूँ',
तो अचानक स्वप्न स्वप्न हो जाते है, सत्य नही प्रतीत होते ।
तब स्वप्न तुम्हे धोखा नही दे सकता,
तब स्वप्न सत्य-जैसा प्रतीत नही हो सकता है—यही मेकेनिज्म है ।

स्वप्न सत्य-जैसा भासता है, क्योकि आत्म-स्मरण को तुम चूक रहे हो,
तुम 'मै हूँ' के स्मरण को चूक रहे हो ।
अगर स्वय का स्मरण नही है, तो स्वप्न सत्य प्रतीत होने लगते हैं,
अगर स्वय का स्मरण है, तो तथाकथित सत्य स्वप्न हो जाते है ।
यही स्वप्न और सत्य मे अन्तर है ।
ध्यान करनेवाले व्यक्ति के लिए
या ध्यान के विज्ञान के लिए इन दोनो मे एकमात्र यही अन्तर है -
अगर तुम हो, तो सम्पूर्ण जगत् स्वप्नवत है,
अगर तुम स्वय नही हो, तो स्वप्न सत्य हो जाते है ।
इसलिए या तो तुम हो सकते हो, या स्वप्न हो सकता है,
दोनो एकसाथ नही हो सकते हैं ।

इसलिए, पहली बात, 'मै हूँ' के स्मरण को निरन्तर जारी रखो ।
सिर्फ 'मैं हूँ'—इतना ही ।
'राम' या 'श्याम' मत कहो ।
किसी नाम का उपयोग मत करो, क्योकि तुम वह नही हो ।
सिर्फ उपयोग करो 'मै हूँ' ।
हर क्रिया-कलाप मे इस प्रयोग को जोडो और इसे अनुभव करो ।

भीतर जितने तुम वास्तविक हो जाते हो,
तुम्हारे चारो ओर बाहर का जगत् उतना ही मिथ्या हो जाता है,

'मैं' सत्य हो जाता है और 'जगत्' मिथ्या हो जाता है।
या तो 'जगत्' सत्य है, या 'मैं' सत्य है, दोनो एकसाथ सत्य नही हो सकते।
अभी तुम अनुभव करते हो कि तुम एक स्वप्न हो, इसलिए 'जगत्' सत्य है।
जरा जोर को बदलो, 'स्वय' सत्य बनो और 'जगत्' असत्य हो जायेगा।

गुर्जियेफ ने इस विधि पर निरन्तर काम किया।
उसके प्रमुख शिष्य पी० डी० ऑस्पेन्स्की ने वर्णन किया है कि जब गुर्जियेफ उस पर इस विधि का उपयोग कर रहा था—
और उसने तीन महीने तक लगातार 'मै हूँ-मै हूँ' के स्मरण का प्रयोग किया,
तो तीन महीने के बाद सब-कुछ ठहर गया,
विचार, स्वप्न—सब बन्द हो गये,
सिर्फ एक ही ध्वनि रह गयी—
शाश्वत, सगीतनुमा—'मै हूँ, मै हूँ'।

लेकिन तब यह कोई प्रयोग की बात नही रही, यह एक सहज क्रिया थी।
तब गुर्जियेफ ने ऑस्पेन्स्की को कमरे के बाहर बुलाया—
तीन महीने तक वह कमरे मे बन्द रखा गया था।
और उस बीच बाहर जाने का उसे आदेश नही था—
और गुर्जियेफ उसे बाहर रास्ते पर ले गया।
ऑस्पेन्स्की ने अपनी डायरी मे लिखा है

"तब पहली बार मै समझ पाया कि जीसस के कथन
कि 'मनुष्य एक निद्रा है' का क्या अर्थ है।
मुझे लगा कि पूरा नगर ही सोया हुआ है!
लोग सडको पर चल रहे है निद्रा की हालत मे!
दूकानदार नीद मे ही चीजे बेच रहा है!
ग्राहक नीद मे ही खरीद रहा!
पूरा नगर सोया हुआ था।
मैंने गुर्जियेफ की ओर देखा—
सिर्फ वहीभर जगा था, बाकी पूरा शहर सोया था।"

वे क्रोध मे थे, झगड रहे थे, प्रेम कर रहे थे, खरीद-फरोख्त—
हर चीज नीद मे ही कर रहे थे।

ऑस्पेन्स्की कहता है :
"अब मै उनका चेहरा देख सका, उनकी आँखें देख सका—
और पाया कि वे निद्रा मे है, वे वही मौजूद नही है।
अन्दर का केन्द्र ही खोया हुआ है, वे वहाँ मौजूद नही है।"

ऑस्पेन्स्की ने गुर्जियेफ को कहा कि "शहर के लोगो को क्या हो गया है?
प्रत्येक सोया हुआ प्रतीत होता है!"

गुर्जियेफ ने कहा
"शहर को कुछ नही हुआ है, कुछ तुम मे ही घटित हुआ है,
तुम्हारी बेहोशी कुछ टूटी है, शहर जैसा-का-तैसा है।
यह वही जगह है जहाँ तीन माह पूर्व तुम घूमा करते थे,
पर तुम यह देख नही सकते थे कि लोग सोये हुए है,
क्योकि तुम खुद ही सोये हुए थे।
अब तुम देख सकते हो, क्योकि तुममे थोडी जागरूकता का आविर्भाव हुआ है।
'मै हूँ' के स्मरण का प्रयोग लगातार तीन महीने तक करने से
बहुत थोडी-सी मात्रा मे तुम होशपूर्ण हुए हो।
तुम्हारी चेतना का कुछ हिस्सा स्वप्न-प्रक्रिया का अतिक्रमण कर गया है।
यही कारण है कि तुम अब देख सकते हो कि हरएक निद्रा मे है,
हरएक चलता फिरता है बेहोशी मे—मानो एक सम्मोहन मे हो।"

पर यह किसी को भी घटित होगा।
अगर तुम स्वयं का स्मरण कर सके,
तब तुम जानोगे कि किसी को भी स्वयं का स्मरण नही है,
और इसी हालत मे सारे लोग चल-फिर रहे है—
पूरा ससार ही सोया हुआ है।

पर जब तक तुम जागे हुए हो, तभी से शुरू करो,
हर क्षण 'मै हू' का स्मरण रखो।

मेरा मतलब यह नही है कि 'मै हूँ' शब्द को रटते रहना है,
बल्कि वैसा अनुभव करना है।

स्नान कर रहे हो तो अनुभव करो 'मै हूँ'।
ठण्डे जल का स्पर्श होने दो, ठण्डे जल की शीतलता का अनुभव होने दो—
और साथ ही 'मै हूँ' का स्मरण भी।

ध्यान रहे, मै यह नही कह रहा हूँ कि 'मै हूँ' शब्द की पुनरावृत्ति करते जाना है।
तुम इसे दोहरा सकते हो, पर इससे तुममे कोई होश का आविर्भाव नही होगा।
पुनरावृत्ति तुम्हारी निद्रा को और गहरी बना सकती है।
कुछ लोग हैं, जो वहन शब्दो को दुहरा रहे,
वे 'राम-राम' का जाप करते रहते हैं।
इस तरह बिना होश के, बिना जागरूकता के 'राम-राम' दोहराये चले जाने
से यह नीद लानेवाली दवाओं-जैसा काम करने लगता है।

'मै हूँ' का स्मरण कोई शाब्दिक मन्त्र नही है,
उसे बोलकर दोहराते नही रहना है।
उसे अनुभव करो और अपने होने के प्रति संवेदनशील रहो।
जब खा रहे हो तो सिर्फ खाना ही मत, स्वयं को खाते हुए अनुभव भी करो।
यह अनुभव, यह संवेदनशीलता
तुम्हारे मन की गहरी-से-गहरी पर्तो मे समा जानी चाहिए।
तब, एक दिन अचानक
तुम अपने को पहली बार अपने केन्द्र पर जागे हुए पाओगे।

और तब सारा जगत् स्वप्न हो जाता है।
और तब तुम जान सकते हो कि तुम्हारे स्वप्न, स्वप्न है।
और इसे जानते ही स्वप्न तत्काल बन्द हो जाते हैं।
वे तभी तक जारी रह सकते है, जब तक वे सत्य प्रतीत होते हो।
स्वप्न तत्काल बन्द हो जाते है, जब वे असत्य दिखाई पड़ने लगते है।
और एक बार स्वप्न के रुकने पर तुम बिलकुल दूसरे आदमी हो जाते हो।
पुराना आदमी मर चुका, सोया हुआ आदमी मर चुका,

पहली बार तुम होश से भरते हो।
तब पहली बार इस सोये हुए जगत् मे तुम जागे हुए होते हो।
तुम बुद्ध हो जाते हो—परम-जाग्रत।

इस जागरण के बाद कोई दु ख नही है।
इस जागरण के बाद कोई मृत्यु नही है।
इस जागरण के बाद अब कोई भय नही।
तुम पहली बार हर चीज से मुक्त होते हो—
परम स्वतन्त्रता को उपलब्ध होते हो।
घृणा, क्रोध, लालच—सभी गिर जाते हैं, तुम प्रेम हो जाते हो।
प्यारे नही, तुम बस प्रेम ही बन जाते हो।

१३. आत्मोपलब्धि की पांच तान्त्रिक विधियाँ

"विज्ञान भैरव तन्त्र"— तन्त्र-विद्या का अति प्राचीन व दुर्लभ ग्रन्थ है।
भगवान्श्री रजनीश के शब्दों मे :
"इस ग्रन्थ से अद्भुत ग्रन्थ इस पृथ्वी पर दूसरा नहीं है।"

'विज्ञान भैरव तन्त्र' मे भगवान् शिव ने अपनी प्रिया पार्वती को
आत्मोपलब्धि की एक सौ बारह विधियाँ बतायी हैं।

उन पर ही १९७२-७३ मे भगवान्श्री ने अंग्रेजी भाषा में अस्सी प्रवचन देकर
दूसरी बार इस परम विद्या का अनावरण किया है।

उन अस्सी प्रवचनों में से चुनकर, एक अमृत-प्रवचन का हिन्दी रूपान्तर,
इस पुस्तक मे दिया जा रहा है।

विज्ञान भैरव के पांच सूत्र

पांचवाँ

भृकुटियो के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने करें।
फिर सहस्रार तक रूप को श्वास-तत्त्व से, प्राण से भरने दे।
वहाँ वह प्रकाश की तरह बरसेगा।

छठा

सासारिक कामो मे लगे हुए, अवधान को दो श्वासो के बीच टिकाएँ।
इस अभ्यास से थोडे दिनो मे ही नया जन्म होगा।

सातवाँ :

ललाट के मध्य मे सूक्ष्म श्वास को, प्राण को टिकाएँ।
जब वह सोने के क्षण मे हृदय तक पहुँच जाएगा,
तब स्वप्न और स्वय मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा।

आठवाँ

आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलो पर केन्द्रित होकर
ज्ञाता को जान लें।

नवाँ

मृतवत लेट रहे।
क्रोध से क्षुब्ध होकर उनमे ठहरे रहे।
या पुतलियो को घुमाये बिना एकटक घूरते रहे।
या कुछ चूसें और चूसना बन जाएँ।

पाँचवी विधि शिवनेत्र खोलने की

"भृकुटियो के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने करें।
"फिर सहस्रार तक रूप को श्वास-तत्व मे, प्राण से भरने दें।
"वहाँ वह प्रकाश की तरह बरसेगा।"

यह विधि बहुत गहरी विधियो मे से एक है,
इसे समझने की कोशिश करे।

"भृकुटिया के बीच अवधान

आधुनिक शरीर-शास्त्र कहता है,
वैज्ञानिक शोध कहती है कि दो भृकुटियो के बीच जो ग्रन्थि है,
वह शरीर का सबसे रहस्यपूर्ण भाग है,
जिसका नाम पाइनिअल ग्रन्थि है।
यही तिब्बतियो की 'तीसरी-आँख' है और यही 'शिवनेत्र' है—
तन्त्र के शिव का 'त्रिनेत्र'।

दो आँखो के बीच एक तीसरी-आँख भी है, लेकिन यह सक्रिय नही है।
यह है, और यह किसी भी समय सक्रिय हो सकती है।
निसर्गत यह सक्रिय नही है।
इसको सक्रिय करने के लिए इसके सम्बन्ध मे आपको कुछ करना पडेगा।
यह अन्धी नही है, सिर्फ बन्द है।

यह विधि— तीसरी-आँख खोलने की विधि है।

"भृकुटियो के बीच अवधान

आँखें बन्द कर लें और तब दोनो आँखो को भृकुटियो के बीच स्थिर करें।
आँखो को बन्द रखते हुए ठीक बीच मे दृष्टि को स्थिर करें—
मानो कि दोनो आँखो मे आप देख रहे हो—
और समग्र अवधान को वही लगा दें।

यह विधि एकाग्र होने की सबसे सरल विधियो मे है।
शरीर के किसी दूसरे भाग मे इतनी आसानी से आप अवधान को नही
उपलब्ध हो सकते।
यह ग्रन्थि अवधान को अपने मे समाहित करने मे कुशल है।
यदि आप इस पर अवधान देंगे,
तो आपकी दोनो आँखे तीसरी-आँख से सम्मोहित हो जाएँगी।
वे थिर हो जाएगी, वे वहाँ से हिल न सकेंगी।
यदि आप शरीर के किसी दूसरे हिस्से पर अवधान दे तो वहाँ कठिनाई होगी।
तीसरी-आँख अवधान को पकड लेती है, अवधान को मजबूर-सा कर देती है।
अवधान के लिए चुम्बक का काम करती है।

इसलिए दुनियाभर की सभी विधियो मे इसका समावेश किया गया है।
अवधान को प्रशिक्षित करने मे यह सरलतम है,
क्योकि इसमे आप ही चेष्टा नही करते, यह ग्रन्थि भी आपकी मदद करती है।
यह चुम्बकीय है, आपके अवधान को यह बलपूर्वक खीच लेती है।
यह उसे समाहित करती है।
तन्त्र के पुराने ग्रन्थो मे कहा गया है कि अवधान तीसरी-आँख का भोजन है।
यह भूखी है, जन्मो-जन्मो से भूखी रही है।
जब आप इसे अवधान देते है, यह जीवित हो उठती है।
जीवित हो उठती है, क्योकि उसे भोजन मिल गया।
और जब आप जान लेगे कि अवधान इसका भोजन है—
जान लेगे कि आपके अवधान को यह चुम्बक की तरह खीच लेती है—
तब अवधान कठिन नही रह जाएगा, सिर्फ सही बिन्दु को जानना है।

इसलिए आँख बन्द कर लें और दोनो आँखो को बीच मे घूमने दे—
और उस बिन्दु को अनुभव करे।

जब आप उस बिन्दु के करीब होगे, अचानक आपकी आँखें थिर हो जाएँगी। और जब उन्हे हिलाना कठिन हो जाए, तब जानें कि सही बिन्दु मिल गया।

"भृकुटियो के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने करें।"

अगर यह अवधान प्राप्त हो जाए
तो पहली बार एक अद्भुत बात आपके अनुभव मे आएगी
पहली बार आप देखेंगे कि आपके विचार आपके सामने चल रहे है,
आप साक्षी हो जाएँगे।
जैसे सिनेमा के परदे पर दृश्य देखते है, वैसे आप देखेंगे—
विचार आ रहे है और आप साक्षी है।
एक बार आपका अवधान त्रिनेत्र-केन्द्र पर स्थिर हो जाए,
आप तुरन्त विचारो के साक्षी हो जाएँगे।

आमतौर से आप साक्षी नही होते, आप विचारो के साथ तादात्म्य कर लेते हैं।
यदि क्रोध है तो आप क्रोध हो जाते है।
यदि एक विचार चलता है तो उसके साक्षी होने की बजाए
आप विचार के साथ एक हो जाते है,
उससे तादात्म्य कर साथ-साथ चलने लगते है।
आप विचार ही बन जाते है, विचार का रूप ले लेते हैं।
जब कामवासना होती है तब आप कामवासना बन जाते हैं,
जब क्रोध उठता है तब क्रोध बन जाते है,
और जब लोभ आता है, तब लोभ हो बन जाते है।
कोई भी विचार आपके साथ एकात्म हो जाता है
और उसके और आपके बीच अवकाश नही रहता।

जब आप अपनी खिडकी से आकाश को या राह चलते लोगो को देखते हैं,
तब आप उनसे तादात्म्य नही करते,
तब आप अलग होते है, मात्र दर्शक रहते है—बिलकुल अलग।
वैसे ही, अब जब क्रोध आता है तब आप उसे विषय की तरह देखते हैं,
अब आप यह नही सोचते कि मुझे क्रोध हुआ,

आप यही अनुभव करते है कि आप क्रोध से घिरे हैं,
क्रोध की एक बदली आपके चारो ओर घिर गयी है।
और जब आप खुद क्रोध नही रहे, तब क्रोध नपुसक हो जाता है,
तब वह आपको नही प्रभावित कर सकता, अब आप अस्पर्शित रह जाते हैं।
क्रोध आता है और जाता हे, और आप अपने मे केन्द्रित रहते है।

लेकिन तीसरी-आँख पर स्थिर होने हो आप एकाएक साक्षी हो जाते हैं।
तीसरी-आँख के जरिए आप साक्षी बनते हैं।
इस शिवनेत्र के द्वारा आप विचारो को बैठे देख सकते हैं—
जैसे आसमान पर तिरते बादलो को, या राह चलते लोगो को देखते हैं।
यह पाँचवी विधि साक्षित्व को प्राप्त करने की विधि हे।

"भृकुटियो के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने करें।"
अब अपने विचारो को देखे, विचारो का साक्षात्कार करे।

"फिर सहस्रार तक रूप को श्वास-तत्त्व से, प्राण से भरने दे।
वहाँ वह प्रकाश की तरह बरसेगा।"

जब अवधान भृकुटियो के बीच शिवनेत्र के केन्द्र पर स्थिर होता है,
तब दो चीजें घटित होती हैं।
एक कि आप एकाएक साक्षी बन जाते है।
और यही चीज दो ढगो से हो सकती हे
एक, आप साक्षी हो जाएँ तो आप तीसरी-आँख पर स्थिर हो जाएँगे,
साक्षी हो, जो भी हो रहा है उसके साक्षी हो।

आप बीमार हैं, शरीर मे पीडा है, आपको दुःख और सन्ताप है—
जो भी हो, आप उसके साक्षी रहे,
जो भी हो उससे तादात्म्य न करे, बस साक्षी रहे— दर्शकभर।
और यदि साक्षित्व सम्भव हो जाए तो आप तीसरे-नेत्र पर स्थिर हो जाएँगे।
दूसरा ठीक इससे उलटा भी हो सकता है
यदि आप तीसरी-आँख पर स्थिर हो जाएँ तो आप साक्षी हो जाएँगे।
ये दोनो एक ही बात है।

इसलिए, पहली बात
तीसरी-आँख पर केन्द्रित होते ही साक्षी आत्मा का उदय होगा,
अब आप अपने विचारों का सामना कर सकते हैं।
और दूसरी बात
और अब आप श्वास-प्रश्वास के सूक्ष्म व कोमल
तरंगों को भी अनुभव कर सकते है,
अब आप श्वसन के रूप को ही नहीं,
उसके तत्त्व को, सार को, प्राण को भी समझ सकते हैं।

इसका प्रभाव अनुभव किया जा सकता है।
जब आप किसी प्राणवान् व्यक्ति के पास होते हैं,
आप अपने भीतर भी किसी शक्ति को उगते देखते हैं।
और जब किसी बीमार के पास होते है,
आपको लगता है कि आप चूसे जा रहे हैं,
आपके भीतर से कुछ निकाला जा रहा है।
जब आप अस्पताल जाते हैं, तब थके-थके क्यों अनुभव करते हैं?
वहाँ चारों ओर से आप चूसे जाते हैं।
अस्पताल का पूरा माहौल बीमार होता है और वहाँ सब किसी को
अधिक प्राण की, अधिक जीवनशक्ति की जरूरत है।
इसलिए वहाँ जाकर अचानक आपका प्राण आपसे बहने लगता है।

जब आप भीड़ में होते हैं, आप घुटन क्यों महसूस करते हैं?
इसलिए कि वहाँ आपका प्राण चूसा जाने लगता है।
और जब आप प्रातःकाल अकेले आकाश के बीच या
किसी वृक्ष के नीचे होते हैं,
तब फिर अचानक आप अपने में किसी शक्ति का,
प्राण का उदय अनुभव करते हैं।
प्रत्येक को एक खास मात्रा में अवकाश की जरूरत है।
और जब वह अवकाश नहीं मिलता है, आपको घुटन महसूस होती है।

पहले यह समझने की कोशिश करें कि 'रूप' और 'श्वास-तत्त्व' का क्या अर्थ है।
जब आप साँस लेते हैं, तब सिर्फ वायु की ही साँस नही लेते।
वैज्ञानिक तो यही कहते हैं कि आप वायु की ही साँस लेते हैं—
जिसमे ऑक्सीजन, हायड्रोजन तथा अन्य तत्त्व रहते है।
वे कहते हैं कि आप वायु की साँस लेते हैं।
लेकिन तन्त्र कहता है कि हवा तो मात्र वाहन है, असली चीज नही।
दरअसल आप प्राण की साँस लेते है।
हवा तो माध्यमभर है, प्राण उसका सत्व है, सार है।
आप न सिर्फ हवा की, बल्कि प्राण की साँस लेते है।

तीसरी-आँख पर केन्द्रित होकर आप श्वास के सार-तत्त्व को—
श्वास नही, प्राण को देख सकते हैं।
और अगर आप प्राण देख सकें तो आप उस बिन्दु पर पहुँच गए
जहाँ से छलाँग लग सकती है, क्रान्ति घटित हो सकती है।

सूत्र कहता है "सहस्रार तक रूप को प्राण से भर जाने दें।"
और जब आपको प्राण का एहसास हो,
तब आप कल्पना करें कि आपका सिर प्राण से भर गया है।
सिर्फ कल्पना करें, किसी प्रयत्न की जरूरत नही है।

यह सूत्र कहता है कि जब आप भृकुटियो के बीच स्थिर है
और प्राण को अनुभव करते हैं, तब रूप को भरने दें।
अब कल्पना करें कि प्राण आपके पूरे मस्तिष्क को भर रहा है—
विशेषकर सहस्रार को जो सर्वोच्च मनस- केन्द्र है।
उस क्षण आप कल्पना करे और वह भर जाएगा।
कल्पना करें कि वह प्राण आपके सहस्रार से प्रकाश की तरह बरसे,
और वह बरसने लगेगा।
और उस प्रकाश की वर्षा मे आप ताज़े हो जाएँगे,
आपका पुनर्जन्म हो जाएगा, आप बिलकुल नये हो जाएँगे।
आन्तरिक जन्म का यही अर्थ है।

यहाँ दो बातें है।
एक, तीसरी-आँख पर केन्द्रित होकर आपकी कल्पना पुसत्व को,
शुद्धि को उपलब्ध हो जाती है।
यही कारण है कि शुद्धता पर, पवित्रता पर इतना बल दिया गया है।
इस साधना मे उतरने के पहले शुद्ध बनें।
तन्त्र के लिए शुद्धि कोई नैतिक धारणा नही है।
शुद्धि इसलिए अर्थपूर्ण है कि यदि आप तीसरी-आँख पर स्थिर हुए
और आपका मन अशुद्ध रहा,
तो आपकी कल्पना खतरनाक सिद्ध हो सकती है—
आपके लिए भी और दूसरो के लिए भी।
यदि आप किसी की हत्या करने की सोच रहे हैं,
उसका महज विचार भी मन मे है,
तो सिर्फ कल्पना से उस आदमी की मृत्यु घटित हो जाएगी।
यही कारण है कि शुद्धता पर इतना जोर दिया जाता है।

कई बार आपने हत्या करने की सोची है,
लेकिन भाग्य से वहाँ कल्पना ने काम नही किया।
यदि वह काम करे, यदि वह तुरन्त वास्तविक हो जाए
तो वह दूसरो के लिए ही नही, आपके लिए भी खतरनाक सिद्ध होगी।
क्योकि कितनी ही बार आपने आत्महत्या करने की भी सोची है।
अगर मन तीसरी-आँख पर केन्द्रित है
तो आत्महत्या का विचार भी आत्महत्या बन जाएगा।
आपको विचार बदलने का भी समय नही मिलेगा।
वह तुरन्त घटित हो जाएगी।

सो अब आप तीसरे-नेत्र पर केन्द्रित हो जाएँ,
तब कल्पना करें कि सहस्रार से प्राण बरस रहा है,
जैसे कि आप किसी वृक्ष के नीचे बैठे है और फूल बरस रहे है,
या आप आकाश के नीचे है और कोई बदली बरसने लगी,
या सुबह मे आप बैठे है और सूरज उग रहा है और उसकी किरणें बरसने लगी है।

कल्पना करें और तुरन्त आपके सहस्रार से प्रकाश की वर्षा होने लगेगी।
यह वर्षा मनुष्य को पुनर्निर्मित करती है, उसको नया जन्म दे जाती है।
तब उसका पुनर्जन्म हो जाता है।

छठी विधि · नया जन्म

"सासारिक कामो मे लगे हुए, अवधान को दो श्वासो के बीच टिकाएँ।
इस अभ्यास से थोडे ही दिनो मे नया जन्म होगा।"

"सासारिक कामो मे लगे हुए, अवधान को दो श्वासो के बीच टिकाएँ ।"

श्वासो को भूल जाएँ और उनके बीच मे अवधान को लगाएँ।
एक साँस भीतर आती है,
इसके पहले कि वह लौट जाए, उसे बाहर छोडा जाए—
वहाँ एक अन्तराल होता है।

"सासारिक कामो मे लगे हुए, अवधान को दो श्वासो के बीच टिकाएँ।
इस अभ्यास से थोडे ही दिनो मे नया जन्म होगा।"

लेकिन, इसको लगातार करना है,
यह छठी विधि निरन्तर करने की है।
इसलिए कहा गया है "सासारिक कामो मे लगे हुए।"
जो भी आप कर रहे हो उसमे अवधान को दो श्वासो के अन्तराल मे स्थिर रखें।
लेकिन कामकाज मे लगे हुए ही इसे साधना है।
इसे सासारिक कामो मे लगे हुए ही करना है, उनसे अलग होकर इसे न करें।
यह साधना ही तब करे, जब आप कुछ और काम कर रहे हो।
आप भोजन कर रहे हैं, खाये जाएँ और अन्तराल पर अवधान रखें,
आप चल रहे है, चलते जाएँ और अन्तराल पर अवधान को टिकाएँ,
आप सोने जा रहे है, लेटें और नीद को आने दें—
लेकिन आप अन्तराल के प्रति सजग रहे।

कामकाज क्यो ?

क्योंकि कामकाज मन को विकर्षित करता है।
कामकाज मे आपके अवधान को बार-बार बुलाना पडता है।
विकर्षित न हो, अन्तराल मे थिर रहे।
कामकाज भी न रुके, चलता रहे।
तब आपके अस्तित्व के दो तल हो जाएँगे करना और होना।
अस्तित्व के दो तल हो गए एक करने का जगत् और दूसरा होने का जगत्;
एक परिधि है और दूसरा केन्द्र।
परिधि पर काम करते रहे, रुके नही,
लेकिन केन्द्र पर भी सावधानी से काम करते रहे।

क्या होगा?
आपका कामकाज तब अभिनय हो जाएगा—
मानो आप कोई पार्ट अदा कर रहे हो।
उदाहरण के लिए, आप किसी नाटक मे खेल रहे हैं,
आप राम बने है या क्राइस्ट बने है।
यद्यपि आप राम या क्राइस्ट का अभिनय करते है,
तो भी आप स्वय बने रहते हैं।

केन्द्र पर आप जानते हैं कि आप कौन है और परिधि पर आप राम या
क्राइस्ट या किसी का पार्ट अदा करते रहते हैं।
आप जानते है, आप राम नही है, राम का अभिनयभर कर रहे हैं।
आप कौन है, आपको मालूम है।
आपका अवधान आपमे केन्द्रित है और आपका काम परिधि पर जारी है।

यदि इस विधि का अभ्यास हो तो पूरा जीवन एक लम्बा नाटक बन जाएगा।
आप एक अभिनेता होगे,
अभिनय भी करेंगे और सदा अन्तराल मे केन्द्रित रहेगे।
जब आप अन्तराल को भूल जाएँगे, तब आप अभिनेता नही रहेगे,
तब आप कर्त्ता हो जाएँगे।
तब वह नाटक नही रहेगा, उसे आप भूल से जीवन समझ लेंगे।
यही हम सबने किया है।

हर आदमी सोचता है कि वह जीवन जी रहा है।
यह जीवन नही है, यह तो एक रोल है, एक पार्ट है—
जो समाज ने, परिस्थितियो ने, सस्कृति ने, देश की परम्परा ने
आपको थमा दिया है और आप अभिनय कर रहे हैं।
और आप इस अभिनय के साथ तादात्म्य भी कर बैठे है।
उसी तादात्म्य को तोडने के लिए यह विधि है।

यह विधि, छठी विधि, आपको एक मनोनाट्य, एक खेल बना देती है।
आप दो श्वासो के अन्तराल मे थिर है और जीवन परिधि पर चल रहा है।
यदि आपका अवधान केन्द्र पर है तो आपका अवधान परिधि पर नहीं है,
परिधि पर जो है, वह उपावधान है,
वह कही आपके अवधान के पास घटित होता है।
आप उसे अनुभव कर सकते हैं, उसे जान सकते है, पर वह महत्त्वपूर्ण नही है।
वह ऐसा है, जैसे आपको नही घटित हो रहा है।

मैं इसे दोहराता हूँ
यदि आप इस छठी विधि की साधना करें
तो आपका समूचा जीवन ऐसा हो जाएगा
जैसे वह आपको न घटित होकर किसी दूसरे व्यक्ति को घटित हो रहा है।

सातवीं विधि मृत्यु पर अधिकार

"ललाट के मध्य मे सूक्ष्म श्वास (प्राण) को टिकाएँ।
जब वह सोने के क्षण मे हृदय तक पहुँच जाएगा,
तब स्वप्न और स्वय मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा।"

आप अधिकाधिक गहरी पर्तो मे प्रवेश कर रहे है।

"ललाट के मध्य मे सूक्ष्म श्वास (प्राण) को टिकाएँ।"
अगर आप तीसरी-आँख को जान गए है तो आप ललाट के मध्य मे स्थित
सूक्ष्म श्वास को, अदृश्य प्राण को भी जान गए।
और तब आप यह भी जान गए कि वह ऊर्जा, वह प्रकाश बरसता है।

"जब यह हृदय तक पहुँचती है,
जब यह वर्षा आपके हृदय तक पहुँचेगी,
• सोने के क्षण मे, स्वप्न और स्वय मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा।"

इस विधि को तीन हिस्सो मे ले।
एक श्वास के भीतर जो प्राण है, जो उसका सूक्ष्म, अदृश्य, अपार्थिव अंश है,
उसे आपको अनुभव करना होगा।
यह तब होता है, जब आप भृकुटियो के बीच अवधान को थिर रखते हैं।
तब यह आसानी से घटित होता है।
अगर आप अवधान को अन्तराल मे टिकाते है, तो भी घटित होता है,
लेकिन उतनी आसानी से नही।
यदि आप नाभि-केन्द्र के प्रति सजग हो,
जहाँ श्वास आता है और छूकर चला जाता है,
तो भी यह घटित होता है— पर कम आसानी से।
उस सूक्ष्म प्राण को जानने का सबसे सुगम मार्ग है, तीसरी-आँख मे थिर होना।
वैसे आप जहाँ भी केन्द्रित होगे, यह घटित होगा,
आप प्राण को प्रभावित होते अनुभव करेगे।

यदि आप प्राण को अपने भीतर प्रवाहित होता अनुभव कर सकें,
तो आप यह भी जान सकते है कि कब आपकी मृत्यु होगी।
यदि आप सूक्ष्म श्वास को, प्राण को महसूस करने लगे,
तो मरने के छह महीने पहले से आप अपनी आसन्न मृत्यु को जानने लगते हैं।

कैसे इतने सन्त अपनी मृत्यु की तिथि बता देते हे?

यह आसान है।
क्योकि यदि आप प्राण के प्रवाह को जानते है,
तो जब उसकी गति उलट जाएगी, तब उसको भी आप जान लेगे।
मृत्यु के छह महीने पहले प्रक्रिया उलट जाती है,
प्राण आपके बाहर जाने लगता है।
तब इसके प्रतिकूल श्वास—
वही श्वास भीतर लेने की बजाए बाहर निकलने लग जाता है।

आप इसे नही जान पाते है, क्योंकि आप उसके अदृश्य भाग को नही देखते;
केवल दृश्य को देखते है, केवल बाहर को देखते है।
और वाहन तो एक ही रहेगा।
अभी श्वास प्राण को भीतर ले जाता है और वहाँ छोड देता है।
फिर वाहन बाहर खाली वापस जाता है
और प्राण से पुन भरकर भीतर आता है।

इसलिए याद रखे कि भीतर आनेवाला श्वास और बाहर जानेवाला श्वास,
दोनो एक नही है।
वाहन के रूप मे तो पूरक श्वास और रेचक श्वास एक ही है,
लेकिन जहाँ पूरक प्राण से भरा होता है, वहाँ रेचक उससे रिक्त रहता है।
आपने प्राण को पी लिया और श्वास खाली हो गया।

जब आप मृत्यु के करीब होते हैं, तब उल्टी प्रक्रिया चालू होती है।
भीतर आनेवाला श्वास— पूरक— तब प्राण-विहीन हो जाता है,
रिक्त हो जाता है।
और चूँकि आपका शरीर अस्तित्व से प्राण को ग्रहण करने मे असमर्थ हो
जाता है, इसलिए आप मरते है।
आपकी जरूरत न रही।
पूरी प्रक्रिया उलट जाती है।
अब जब श्वास बाहर जाता है तब प्राण को साथ लिये बाहर जाता है।
इसलिए जिसने सूक्ष्म प्राण को जान लिया, वह अपनी मृत्यु का दिन भी
तुरन्त जान सकता है।
छह महीने पहले प्रक्रिया उलटी हो जाती है।

यह सूत्र बहुत-बहुत महत्त्वपूर्ण है।

"ललाट के मध्य से सूक्ष्म श्वास (प्राण) को टिकाएँ।
और जब सोने के क्षण मे वह हृदय तक पहुँच जाएगा,
तब स्वप्न और स्वय मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा।"

जब आप नीद मे उतर रहे हो, तभी इस विधि को साधना है,

अन्य समय मे नही।
ठीक सोने का समय इस विधि के अभ्यास के लिए उपयुक्त समय है।
आप नीद मे उतर रहे है,
धीरे-धीरे नीद आप पर हावी हो रही है,
क्षणो के भीतर आपकी चेतना लुप्त होगी, आप अचेत हो जाएँगे,
उस क्षण के आने के पहले आप अपने श्वास और उसके सूक्ष्म अश प्राण के
प्रति सजग हो जाएँ और उसे हृदय तक जाते हुए अनुभव करें।
अनुभव करते जाएँ कि यह हृदय तक आ रहा ह, हृदय तक आ रहा है।
प्राण हृदय मे होकर आपके शरीर मे प्रवेश करता है।
इसलिए यह अनुभव करते ही जाएँ कि प्राण हृदय तक आ रहा है।
और इस निरन्तर अनुभव के बीच ही नीद को आने दें।
आप अनुभव करते जाएँ और नीद को आने दे,
नीद को आपको अपने मे समेट लेने दे।

यदि यह सम्भव हो जाए,
कि आप अदृश्य प्राण को हृदय तक जाते देखे और नीद को भी,
तो आप अपने सपनो के प्रति भी सजग हो जाएँगे।
तब आपको बोध रहेगा कि आप स्वप्न देख रहे है।
आमतौर से हम नही जानते है कि हम स्वप्न देख रहे हैं।
जब आप सपना देखते है, तब आप समझते ह कि यह यथार्थ ही है,
वह भी तीसरी आँख के कारण ही सम्भव होता है।

क्या आपने किसी को नीद मे देखा है?
उसकी आँखे ऊपर चली जाती है और तीसरी-आँख मे थिर हो जाती है।
यदि नही देखा ह तो देखें।
आपका बच्चा सोया है, उसकी आँखे खोलकर देखे कि उसकी आँखें कहाँ हैं?
उसकी आँख की पुतलियाँ ऊपर को चढी हैं और त्रिनेत्र पर केन्द्रित है।
मैं कहता हूँ कि बच्चो को देखें, सयानो को नही।
सयाने भरोसे-योग्य नही है, क्योकि उनकी नीद गहरी नही होती,
वे सोचतेभर है कि सोये है।

बच्चों को देखें, उनकी आँखें ऊपर को चढ जाती हैं।

इसी तीसरी-आँख मे थिरता के कारण आप अपने सपनो को सच मानते हैं,
आप यह नही समझ सकते कि वे सपने है।
वह आप तब जानेंगे, जब सुबह जागेगे।
तब आप जानेगे कि मैं स्वप्न देख रहा था, लेकिन वह बाद का अनुदर्शन है।
स्वप्न मे आप नही समझ सकते कि यह स्वप्न है।
यदि समझ जाएँ तो दो तल हो गए स्वप्न है और आप सजग हैं, जागरूक हैं।

जो नीद मे स्वप्न के प्रति जाग सके, उसके लिए यह सूत्र चमत्कारिक है।
यह कहता है "स्वप्न पर और स्वय मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा।"
यदि आप स्वप्न के प्रति जागरूक हो जाएँ, तो आप दो काम कर सकते हैं.
एक कि आप स्वप्न पैदा कर सकते है।
आमतौर से आप स्वप्न नही पैदा कर सकते।
आदमी कितना नपुसक है!
आप स्वप्न भी नहीं पैदा कर सकते।
अगर आप कोई खास स्वप्न देखना चाहे तो नही देख सकते,
यह आपके हाथ मे नही है।
मनुष्य कितना शक्तिहीन है!
स्वप्न भी उससे नहीं निर्मित किये जा सकते।
आप स्वप्नो के शिकारभर है, उनके स्रष्टा नही।
स्वप्न आपमे घटित होता है, आप कुछ नही कर सकते।
न आप उसे रोक सकते हैं, न उसे पैदा कर सकते है।

लेकिन अगर आप यह देखते हुए नीद मे उतरें कि हृदय प्राण से भर रहा है,
निरन्तर हर श्वास मे प्राण से स्पर्शित हो रहा है,
तो आप अपने स्वप्नो के मालिक हो जाएँगे।
और यह मालकियत बहुत अनूठी है, दुर्लभ है।
तब आप जो स्वप्न भी देखना चाहे, देख सकते हैं।
ठीक सोने के समय भाव करें कि मैं यह स्वप्न देखना चाहता हूं,
और आप वह स्वप्न देख लेगे।

और सोते समय कहे कि मै फलाँ स्वप्न नही देखना चाहता,
और वह स्वप्न कभी आपके मन मे प्रवेश नही करेगा।

लेकिन अपने स्वप्नो के मालिक बनने का क्या प्रयोजन है ?
क्या यह व्यर्थ नही है ?

नही, यह व्यर्थ नही है।
एक बार आप स्वप्नो के मालिक हो गए, तो दुबारा आप स्वप्न नही देखेगे;
वह व्यर्थ हो गया।
जब आप स्वप्नो के मालिक होते है, स्वप्न बन्द हो जाते है,
उनकी जरूरत नही रह जाती।
और जब स्वप्न बन्द होते है, तब आपकी नीद का गुण-धर्म ही और होता है।
वह गुण-धर्म वही है, जो मृत्यु का है।

मृत्यु गहन नीद है।
अगर आपकी नीद मृत्यु की तरह गहरी हो जाए,
तो उसका अर्थ है कि सपने विदा हो गए।
सपने नीद को उथली बना देते है।
सपनो के चलते आप सतह पर ही घूमते रहते है।
सपनो मे उलझे रहने के कारण आपकी नीद उथली हो जाती है।
और जब सपने नही रहते
तब आप नीद के समुद्र मे उतर जाते है, उसकी गहराई छू लेते है।
वही मृत्यु है।

इस विधि के द्वारा पहले तो आप स्वप्नो के मालिक हो जाएँगे।
उसका अर्थ हुआ कि सपना बन्द हो जाएगा।
या यदि आप खुद सपना देखना चाहेगे तो देख भी सकते है।
लेकिन तब तक वह ऐच्छिक सपना होगा।
वह अनिवार्य नही रहेगा, वह आप पर लादा नही जाएगा,
आप उसके शिकार नही होगे।
और तब आपकी नीद का गुण-धर्म ठीक मृत्यु-जैसा हो जाएगा,

तब आप जानेंगे कि मृत्यु भी नींद है।

इसीलिए यह सूत्र कहता है
"नींद और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा।"
अब आप जानेंगे कि मृत्यु एक लम्बी नींद है,
और वह सहयोगी है—और सुन्दर भी।
क्योंकि वह आपको नवजीवन देती है, वह आपको सब-कुछ नया देती है।
फिर तो मृत्यु भी समाप्त हो जाती है,
स्वप्न के शेष होते ही मृत्यु समाप्त हो जाती है।

मृत्यु पर नियन्त्रण पाने, अधिकार पाने का दूसरा अर्थ भी है।
अगर आप समझ लें कि मृत्यु नींद है, तो आप उसको निर्देश दे सकते हैं।
और अगर आप अपने सपनों को निर्देश दे सकते हैं
तो मृत्यु को भी दे सकते हैं।
तब आप चुनाव कर सकते हैं कि कहाँ पैदा हों,
कब पैदा हों, किससे पैदा हों, और किस रूप में पैदा हों।
तब आप अपने जन्म के भी मालिक हो गये।

यह सूत्र कहता है "   स्वयं मृत्यु पर।"
तब कोई व्यक्ति अपने को एक विशेष तरह का जन्म भी दे सकता है,
विशेष तरह का जीवन भी दे सकता है।

हम लोग तो शिकार हैं।
हम नहीं जानते हैं कि क्यों जनमते हैं और क्यों मरते हैं?
कौन हमें निर्देशित करता है और क्यों?
कोई कारण नहीं दिखाई देता।
सब-कुछ अराजकता, आकस्मिकता-जैसा है।
ऐसा इसलिए है कि हम मालिक नहीं हैं।
एक बार मालिक हो जाएँ तो फिर ऐसा नहीं रहेगा।

आठवीं विधि : आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक

"आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलो पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लें।"

इन विधियो के बीच ज़रा-ज़रा भेद है, ज़रा-ज़रा रूपान्तरण है।
और यद्यपि विधियो मे वे ज़रा-ज़रा से हैं,
तो भी आपके लिए वे भेद बहुत है।
अकेला एक शब्द बहुत फर्क पैदा करता है ।
"आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलो पर केन्द्रित होकर . ।"

भीतर आनेवाले श्वास का एक सन्धि-स्थल है, जहाँ से वह लौटता है।
और बाहर जानेवाले श्वास का भी वैसा ही दूसरा सन्धि-स्थल है।
इन दो सन्धि-स्थलो
(उनकी चर्चा हम कर चुके है।)
के साथ यहाँ ज़रा-सा भेद किया गया है।
हालाँकि यह भेद विधि मे तो ज़रा-सा ही है,
लेकिन साधक के लिए बडा भेद है।
एक ही शर्त जोडी गयी है "आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक",
और पूरी विधि बदल जाती है।

इसके प्रथम रूप मे भक्ति का सवाल नही था।
वह मात्र वैज्ञानिक विधि थी।
आप प्रयोग करें और वह काम करेगी।
लेकिन लोग है जो ऐसी शुष्क, वैज्ञानिक विधियो पर काम नही करेंगे।
इसलिए जो हृदय की ओर झुके है, जो भक्ति के जगत् के है,
उनके लिए ज़रा-सा भेद किया गया है "आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलो पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान ले।"

अगर आप वैज्ञानिक रुझान के नही है,
अगर आपका मन वैज्ञानिक नही है तो आप इस विधि को प्रयोग मे लाएँ ।

आत्यन्तिक भक्ति, प्रेम, श्रद्धा के साथ
श्वास के दो सन्धि-स्थलो पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लें।
यह कैसे सम्भव होगा ?
भक्ति तो किसी के प्रति होती है, चाहे वे कृष्ण हो या क्राइस्ट।
लेकिन आपको स्वय के प्रति,
श्वास के दो सन्धि-स्थलो के प्रति भक्ति कैसे होगी ?
यह तत्त्व तो गैर-भक्तिवाला है।
लेकिन व्यक्ति-व्यक्ति पर निर्भर है।

तन्त्र का कहना है कि शरीर मन्दिर है।
आपका शरीर परमात्मा का मन्दिर है, उसका निवास-स्थान है।
इसलिए इसे मात्र अपना शरीर या एक वस्तु न मानें।
यह पवित्र है, धार्मिक है।
जब आप एक श्वास भीतर ले रहे हैं, तब आप ही श्वास नही ले रहे हैं,
आपके भीतर परमात्मा भी श्वास ले रहा है।
आप चलते-फिरते हैं
इसे इस तरह देखें आप नही, स्वय परमात्मा ही आपमे चल रहा है।
तब सब चीज पूरी तरह भक्तिपूर्ण हो जाती है।

अनेक सन्तो के बारे मे कहा जाता है कि वे अपने शरीर को प्रेम करते थे।
वे उसके साथ ऐसा व्यवहार करते थे,
मानो वे शरीर उनकी प्रेमिकाओ के रहे हो।
आप भी अपने शरीर को यह व्यवहार दे सकते हैं।
उसके साथ यन्त्रवत व्यवहार भी कर सकते हैं।
वह भी एक रुझान है, एक दृष्टि है।
आप इसे अपराधपूर्ण, पाप-भरा और गन्दा भी मान सकते हैं।
और इसे चमत्कार भी समझ सकते हैं,
परमात्मा का घर भी समझ सकते हैं।
यह आप पर निर्भर है।
यदि आप अपने शरीर को मन्दिर मान सकें,

तो यह विधि आपके काम आ सकती है
"आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक ।"

जब आप भोजन कर रहे हो, तब इसका प्रयोग करें।
यह न सोचे कि आप भोजन कर रहे है,
सोचे कि परमात्मा आपमे भोजन कर रहा है।
और तब परिवर्तन को देखे।
आप वही चीज खा रहे है,
आप ही खा रहे है, लेकिन तुरन्त सब-कुछ बदल जाता है।
अब आप परमात्मा को भोजन दे रहे है।
आप स्नान करते है, कितना मामूली, अदना काम है!
लेकिन दृष्टि बदल दे,
अनुभव करें कि आप अपने मे परमात्मा को स्नान करा रहे हैं।
तब यह विधि आसान होगी "आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलो पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लें।"

नवीं विधि मृतवत हो जाना

"मृतवत लेट रहे।
"क्रोध से क्षुब्ध होकर भी उसमे ही ठहरे रहे।
"या पुतलियो को घुमाये बिना घूरते रहे।
"या कुछ चूसे और चूसना बन जाएँ।"

"मृतवत लेट रहे ।"
प्रयोग करे कि आप एकाएक मर गए है।
शरीर को छोड दें, क्योंकि आप मर गए है।
मात्र कल्पना करें कि मैं मृत हूँ,
मैं शरीर को नही हिला सकता हूँ, आँख भी नही हिला सकता हूँ,
मै चीख भी नही सकता हूँ, रो भी नही सकता हूँ,
मै कुछ भी नही कर सकता हूँ, मैं मरा हुआ हूँ।
और तब देखे कि कैसा लगता है।

लेकिन अपने को धोखा मत दें।
आप शरीर को थोडा हिला सकते है।
नही, हिलाएँ नही।
यदि मच्छड भी आ जाए, तो भी शरीर को मृत ही समझें।

यह एक बहुत व्यवहृत विधि है, बहु-व्यवहृत विधि।
"मृतवत लेट रहे, क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमे ही ठहरे रहे।"

सही बात है कि जब आप मर रहे हो तो वह कोई सुख का क्षण नही होगा।
वह आनन्दपूर्ण नहीं हो सकता, जब आप देखते हो कि आप मर रहे हैं।
भय पकडेगा, मन मे क्रोध उठेगा, या विषाद, उदासी, शोक, सन्ताप—
कुछ भी पकड सकता है।
व्यक्ति-व्यक्ति मे फर्क होगा।

सूत्र कहता है "क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमे ही ठहरे रहे, स्थिर रहे।"
अगर आपको क्रोध घेरे तो उसमे ही स्थित रहे,
अगर उदासी घेरे तो उसमे भी।
भय, चिन्ता, कुछ भी हो, उसमे ही ठहरे रहे, डटे रहे।
आप मर गए हैं, फिर आप क्या कर सकते है?
इसलिए वैसे-के-वैसे स्थित रहे।
जो भी मन मे हो, उसे वैसा ही रहने दे, क्योकि शरीर तो मर चुका है।

यह ठहरना बहुत सुन्दर है।
अगर आप कुछ मिनटो के लिए भी ठहर गये
तो आप पाएँगे कि सब-कुछ बदल गया।
लेकिन हम हिलने लगते है।
यदि मन मे कोई आवेग उठता है, तो शरीर हिलने लगता है।
उदासी आती है, तो भी शरीर हिलता है।
इसे 'आवेग' इसीलिए कहते हैं कि यह शरीर मे वेग पैदा करता है।
मृतवत महसूस करें और आवेगो को शरीर हिलाने की इजाजत नही दें।
वे भी वहाँ रहे और आप भी रहे—थिर, मृतवत।

कुछ भी हो, पर हलचल नही हो, गति नही हो, बस, ठहरे रहे।

"या पुतलियो को घुमाये बिना घूरते रहे।"

यह—'या पुतलियो को घुमाये बिना घूरते रहे'—मेहर बाबा की विधि थी।
वर्षो वे अपने कमरे की छत को घूरते रहे, निरन्तर ताकते रहे।
वर्षो वे जमीन पर मृतवत पडे रहे और पुतलियो को,
आँखो को हिलाये बिना छत को एकटक देखते रहे।
ऐसा वे लगातार घन्टो, बिना कुछ किये, घूरते रहते थे,
टकटकी लगाकर देखते रहते थे।

आँखो से घूरना अच्छा है,
क्योकि उसमे आप फिर तीसरी-आँख मे स्थिर हो जाते हैं।
और एक बार आप तीसरी-आँख मे थिर हो गये,
तो चाहने पर भी आप पुतलियो को नही घुमा सकते।
वे भी थिर हो जाती हैं— अचल।

मेहर बाबा इसी घूरने के जरिए उपलब्ध हो गये।
और आप कहते है कि इन छोटे–छोटे अभ्यासो से क्या होगा!
लेकिन मेहर बाबा लगातार तीन वर्षो तक
बिना कुछ किये छत को घूरते रहे थे।
आप सिर्फ तीन मिनट के लिए ऐसी टकटकी लगाएँ
और आपको लगेगा कि तीन वर्ष गुजर गये!
तीन मिनट भी बहुत लम्बा समय मालूम पडेगे—
लगेगा कि समय नही चलता हे और घडी बन्द हो गयी है।
लेकिन मेहर बाबा घूरते ही रहे, घूरते ही रहे।
धीरे-धीरे विचार मिट गये, गति बन्द हो गयी।
और मेहर बाबा मात्र चेतना रह गये।
वे मात्र घूरना बन गये, टकटकी बन गये।
और तब वे आजीवन मौन रह गये।

टकटकी के द्वारा वे अपने भीतर इतने शान्त हो गये
कि उनके लिए फिर शब्द-रचना असम्भव हो गयी ।

"या पुतलियो को घुमाये बिना ताकते रहे ।
"या किसी चीज को चूसें और चूमना बन जाएँ ।"

यहाँ ज़रा-सा रूपान्तरण है ।
कुछ भी काम दे देगा ।
आप मर गये, यही काफी है ।
"क्रोध मे क्षुब्ध होकर उसमे ठहरे रहे ।"
केवल यह अंग एक विधि बन सकता है ।
आप क्रोध मे है, लेट रहे और क्रोध मे स्थित रहे, पडे रहे ।
इससे हटे नही, कुछ करें नही, स्थिर पडे रहे ।
कृष्णमूर्ति इसी की चर्चा किये चले जाते हैं ।
उनकी पूरी विधि इस एक चीज पर निर्भर है
"क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमे ठहरे रहे ।"

यदि आप क्रुद्ध हो और क्रुद्ध रहे उससे हिलें नही, हटें नही ।
और अगर आप वैसे ठहर सकें तो क्रोध चला जाएगा ।
और आप दूसरे आदमी होकर उससे निकलेंगे ।
और एक बार आपने क्रोध को, उससे आन्दोलित हुए बिना देख लिया
कि आप उसके मालिक हो गए ।

"या पुतलियो को हिलाये बिना एकटक घूरते रहे ।
"या किसी चीज को चूसें और चूसना बन जाएँ ।"

यह अन्तिम विधि शारीरिक है और प्रयोग मे सुगम है ।
क्योकि चूसना पहला काम है जो कि कोई बच्चा करता है ।
चूसना जीवन का पहला कृत्य है ।
बच्चा जब पैदा होता है, तब वह पहले रोता है ।
आपने यह जानने की कोशिश नही की होगी कि बच्चा क्यो रोता है ।

सच मे वह रोता नही है, वह रोता हुआ मालूम पडता है।
वह सिर्फ हवा को पी रहा है, चूस रहा है।
अगर वह नही रोये तो मिनटो के भीतर वह मर जायेग
क्योकि रोना हवा लेने का पहला प्रयत्न है।
जब वह पेट मे था, बच्चा साँस नही लेता था,
बिना साँस लिये वह जीता था।
वह वही क्रिया कर रहा था, जो भूमिगत समाधि लेने पर योगीजन करते हैं।
वह बिना साँस लिये प्राण को ग्रहण कर रहा था—
माँ से शुद्ध प्राण ही ग्रहण कर रहा था।

सूत्र कहता है "या किसी चीज को चूसें और चूसना बन जाएँ।"
किसी भी चीज को चूसे।
हवा को ही चूसे, लेकिन तब हवा को भूल जाएँ और चूसना ही बन जाएँ।
इसका क्या अर्थ हुआ ?

आप कुछ चूस रहे है, इसमे आप चूसनेवाले है, चोषण नही।
आप चोषण के पीछे खडे हैं।
यह सूत्र कहता है कि पीछे मत खडे रहे,
कृत्य मे सम्मिलित हो जाएँ और चोषण बन जाएँ।
किसी चीज से भी आप प्रयोग कर सकते हैं।
अगर आप दौड रहे है तो दौड—
दौडना ही बन जाए, दौडनेवाला न रहे।
दौडना बन जाए, दौड बन जाएँ और दौडनेवाले को भूल जाएँ।
अनुभव करे कि भीतर कोई दौडनेवाला नही है, मात्र दौडने की प्रक्रिया है।
वह प्रक्रिया आप है— सरिता-जैसी प्रक्रिया।
भीतर कोई नही है, भीतर सब शान्त है।
और केवल यह प्रक्रिया है।

चूसना, चोषण— अच्छा है, लेकिन आपको यह कठिन मालूम पडेगा,
क्योकि हम इसे बिलकुल भूल गये है।

यह कहना भी ठीक नहीं है कि बिलकुल भूल गये हैं,
क्योंकि हम उसका विकल्प तो निकालते ही रहते हैं।
माँ के स्तन की जगह सिगरेट ले लेनी है और आप उसे चूसते रहते हैं।
यह स्तन ही है— माँ का स्तन, माँ का चुचुक।
और जो गर्म धुआँ निकलता है, वह माँ का गर्म दूध है।

इसलिए छुटपन मे जिनको माँ के स्तन के पास उतना नही रहने दिया गया,
जितना वे चाहते थे, वे पीछे चलकर धूम्रपान करने लगते हैं।
यह विकल्प है।
और विकल्प से भी काम चल जायेगा।
इसलिए अगर आप सिगरेट पीते हैं, तो धूम्रपान ही बन जाएँ।
सिगरेट को भूल जाएँ, पीनेवाले को भूल जाएँ और धूम्रपान ही बन रहे।

एक विषय है जिसे आप चूसते हैं, एक विषयी है जो चूसता है,
और उसके बीच चूसने की, चोषण की प्रक्रिया है।
आप चोषण बन जाएँ, प्रक्रिया बन जाएँ।

इसे प्रयोग करें।
पहले कई चीजो से प्रयोग करना होगा और तब आप जानेंगे
कि आपके लिए क्या चीज सही है।
आप पानी पी रहे हैं।
ठंडा पानी भीतर जा रहा है।
आप पीना बन जाएँ।
पानी न पीएँ, पानी को भूल जाएँ, अपने को भूल जाएँ, अपनी प्यास को भी,
और मात्र पीना बन जाएँ, प्रक्रिया बन जाएँ।
प्रक्रिया मे ठण्डक है, स्पर्श है, प्रवेश है और पीना है— वही सब बन रहे।

क्या होगा? यदि आप चोषण बन जाएँ तो क्या होगा?

यदि आप चोषण बन जाएँ तो आप निर्दोष हो जाएँगे—
ठीक वैसा, जैसा प्रथम दिन जनमा हुआ शिशु होता है।

क्योंकि वह प्रथम प्रक्रिया है।
एक तरह से आप पीछे की ओर यात्रा करेंगे।
लेकिन उसकी ललक, लालसा भी तो है।
आदमी का पूरा अस्तित्व उस स्तन-पान के लिए लालायित है, तडपता है।
इसके लिए वह कई प्रयोग करता है, लेकिन कुछ भी काम नही आता,
क्योंकि मूल बिन्दु ही खो रहा है।
जब तक आप चूसना नही बन जाते, तब तक कुछ भी काम नही आयेगा।
इसलिए इसे प्रयोग मे लाएँ।

एक आदमी को मैंने यह विधि दी थी।
उसने कई विधियाँ प्रयोग की थी, तब वह मेरे पास आया।
उससे मैंने कहा
यदि मै समूचे ससार मे से केवल एक चीज ही तुम्हे चुनने को दूँ,
तो तुम क्या चुनोगे ?
और मैंने तुरन्त उसे यह भी कहा कि आँखें बन्द करो
और इस पर कुछ भी सोचे बिना मुझे बताओ।

जब वह डरने लगा, झिझकने लगा, तब मैंने कहा
न डरो और न झिझको, मुझे स्पष्ट बताओ।
उसने कहा यह तो बेहूदा मालूम पडता है,
लेकिन मेरे सामने एक स्तन उभर रहा है।
और यह कहकर वह अपराधी अनुभव करने लगा।
तब मैंने कहा मत अपराध अनुभव करो, स्तन मे गलत क्या है ?
सर्व-सुन्दर चीजो मे स्तन एक है, फिर अपराध-भाव क्यो ?

लेकिन उस आदमी ने कहा यह चीज तो मेरे लिए ग्रस्तता बन गयी है।
इसलिए अपनी विधि बताने के पहले आप कृपा कर यह बताएँ
कि मैं क्यो स्त्रियो के स्तनो मे इतना उत्सुक हूँ ?
जब भी मैं किसी स्त्री को देखता हूँ, पहले उसका स्तन ही मुझे दिखाई देता है।
शेष शरीर उतने महत्त्व का नही रहता।

और यह बात उसके साथ ही लागू नही है।
प्रत्येक के साथ, प्राय प्रत्येक के साथ यह लागू है।
और यह बिलकुल स्वाभाविक है,
क्योकि माँ का स्तन ही जगत् के साथ आदमी का पहला परिचय बनता है।
यह बुनियादी है।

जगत् के साथ पहला सम्पर्क माँ का स्तन बनता है।
यही कारण है कि स्तन मे इतना आकर्षण है, स्तन इतना सुन्दर लगता है,
उसमे एक चुम्बकीय शक्ति है।
वह चुम्बकीय शक्ति आपके अचेतन से आती है।
वह पहली चीज है जिसके साथ आप सम्पर्क मे आये।
और यह सम्पर्क मधुर था, बहुत मधुर था।
यह सुंदर लगा।
इसी ने भोजन दिया, शक्ति दी, प्रेम दिया, सब-कुछ दिया।
यह सम्पर्क कोमल ग्रहणशील और निमन्त्रण-जैसा था।
और यह मनुष्य के मन मे सदा वैसा ही बना रहा है।

इसलिए मैंने उस व्यक्ति से कहा कि अब मै आपको विधि दूंगा।
और यही विधि थी जो मैने उसे दी।
'किसी चीज को चूमो और चूमना बन जाओ।''

मैंने बताया कि ''आँखे बन्द कर लो और अपनी माँ का स्तन याद करो।
या और कोई स्तन जो तुम्हे पसन्द हो।
कल्पना करो और ऐसे चूमना शुरू करो कि यह असली स्तन है।
शुरू करो।''

उसने चूमना शुरू किया।
तीन दिनो के अन्दर वह इतनी तेजी से, इतने पागलपन के साथ चूसने लगा
और वह इसके साथ इतना मन्त्र-बिद्ध-सा हो गया
कि उसने एक दिन आकर मुझसे कहा
यह तो समस्या बन गयी है रात-दिन मैं चूमता ही रहा हूँ।

और यह इतना सुन्दर है और इससे ऐसी गहरी शान्ति पैदा होती है।
और तीन महीनो के भीतर उसका चोषण एक मौन-मुद्रा बन गया।
आप समझ नही सकते कि वह कुछ कर रहा है।
लेकिन अन्त मे चूसना जारी था।
सारा समय वह चूसता रहता।
यह जप बन गया।

तीन महीने बाद उसने मुझसे कहा
कुछ अनूठा मेरे साथ घटित हो रहा है।
निरन्तर कुछ मीठा द्रव्य मेरे सिर से मेरी जीभ पर बरसता है।
और यह इतना मीठा और शक्ति-दायक है
कि मुझे किसी और भोजन की जरूरत नही रही।
भूख समाप्त हो गयी और भोजन मात्र औपचारिक हो गया है।
परिवार मे समस्या न बने, इसलिए मै दूध ले लेता हूँ।
लेकिन कुछ मुझे मिल रहा है जो बहुत मीठा, बहुत जीवनदायी है।
मैने उसे विधि जारी रखने को कहा।

तीन महीने और—
और वह एक दिन नाचता हुआ, पागल-सा मेरे पास आया और बोला :
"चूसना तो चला गया, लेकिन अब मै दूसरा ही आदमी हूँ।
अब मै वही नही हूँ जो आपके पास आया था।
मेरे लिए कोई द्वार खुल गया है।
कुछ टूट गया है और कोई आकाँक्षा शेष नही रही।
अब मै कुछ भी नही चाहता— न परमात्मा, न मोक्ष।
अब जो है— जैसा है ठीक है।
मै उसे स्वीकारता हूँ और आनन्दित हूँ।"

इसे प्रयोग मे लाएँ।
किसी चीज को चूसे और चूसना बन जाएँ।
यह अनेकों के लिए उपयोगी होगा, क्योकि यह इतना आधारभूत है।

१४. सजग मृत्यु और शरीर से अलग होने की विधि

मनुष्य के सकल्प की बडी सम्भावनाएँ है, लेकिन हम कुछ ख्याल मे नही है।
मृत्यु का स्वेच्छा से प्रयोग सकल्प का गहरे-से-गहरा प्रयोग है।
क्योंकि साधारणत जीवन के पक्ष मे सकल्प करना कठिन नही है—
हम जीना ही चाहते है।
मृत्यु के पक्ष मे सकल्प करना बहुत कठिन बात है।

लेकिन, जिन्हे भी सच मे ही जीने का पूरा अर्थ जानना हो,
उन्हे एक बार मरकर जरूर देखना चाहिए।
क्योंकि बिना मरकर देखे वे कभी नही जान सकेंगे
कि उनके पास कैसा जीवन है।
एक बार वे स्वेच्छा से मरकर देख ले, फिर मृत्यु है ही नही।

सिर्फ पूर्ण सकल्प से कि मेरी चेतना सिकुड रही है,
मै अपने को चारो तरफ से सिकोड लेता हूँ।
आँख बन्द करके मै अपने को सिकोडता हूँ—
भाव करता हूँ कि मेरी चेतना सिकुड रही है।
अपने पैरो से यात्रा भीतर की तरफ शुरू कर दी—
उस केन्द्र पर ऊर्जा इकट्ठी होने लगी जहाँ से फैली थी,
सब किरणे वापस लौटने लगी।

इसका सघन मन से किया गया प्रयोग एक क्षण मे अचानक सारे शरीर को
मृत कर देता है और कोई एक भीतर जीवित बिन्दु रह जाता है,
सारा शरीर मुर्दे की तरह रह जाता है
और सारे शरीर के भीतर एक बिन्दु जीवित हो जाता है।

यह जीवित बिन्दु अब भलीभाँति देखा जा सकता है कि शरीर से भिन्न है।
ऐसे ही, जैसे अन्धेरे मे बहुत-सी किरणें फैली हो,
और पता न चलता हो कि क्या किरण है और क्या अन्धेरा।
सारी किरणें सिकुडकर एक जगह आ जाएँ,
तो अन्धेरा और किरणो का कन्ट्रास्ट साफ हो जाये।

जब हमारे भीतर प्राण की ऊर्जा इकट्ठी एक बिन्दु पर आकर घनीभूत हो जाती है, तो सारा शरीर अलग और वह बिन्दु अलग मालूम होने लगता है।
अब थोडे सकल्प की जरूरत है कि आप शरीर से बाहर हो सकते है।
सिर्फ सोचें कि मै बाहर हूँ, और आप बाहर है।
अब बाहर से खडे होकर इस शरीर को पडा हुआ देख सकते है
कि यह मुर्दे की तरह पडा हुआ हे।
छोटी-सी, एक धागे की तरह कोई चीज इस शरीर से अब भी जोडे रहेगी।
वही द्वार है आने-जाने का।
एक सिल्वर कॉर्ड,
एक रजत-रज्जू इस शरीर की नाभि से आपको जोडे रहेगी।

जैसे ही यह बिन्दु बाहर आयेगा, वैसे ही एक और नयी हैरानी का अनुभव होगा कि इस बिन्दु ने फिर नये शरीर का रूप ले लिया—
यह फिर फैलकर एक नया शरीर बन गया।
यह शरीर, सूक्ष्म-शरीर है।
यह शरीर बिलकुल इसकी ही प्रतिलिपि हे, जैसा यह शरीर है।
लेकिन हे बहुत धूमिल— फिल्म की तरह ट्रान्सपेरेन्ट— पारदर्शी।
अगर हाथ को हिलाएँ, तो उसके आर-पार निकल जाएगा,
लेकिन उसका कुछ बिगडेगा नही।

इस सकल्प की साधना का पहला तत्त्व है
सारे प्राणो को एक बिन्दु पर इकट्ठा कर लेना।
और जब एक बिन्दु पर वे इकट्ठे हो जाएँ
तो आप छलॉंग लगाकर बाहर निकल जाते है।

सिर्फ बाहर निकलने की इच्छा और बाहर निकलना घटित हो जाता है।
और सिर्फ इच्छा कि वापिस भीतर चलें और वह हो जाता है।

इसमे कुछ करने का नही है, बस सिर्फ ऊर्जा को इकट्ठा करना है।
एक दफा ऊर्जा इकट्ठी हो जाये, तो आप बाहर-भीतर हो सकते हैं।
उसमे कोई कठिनाई नही है।
यह अनुभव एक बार साधक को हो जाये,
तो उसकी जीवन-यात्रा तत्काल ही बदल जाती है,
रूपान्तरित हो जाती है।

कल तक फिर जिसे वह जीवन कहता था, अब जीवन न कह सकेगा।
कल तक जिसे मृत्यु कहता था, उसे मृत्यु भी न कह सकेगा।
कल तक जिन चीजो के लिए दौड रहा था, अब दौड जरा मुश्किल हो जायेगी।
कल तक जिन चीजो के लिए लड रहा था, अब लडना मुश्किल हो जायेगा।
कल तक जिन चीजो की उपेक्षा की थी, अब उपेक्षा न कर सकेगा।

जिन्दगी बदलेगी, क्योकि एक ऐसा अनुभव जिन्दगी मे आया है कि इसके बाद जिन्दगी वही नही हो सकती, जो इसके पहले थी।
इसलिए प्रत्येक ध्यान के साधक को एक-न-एक दिन "आउट ऑफ बॉडी एक्सपीरियेन्स"—शरीर के बाहर जाने का अनुभव करना चाहिए।
यह अनिवार्य चरण है,
जो उसके भविष्य के लिए बडे अद्भुत परिणाम ले आता है।

कठिन नही है यह, संकल्पभर चाहिए।
संकल्प कठिन है, यह प्रयोग कठिन नही है।
इसलिए कोई सीधा चाहे कि इस प्रयोग को कर ले, तो जरा मुश्किल पडेगी।
पहले उसे छोटे-छोटे संकल्प के प्रयोग करने चाहिए।
जब वह छोटे-छोटे प्रयोगो मे सफल होता जाता है,
तो उसकी संकल्प की सामर्थ्य बढती चली जाती है।

बहुत छोटे-से निर्णय करें और उनको जीने की कोशिश करें।

और उस जीने की कोशिश से धीरे-धीरे जब आपको ऐसा भरोसा आने लगे
कि अब मै कोई बडा सकल्प कर सकता हूँ, तो थोडे बडे सकल्प करे ।
अन्तिम सकल्प साधक को करने जैसा है, "स्वेच्छा से-मरने का" ।
किसी दिन जब आपको यह लगे कि अब मै यह कर सकता हूँ, तो करें ।

जिस दिन आप उस सकल्प को करके शरीर को मुर्दे की तरह देख लेगे,
उस दिन मे दुनिया का कोई धर्म-शास्त्र
आपके लिए कोई नयी बात कहनेवाला नही रह जायेगा,
उस दिन से दुनिया का कोई गुरु नयी बात न बता सकेगा ।

सजग मृत्यु और शरीर से अलग होने की विधि सार - संक्षेप

इस सकल्प की साधना का पहला तत्त्व है
सारे प्राणो को एक बिन्दु पर इकट्ठा कर लेना ।
और जब एक बिन्दु पर वे इकट्ठे हो जाएँ
तो आप छलांग लगाकर बाहर निकल जाते है ।
.. सिर्फ बाहर निकलने की इच्छा—
और बाहर निकलना घटित हो जाता है;
. और सिर्फ इच्छा कि भीतर चले—
और वह हो जाता है ।

सकेत : विस्तार के लिए देखे— "मै मृत्यु सिखाता हूँ" ।

१५ जाति-स्मरण के प्रयोग

जाति-स्मरण का अर्थ है, पिछले जन्मो के स्मरण की विधि,
पहले जो हमारा होना हुआ है, उनके स्मरण की विधि ।
जाति-स्मरण ध्यान का ही एक विशेष प्रयोग है ।
जैसे नदी है और कोई पूछे कि नहर क्या है,
तो हम कहेगे कि नदी का ही एक विशेष प्रयोग है— सुनियोजित;
नदी का ही, पर नियन्त्रित, व्यवस्थित ।
नदी है अव्यवस्थित, अनियन्त्रित ।

नदी भी पहुँचेगी कही, लेकिन पहुचने की कोई मन्जिल का पक्का नही ।
लेकिन नहर सुनिश्चित है कि कही पहुँचेगी ।
ध्यान तो बडी नदी है, पहुँचेगी सागर तक ।
पहुँच ही जायेगी ।
परमात्मा तक पहुचा ही देगा ध्यान,
लेकिन ध्यान के और अवान्तर प्रयाग भी है ।
ध्यान की छोटी-छोटी शाखाओ को नियोजित करके
नहर की तरह भी बहाया जा सकता है ।
जाति-स्मरण उनमे एक है ।
ध्यान की शक्ति को हम अपने पिछले जन्मो की तरफ भी प्रवाहित कर सकते हैं ।

ध्यान रहे, कोई स्मृति कभी नही मिटती है—
सिर्फ दबती है या उभरती है ।
दबी हुई स्मृति, मिटी हुई मालूम पडती है ।
अगर मै आपसे पूछूं कि १९५० की १ जनवरी को आपने क्या-क्या किया था
तो ऐसा तो नही है कि आपने कुछ भी न किया होगा,
लेकिन आप कुछ भी नही बता पायेगे
कि १ जनवरी १९५० को आपने क्या किया ।
एकदम खाली हो गया है १ जनवरी १९५० का दिन ।
पर खाली न रहा होगा,

जिस दिन बीता होगा, उस दिन भरा हुआ था,
लेकिन आज खाली हो गया है।

दस साल बाद आज के दिन का भी कोई पता नही चलेगा।
पर उसे जानने का भी उपाय है,
ध्यान को उसकी तरफ भी ले जाया जा सकता है।
जैसे ही ध्यान का प्रकाश उस पर पडेगा,
आप हैरान हो जाएँगे कि वह उतना ही जीवन्त वापिस दिखाई पडने लगेगा,
जितना जीवन्त उस दिन भी न रहा होगा।
जैसे कोई टॉर्च लेकर अन्धेरे कमरे मे आये और उसे घुमाए—
वह बायी तरफ देखे तो दायी तरफ अन्धेरा हो जाता है,
लेकिन दायी तरफ मिट नही जाता,
वह टॉर्च को घुमाए और दायी तरफ ले आये,
तो दायी तरफ फिर जीवित हो जाता है, लेकिन बायी तरफ छिप जाता है।

ध्यान का एक फोकस है।
और अगर विशेष दिशा मे प्रवाहित करना हो
तो ध्यान का टॉर्च की तरह प्रयोग करना पडता है,
अगर परमात्मा की तरफ ले जाना हो
तो ध्यान का दीये की तरह प्रयोग करना पडता है।
दीये का कोई फोकस नही होता, दीया अनफोकस्ड है।
दीया सिर्फ जलता है, चारो तरफ रोशनी उसकी फैल जाती है।
इसलिए जो भी है, वह दीये की रोशनी मे प्रकट हो जाता है।
लेकिन टार्च, दीये का फोकस के रूप मे प्रयोग है।
उसमे हम सारी रोशनी को बाँधकर एक तरफ फेलाते है।

इसलिए यह हो सकता है कि दीये के कमरे मे जलने से चीजे दिखाई पडे—
पर साफ दिखाई न पडे।
साफ दिखाई पडने के लिए दीये की रोशनी को
हम एक ही जगह बाँधकर डालते है,

वह टॉर्च बन जाती है।
तब फिर एक चीज पूरी साफ दिखाई पडती है,
लेकिन शेष सब चीजे दिखाई पडनी बन्द हो जाती हैं।
असल मे एक चीज को अगर साफ देखना हो
तो सारे ध्यान को एक ही दिशा मे ले जाना पडेगा,
शेष सब तरफ अन्धेरा कर लेना पडेगा।

जिसे सीधे जीवन के सत्य को ही जानना है,
वह तो दीये की तरह ध्यान को विकसित करेगा,
अन्य कोई प्रयोजन नही है उसे।
लेकिन, अगर कोई विशेष प्रयोग करने हो—
जैसे पिछले जन्मो के स्मरण का,
तो फिर ध्यान को एक दिशा मे प्रवाहित करना होगा।
उस दिशा मे प्रवाहित करने के दो-तीन सूत्र आपसे कहता हूँ।

पूरे सूत्र नही कहता हूँ,
क्योकि शायद ही किसी को प्रवाहित करने का ख्याल हो।
जिनको ख्याल हो, वे मुझसे अलग से मिल सकते हैं।
लेकिन दो-तीन सूत्र आपसे कहता हूँ।
उतने से आप प्रयोग न कर सकेंगे, लेकिन बातभर समझ सकेंगे।
सबके लिए प्रयोग करना शायद उचित भी नही है,
इसलिए पूरी बात नही कहूँगा।
क्योकि कई बार प्रयोग आपको खतरे मे उतार दे सकता है।
एक घटना आपसे कहूँ, उससे ख्याल आ जायेगा।

एक प्रोफेसर महिला कोई दो-तीन वर्ष तक ध्यान के सम्बन्ध मे
मेरे निकट मे रही।
उसका आग्रह था कि जाति-स्मरण का प्रयोग करना है,
पिछला जन्म जनाना है।
उसे मैंने जाति-स्मरण के प्रयोग करवाए।

मैंने उससे बहुत कहा कि यह प्रयोग अभी न करो तो अच्छा है।
ध्यान पूरा विकसित हो जाये,
तब जाति-स्मरण के प्रयोग से कोई खतरा नहीं होता है,
लेकिन ध्यान पूरा विकसित न हो, तो खतरे हो सकते है।
क्योंकि एक ही जन्म की स्मृतियो को झेलना भी बहुत बोझिल हैं,
दो-चार जन्म की स्मृतियाँ एकदम-से द्वार तोडकर भीतर आ जाएँ,
तो आदमी पागल भी हो सकता है।

इसलिए प्रकृति ने व्यवस्था की है कि आप भूलते चले जाएँ।
जानने से ज्यादा भूलने की व्यवस्था की गयी है।
जितना आप स्मरण करते है, उससे ज्यादा विस्मरण करवा दिया जाता है।
ताकि आपके चित्त के ऊपर ज्यादा बोझ कभी न हो जाये।
चित्त की सामर्थ्य बढ जाये, तो ज्यादा बोझ झेला जा सकता है।
लेकिन सामर्थ्य न बढे और बोझ आ जाये, तो कठिनाई शुरू हो जाती है।

पर उनका आग्रह था, उन्होने नही माना और प्रयोग किया।
जिस दिन उनको पिछले जन्म की स्मृति की धारा टूटी,
उस दिन रात के कोई दो बजे वे भागी हुई मेरे पास आयी।
उनकी हालत एकदम खराब थी, बहुत ही मुश्किल मे पड गयी थी।
उन्होने कहा "अब किसी तरह इसको बिलकुल बन्द हो जाना चाहिए,
मैं उस तरफ देखना ही नही चाहती"।

लेकिन स्मृति की धारा टूटने पर एकदम-से बन्द कर देना इतना आसान
नही है—द्वार टूट जाये, तो उसे एकदम-से बन्द कर देना बहुत मुश्किल है।
क्योकि द्वार खुलता नही है, टूटता है।
वक्त लगा कोई पन्द्रह दिन, तभी वह स्मृतियो की धारा बन्द हो सकी।

कठिनाई क्या आ गयी ?
उन देवी को अत्यन्त पवित्र एव चरित्रवान् होने का दावा था,
और पिछले जन्म की स्मृति आयी कि वह वेश्या थी।
और जब वेश्या होने के सारे चित्र उभरने शुरू हुए, वह डाँवाडोल हो गयी।

वह स्मृति ऐसी नही आती कि कोई वेश्या थी, ऐसी नही है वह स्मृति ।
. यही जो अब चरित्रवान् है, वही वेश्या थी ।

अक्सर ऐसा होता है कि पिछले जन्म मे जो वेश्या हो,
वह इस जन्म मे बहुत सती हो जाये ।
वह पिछले जन्म की प्रतिक्रिया है, पिछले जन्म का दु खभाव है ।
वह पिछले जन्म की पीडादायक स्मृति है, जो उसे सती बना देती है ।
अक्सर ऐसा हो जाता है कि पिछले जन्म के गुन्डे
इस जन्म मे महात्मा हो जाते है,
इस जन्म के महात्मा अगले जन्म मे गुन्डे हो जाते है ।
अक्सर यह प्रतिक्रिया हो जाती है ।
उसका कारण यह है कि जो हम जान लेते है, उससे पीडित हो जाते हैं,
उससे हम विपरीत चले जाते है ।
चित्त का जो पेन्डुलम है, वह बिलकुल विपरीत दिशा मे घूमता रहता है ।

उन देवी को जब पूर्व-जन्म का स्मरण आया, तो उन्हे बहुत पीडा हुई ।
पीडा यह हुई कि उनका अहकार गल गया और टूट गया ।
.जो उन्होंने जाना, वह कष्ट-देनेवाला सिद्ध हुआ ।
मैंने उनको कहा था कि इसे याद करने की तैयारी रखनी चाहिए,
अगर तैयारी न हो तो याद नही करनी चाहिए ।

इसलिए मैं आपको दो-तीन सूत्र कहता हूँ,
जिनसे आप जाति-स्मरण का जो अर्थ है वह समझ सके ।
लेकिन उसमे प्रयोग नही हो सकेगा,
जिन्हे करना होगा, उन्हे अलग मे ही सोचना पडेगा ।

पहली बात, अगर जाति-स्मरण मे उतरना हो, अतीत-जन्म को जानना हो,
तो भविष्य की तरफ से चित्त को मोडना पडता है ।
हमारा चित्त भविष्यगामी है ।
हमारा चित्त फ्यूचर मेन्टर्ड है आमतौर से, अतीतगामी नही है ।
अभी जो आने को है, उसकी तरफ हम उत्सुक है ।

इसलिए तो हम ज्योतिषियो के पास पूछते फिरते हैं
कि कल क्या होनेवाला है—भविष्य मे क्या होनेवाला है।
भविष्य के प्रति हम उत्सुक है कि क्या होनेवाला है।

जिस व्यक्ति को अतीत-स्मरण करना हो,
उसे भविष्य की उत्सुकता बिलकुल छोड देनी पडती है,
क्योंकि चित्त का जो फोकस है, उसकी जो धारा है,
अगर वह भविष्य की तरफ बह रही है,
तो उसकी टॉर्च की धारा अतीत की तरफ नही बह सकती।
तो पहला काम यह करना पडता है कि भविष्योन्मुखता बिलकुल तोड़ देनी पडती है कुछ महीनो के लिए, एक निश्चित समय के लिए।
छह महीने के लिए भविष्य को नहीं सोचूँगा,
भविष्य का ख्याल आ जायेगा तो उसको नमस्कार कर लूँगा—
भविष्य है ही नही, ऐसा छह महीने मानकर चलूँगा,
और पीछे की तरफ बहूँगा— पहली बात।
और जैसे ही भविष्योन्मुखता टूटती है,
चित्त की धारा पीछे की तरफ मुडनी शुरू हो जाती है।

पहले तो इसी जन्म मे पीछे लौटना पडेगा,
एकदम पिछले जन्म मे नही लौटा जा सकता।
इसके प्रयोग है कि इस जन्म मे हम पीछे की तरफ कैसे लौटें।
जैसे कि मैंने कहा, १ जनवरी १९५० को आपने क्या किया,
इसका आपको कोई पता नही है।
पर इसका प्रयोग है, इसे जाना जा सकता है।

जैसे मैं ध्यान के लिए कहता हूँ, ऐसा ध्यान[१] करें।
और दस मिनट के बाद जब ध्यान मे चित्त चला जाये—
शरीर शिथिल हो जाये, श्वास शिथिल हो जाये, मन शान्त हो जाये—
तब एक ही बात चित्त मे रह जाये कि १ जनवरी १९५० को क्या हुआ,

---

१ देखें, निष्क्रिय ध्यान— पृष्ठ १०५

सारा चित्त इस पर घूमने लगे।
चित्त मे चारो ओर गूँजता हुआ यह एक ही स्वर रह जाये
तो आप दो-चार दिन मे पाएँगे कि अचानक एक दिन जैसे पर्दा उठ गया
और १ जनवरी आ गयी और सुबह से साँझ तक एक-एक चीज दौड रही है
और आपने इस तरह १ जनवरी देखी, जैसे आपने उस दिन भी न देखी होगी,
क्योकि इतना होश आपने उस दिन भी न रखा होगा।

पहले इसी जन्म मे पीछे लौटकर प्रयोग करना पडेगा,
फिर पाँच वर्ष तक प्रयोग को ले जाना बहुत सरल है।
पाँच वर्ष की उम्र तक पीछे लौटना बहुत सरल है, बहुत कठिन नही है,
लेकिन पाँच वर्ष के बाद बडी बाधा पडती है।

इसलिए आमतौर से हमारी स्मृति पाँच वर्ष की उम्र के पहले की नही होती,
पीछे-से-पीछे की स्मृति पाँच वर्ष के करीब की होती है।
हाँ, कुछ लोगो मे तीन वर्ष तक हो सकती है।
लेकिन तीन वर्ष के पहले बहुत मुश्किल बात हो जाती है,
वहाँ एकदम द्वार अटक जाता है—जैसे सब बन्द हो गया।
लेकिन जो व्यक्ति इसमे समर्थ हो जायेगा,
वह पाँच वर्ष की उम्र तक की—
किसी भी दिन की स्मृति को पूरा जगाने लगेगा।
वह पूरी तरह जगने लगती है।
उसकी इस तरह जाँच कर लेनी चाहिए

जैसे आज का दिन गुजर रहा है,
तो आज के दिन की कुछ बातें नोट करके ताले मे बन्द कर दें
और दो साल बाद आज के दिन को याद करे।
वह सब खो जायेगा आज का दिन, और तब स्मरण करें।
और स्मरण करके फिर ताला तोडे और फिर मिलाएँ
कि वह बात मेल खा गयी कि नही।
आप हैरान होगे कि जितनी बाते आपने लिखी थी,

उनसे बहुत ज्यादा बातें और भी याद आयी हैं
जो आप उस दिन भी नोट नही कर पाये थे।
वे बाते याद आ ही जाएँगी।

इसको बुद्ध ने नाम दिया है, 'आलय-विज्ञान'।
'आलय-विज्ञान' का मतलब होता है, 'स्टोर हाउस ऑफ कॉन्शसनेस'।
जैसे घर मे एक कबाड़खाना होता है,
जहाँ हम सब बेकार हो गयी चीजो को डालते चले जाते है—
ऐसा चित्त की स्मृतियो को सग्रह करनेवाला एक स्टोर हाउस है,
जहाँ सब चीजे सगृहीत होती चली जाती है—जन्मो-जन्मो की।
वे कभी वहाँ से हटती नही हैं, क्योकि कब जरूरत पड जाए उनकी।
इसलिए वे वहाँ सगृहीत होती हैं।

शरीर बदल जाता है, लेकिन वह स्टोर-हाउस हमारे साथ चलता है।
कब जरूरत पड जायगी उसकी, कुछ कहा नही जा सकता है।
और जिन्दगी मे जो-जो हमने किया है, जो-जो हमने भोगा है,
जो-जो जाना है, जो-जो जीया है, वह सब वहाँ सगृहीत है।

जिस व्यक्ति को यह पाँच वर्ष तक स्मरण आने लगे,
वह पाँच वर्ष के पीछे उतर सकता है।
बहुत कठिनाई नही है, प्रयोग यही रहेगा पाँच वर्ष के पीछे उतरने का।
पाँच वर्ष के पीछे फिर एक दरवाजा है,
जो वहाँ तक ले जायेगा जहाँ तक जन्म हुआ, पृथ्वी पर आना हुआ।
फिर एक कठिनाई मालूम होती है, क्योकि माँ के पेट की स्मृतियाँ है—
वे भी मिटती नही है, उसमे भी प्रवेश किया जा सकता है।
और तब उस क्षण तक पहुचा जा सकता है, जिस क्षण कन्सेप्शन होता है—
जिस क्षण माँ और पिता के अणु मिलते है और आत्मा प्रवेश करती है।
वहाँ तक पहुँच जाने के बाद ही फिर पिछले जन्मो मे उतरा जा सकता है,
सीधे नही उतरा जा सकता है।

इतनी यात्रा पीछे करनी पडे, तब पिछले जन्म मे भी सरका जा सकता है।

पिछले जन्म मे सरकने पर पहला स्मरण जो आयेगा,
वह अन्तिम घटना का आयेगा ।

ध्यान रहे,
जैसे कि हम किसी फिल्म को उलटा चलाएँ, तो समझ मे नही आयेगी।
या कोई आदमी किसी उपन्यास को उलटा पढे,
तो समझ मे बिलकुल नही आयेगा ।
बहुत मुश्किल मे पड जायेगा ।
क्योकि यह बिलकुल उलटा है—
घटना घटने का जो क्रम था, उससे यह बिलकुल उलटा क्रम है ।
अगर आप पीछे लौटेगे,
तो जन्म पहले आयगा और पिछले जन्म की मृत्यु बाद मे आयेगी,
मृत्यु पहले आयेगी, बुढापा पहले आयेगा—
फिर जवानी आयेगी, फिर बचपन आयेगा, फिर जन्म आयेगा ।
तो उलटा क्रम होगा और उलटे क्रम मे पहचानना बहुत मुश्किल होगा ।

इसलिए पहली दफा स्मरण आ जाने पर
बडी बेचैनी और तकलीफ शुरू होती है,
क्योकि पहचानना मुश्किल होता है कि यह क्या हो रहा है ।
पिछले जन्म की स्मृतियो का जो सबसे बडा कठिन श्रम है,
वह यह है कि उलटे मे उसको देखना पडेगा जो सीधे मे घटा था ।
इसलिए पिछले जन्म की स्मृति आ जाने पर भी
उसे व्यवस्थित करने मे बहुत समय लग जाता है ।
साफ-साफ व्यवस्थित करने मे कि कैसी घटना घटी होगी,
उसका क्या तारतम्य रहा होगा ।

अगर हम उलटा देख सके, तो हम बहुत हैरान होगे—
क्योकि तलाक अगर पहले घट जाये, फिर प्रेम हो, फिर विवाह हो,
तो हमको चीजे पहली दफा दिखाई पडेगी
कि यह तो बहुत हैरानी की बात है ।
तब हमे दिखाई पडेगा कि तलाक घटना तो बहुत अनिवार्य था—

जिस तरह का प्रेम हुआ था, उसमे तलाक होने ही वाला था।
और जिस तरह का विवाह हुआ था, उसकी तलाक ही परिणति थी।
लेकिन जब हमने विवाह किया था,
तब हमने सोचा भी नही था कि इसमे तलाक घट सकता है।
लेकिन तलाक उसी विवाह का फल था।

अगर हम इस बात को पूरी तरह देख लेंगे,
तो आज प्रेम करना बहुत कठिन हो जायेगा।
क्योकि उसमे तलाक हमे पहले से दिखाई पड सकता है,
मित्रता करने से पहले शत्रुता का आगमन दिखाई पड सकता है।

पिछले जन्म की स्मृति इस जन्म को एकदम अस्त-व्यस्त कर देगी,
क्योकि आप फिर उसी तरह से नही जी सकेंगे,
जैसा आप पिछले जन्म मे जीये थे।
उस बार ऐसा लगा था और अभी भी ऐसा लग रहा है कि धन इकट्ठा
करते जा रहे हैं तो बडी सफलता मिल जायेगी, बडा आनन्द मिल जायेगा—
पर उसमे दिखाई पडेगा कि दुख मिला और फिर धन इकट्ठा कर रहे है।
दुख मिलना पहले दिखाई पड जायेगा—
और धन इकट्ठा करना पीछे दिखाई पडेगा।

और तब यह साफ दिखाई पडेगा कि धन इकट्ठा करना
सुख मे ले जाने का आधार नही था, वह ले गया दुख मे।
मित्र बनाना शत्रु बनाने मे ले गया।
जिसे हम प्रेम करना कहते थे, वह घृणा मे ले गया है।
जिसे हम मिलन कहते थे, वह विरह मे ले गया है।
तब चीजें अपने पूरे अर्थ मे प्रकट होगी और वह अर्थ हमारे इस जीवन के
जीने को एकदम बदल देगा, क्योकि तब बडी अन्यथा बात हो जायेगी।

यह स्मरण सम्भव है, आवश्यक नही, सम्भव है अनिवार्य नही।
और कभी-कभी तो ध्यान करते-करते आकस्मिक रूप से भी टूट पडता है।
बिना कोई प्रयोग किये भी अगर ध्यान करते-करते पिछले जन्मो की स्मृतियाँ

आकस्मिक रूप से प्रकट हो जाएँ, तो उनमे बहुत रस मत लेना।
देख लेना और साक्षी-भाव ही रखना ।
क्योकि साधारणत चित्त की इतनी सामर्थ्य नही होती
कि इतने अनन्त उपद्रवो को एकसाथ झेल सके ।
उस झेलने मे विक्षिप्त हो जाने की पूरी सम्भावना है ।

लेकिन उस धारा को तोडने की दिशा मे जाना बहुत आवश्यक नही है,
किन्ही को उसकी उत्सुकता हो तो प्रयोग कर सकते हैं ।
लेकिन उन प्रयोगो मे पहले ध्यान मे काफी गहरे प्रयोग जरूरी है—
ताकि मन इतना शान्त और शक्तिशाली हो जाये
कि कोई भी चीज जब टूट पडे, तो आप उसको साक्षी-भाव से देख सकें ।

और अगर कोई व्यक्ति साक्षी-भाव मे विकसित हो जाता है,
तो पुराने जन्म देखे गये सपने से ज्यादा नही मालूम पडते हैं ।
तब उसे कोई पीडा नही होती ।
तब ऐसा लगता है, यह सपना हमने देखा था ।
सपने से ज्यादा उनका अर्थ नही रह जाता ।
जब हमे पुराने दो-चार जन्म याद आ जाते है,
और सपने की तरह मालूम पडने लगते है,
तो यह जन्म भी तत्काल सपने की तरह मालूम पडने लगता है ।

जिन लोगो ने इस जगत् को माया कहा है,
उनके जगत् को माया कहने का और कोई बुनियादी कारण नही है,
वह कोई दार्शनिक बात नही है,
उसका बुनियादी कारण जाति-स्मरण ही है ।
जिन्होने भी पिछले जन्म स्मरण किये है,
उन्हे यह सब मामला माया हो गया है, एकदम सपना हो गया है ।
क्योकि कहाँ हैं वे मित्र, जो पिछले जन्म मे थे ?
कहाँ है वे मकान ?
कहाँ है वह पत्नी ?

कहाँ हैं वे बेटे ?
कहाँ गयी वह दुनिया ?
कहाँ गया वह सब, जिसको हमने इतना सत्य मान रखा था कि वह है ?
कहाँ गयी वे चिन्ताएँ, जिनके लिए हम रातभर नहीं सोये थे ?
कहाँ गये वे दुख— वे पीडाएँ—
जिनको हमने पहाड समझ रखा था और ढोया था ?

अगर पिछला जन्म याद आ जाये और सत्तर वर्ष आप जीये थे—
तो उन सत्तर वर्षों मे जो देखा गया था,
वह एक सपना मालूम पडेगा या सत्य ?
एक सपना ही मालूम पडेगा— जो आया और गया।
अगर एक बार पिछले जन्मो का स्मरण हो जाये,
तो आप बडी मुश्किल मे पड जाएँगे कि जो अभी देख रहा हूँ, वह सत्य है ?
क्योकि ऐसा तो बहुत बार देखा है—
लेकिन सब मिट गया है, सब खो गया है।

तो एक सवाल उठ जायेगा कि जो तुम देख रहे हो,
वह भी उतना ही सच है जितना वह था ?
वह भी एक सपने की तरह दौड जायेगा और मिट जायेगा।
जैसे सब सपने हम तक पहुँच गये, वैसे यह सपना भी हम तक पहुँच गया है—
यह अगर बोध हो जाये, तो माया का अनुभव होगा।
लेकिन इसके साथ दूसरा अनुभव भी होगा—
एक अनुभव कि जगत् माया है, और दूसरा कि द्रष्टा सत्य है,
दृश्य तो रोज बदल जाते हैं, हर बार बदल गये हैं—
लेकिन द्रष्टा, देखनेवाला वही है।

और ध्यान रहे!
जब तक दृश्य सत्य मालूम होते है, तब तक द्रष्टा पर ध्यान नहीं जाता है,
जब दृश्य एकदम असत्य हो जाते है, तब द्रष्टा पर ध्यान जाता है।
इसलिए मैं कहता हूँ कि जाति स्मरण का प्रयोग उपयोगी तो है,
लेकिन थोडे ध्यान मे गहरे जाएँ और प्रयोग करे— तब।

ध्यान मे गहरे उतरें तो फिर जीवन को सपने की तरह
देखने की क्षमता आ जाये।

अधिक विस्तार से जानने के लिए 'मैं मृत्यु सिखाता हूं' देखें।
इसके लिए अपने नगर के किसी 'रजनीश ध्यान केन्द्र'— अथवा निकट के पुस्तक-विक्रेता— अथवा 'श्री रजनीश आश्रम, पूना' से सम्पर्क करें।

१६. प्राण साधना

लाओत्से की साधना-पद्धति मे
भीतर एक अद्वैत मे आबद्ध होने के बडे सुगम उपाय है।
एक उपाय की बात हम पहले करें।

लाओत्से मानता था कि तुम जो भी करो—
उठो, बैठो, भोजन करो, या सोओ— जो भी करो,
उसमे पूरे सयुक्त और लीन हो जाओ।
अगर रास्ते पर चल रहे हो, तो चलना ही बन जाओ—
इतना भी फासला मत रखो कि 'मै चल रहा हूँ'।
साक्षी की जिस साधना की चर्चा हम करते रहे है,
या कृष्णमूर्ति जिस अवेयरनेस, जागरूकता की बात करते है,
वे भी अद्वैत पर नही ले जा सकेगे—
एक जगह जाकर उन्हे भी छोड देना होगा।

लाओत्से कहता है कि न जागरूकता, न साक्षी— वरन् एकता, लीनता।
तुम जो कर रहे हो वही हो जाओ, करनेवाला कोई अलग न बचे,
हर क्रिया मे इतनी समग्रता मे एक हो जाओ कि भीतर कोई फासला न रहे।
अगर भीतर का यह फासला क्रियाओ मे टूटता चला जाये,
तो बुद्धि और वासना के बीच, इन्द्रिया और विवेक के बीच,
आत्मा और शरीर के बीच एक सेतु निर्मित हो जाता है—
वे दोनो आलिगन म आवद्ध हो जाते है।

इस आलिगन को ही तन्त्र ने 'आन्तरिक मैथुन' कहा है,
जब भीतर की चेतना भीतर की वासना से एक हो जाती है।

बुद्धि कहा है तन्त्र ने पुरुष को, और स्त्री कहा है शरीर की प्रकृति को।
और जब भीतर की स्त्री भीतर के पुरुष से एक हो जाती है,
तो परम समाधि फलित होती है।

लेकिन, अभी हमारे भीतर,
कुछ शारीरिक व्यवस्थागत अनिवार्य फासले हो गये हैं।
और जब तक वे फासले न टूट जाएँ,
तब तक इस लीनता की साधना को साधना मुश्किल है।
ये फासले यान्त्रिक, मेकेनिकल हो गये है।
और जब तक हम इन यान्त्रिक व्यवस्थाओ को न तोड दें, नया न कर लें,
तब तक केवल लीनता के प्रयोग से कुछ न होगा।
अत इन यन्त्रवत भूलो को समझ लेना जरूरी है।

श्वास का जो प्राथमिक स्रोत है, उसे जापानी भाषा मे 'तान्देन' कहते हैं।
हमारी भाषा मे तो कोई शब्द नही है।
अगर ठीक श्वास चलनी हो,
तो नाभि से दो इच नीचे, तान्देन मे श्वास का सम्बन्ध होता है।
व्यक्ति जितना अस्तित्व से विच्छिन्न होगा,
तान्देन से श्वास-बिन्दु उतना ही दूर हटता जायेगा।
तो जितने ऊपर से आप श्वास लेंगे, उतने ही तनाव से आप भरे होंगे,
और जितने नीचे-ही-नीचे से श्वास लेंगे, उतने ही विश्राम को उपलब्ध होंगे।
और अगर तान्देन से श्वास लेंगे, तो तनाव बिलकुल नही होगा।

बच्चे के जीवन मे तनाव न होने का जो व्यवस्थागत कारण है,
वह तान्देन से श्वास का चलना है।
लेकिन कुछ कारण है कि हम लोगो को शिक्षा देते है
कि पेट से श्वास मत लेना।
एक तो यह पागलपन का ख्याल सारी दुनिया मे फैल गया है
कि छाती चौडी होनी चाहिए।
तो छाती जितनी बडी करनी हो, उतनी श्वास छाती मे भरनी चाहिए,
उसे नीचे नही जाने देना।

स्त्रियाँ नाभि से श्वास नही ले पाती है—
उसका भी एक गहरा कारण है—उनके मन मे एक गलत ख्याल बैठ गया है
कि स्तन सुडौल और गोल होने चाहिए।

ये सब ख्याल भीतर एक खतरनाक स्थिति को पैदा करता है—
वह है ऐन्द्रिक और बौद्धिक तलो का अलगाव।

एक दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण भी है
बच्चो को अपने शरीर का बोध सबसे पहले तब होता है,
जब वह अपनी कामेन्द्रिय को स्पर्श करता है।
लेकिन तभी माँ-बाप उसे रोकते हैं।
अगर बच्चा अपनी आँख, नाक छूए, तो माँ बहुत प्रसन्न होती है।
लेकिन जब वह जननेन्द्रिय छूता है,
तो माँ बहुत परेशान और बेचैन हो जाती है!
और तब बच्चे को पहली दफा पता चलता है
कि शरीर मे कोई हिस्सा है जो छूने-योग्य नही है।
यह माँ और बाप की आँखें देखकर बच्चे को पता चलता है।

इससे बच्चे के शरीर मे एक भेद शुरू हो जाता है।
और उस भेद के साथ ही श्वास ऊपर से चलने लगती है।
उसका कारण है— क्योंकि तान्देन का जो बिन्दु है
अगर उस तक श्वास जाये तो जननेन्द्रिय पर उसका असर पडता है।
इसलिए जैसे ही हमे यह ख्याल आ गया कि जननेन्द्रिय हमारा हिस्सा नही है,
वैसे ही हमारा तान्देन सिकुड जाता है, सप्रेस्ड हो जाता है।
और हम डरे हुए जीने लगते है कि कही जननेन्द्रिय तक श्वास न चली जाये!

क्या आपको पता है कि रात सोते समय हर पुरुष को कम-से-कम
बारह से अठारह बार जननेन्द्रिय का 'इरेक्शन', उत्थान होता है—नियमित?
उसका कारण कुल इतना है कि नीद मे श्वास पूरी चलती है।
और पूरी चलने मे तान्देन पर चोट पडती है।
तथा तान्देन का बिन्दु और वीर्य-ऊर्जा का बिन्दु निकट है, सीमान्त पर है।
श्वास की चोट ही वीर्य को सक्रिय करती है।
अगर तान्देन तक श्वास न पहुँचे, तो नपुंसकता तक फलित हो सकती है।
ताओ को माननेवाले चिकित्सको का ख्याल है कि अनेक पुरुषो की नपुंसकता

केवल श्वास के तान्देन तक पहुँचने की वजह से होती है।
और इसीलिए अक्सर पहलवान नपुंसक हो जाते हैं।

तो तान्देन से श्वास तभी चल सकती है,
जब आपने अपनी कामवासना को स्वीकार किया हो।
असल मे जब तक आपने अपनी पूरी वासनाओ को समग्र-रूप-से
अंगीकार, स्वीकार न कर लिया हो,
तब तक आपके भीतर अद्वैत निर्मित नही हो सकता है।

और एक बहुत आनन्द की अद्भुत बात है कि जैसे ही कोई व्यक्ति
अपनी वासना को उसकी समग्रता मे स्वीकार कर लेता है,
वैसे ही वह वासना से मुक्त हो जाता है।

तो, लाओत्से की साधना मे जो उतरना चाहते हैं,
उनका पहला काम यह है कि वे श्वास को फेफड़े से लेना बन्द कर दें
और नाभि से लेना शुरू करें।
-इसका अर्थ हुआ कि श्वास के आने और जाने के साथ आपका पेट
ऊपर और नीचे गिरे तथा सीना शिथिल रहे।
आप तीन सप्ताह का प्रयोग करके भी दंग रह जाएँगे कि श्वास के नाभि से
चलने पर न-मालूम आपका कितना क्रोध विलीन हो गया!
कितनी ईर्ष्या खो गयी, कितना तनाव विलीन हो गया है!
आपकी नींद गहरी हो गयी है और आपका व्यक्तित्व सन्तुलित होने लगा है।

तो पहला सूत्र है, श्वास को धीरे-धीरे नाभि पर ले आना।
दूसरा, ताओ की प्राण-साधना का हिस्सा है
कि 'सदा श्वास बाहर जाये', इस पर ध्यान देना है,
भीतर आती श्वास पर बिलकुल ध्यान नही देना है।
और जब श्वास बाहर जाये,
तो जितने जोर से श्वास को उलीचा जा सके, उलीच देना है।
और भीतर श्वास अपनी तरफ से नही लेनी है,
सिर्फ जितनी जाये, जाने देनी है।

तो लाओत्से का दूसरा सूत्र है
सदा श्वास को फेंकिये, लेने को भूल ही जाइये।
वह तो प्रकृति स्वय ही कर लेती है।
और तीसरा सूत्र है लाओत्से का कि जो श्वास का आना-जाना है,
उसे अपने से पृथक न समझें
जब श्वास बाहर जाये तो समझें 'मै बाहर चला गया',
और जब श्वास अन्दर आये तो समझें 'मैं भीतर आ गया',
प्राण के साथ एक हो जाएँ।

अगर यह धीरे-धीरे जप की भाँति आपके भीतर गूँजने लगे
कि श्वास मे मै बाहर गया, श्वास मे भीतर आया—
श्वास की यह सतत क्रिया यदि जप बन जाये,
तो अद्वैत फलित होता है।
तो अद्वैत का अनुभव होता है।

प्राण साधना : सार - संक्षेप

पहला सूत्र

श्वास को फेफडे से लेना बन्द कर दें और नाभि से लेना शुरू करे। श्वास के आने और जाने के साथ आपका पेट ऊपर और नीचे गिरे तथा सीना शिथिल रहे।

दूसरा सूत्र

सदा श्वास को बाहर फेकिये, भीतर लेने को भूल ही जाइये।

तीसरा सूत्र

श्वास के आने-जाने को स्वय से पृथक न समझे।
जब श्वास बाहर जाये तो समझें 'मै बाहर चला गया'—
और जब श्वास भीतर आये तो समझे 'मै भीतर आ गया'।
तो अद्वैत का अनुभव होगा।

१७. अन्तर्प्रकाश साधना

प्रकाश दिखाई नही पडता, कभी किसी ने देखा नही है—
लेकिन हम कहते है "मैं प्रकाश देखता हूँ"—
और उससे हमारा मतलब होता है कि हम वस्तुओ को देखते हैं,
जो प्रकाश के अभाव मे दिखाई नही पडती।

जब कोई भी चीज दिखाई नही पडती,
तो यह हमारा अनुमान होता है कि अब प्रकाश नही है,
और जब वस्तुएँ दिखाई पडती है, तो हम अनुमान करते है कि अब प्रकाश है।
इसलिए बाह्य जगत् मे भी प्रकाश एक अनुमान है।

अत, अत प्रकाश मे प्रवेश के सम्बन्ध मे प्रकाश का हम क्या अर्थ लेते हैं?
अगर आप अपने को अनुभव कर सकते है,
अगर आप अपने को देख सकते हैं,
तो इसका अर्थ हुआ कि प्रकाश वहाँ है।

यह हैरानी की बात है, लेकिन हमने कभी इस ओर ध्यान नही दिया·
कमरा बिलकुल अन्धेरा है,
तो आप यह नही कह सकते कि वहाँ कुछ भी है—
पर इतना आप अवश्य कहेगे कि 'मैं हूँ'।
कमरे मे अन्धेरे के कारण कोई भी चीज दिखाई नही पडती,
लेकिन एक चीज के बारे मे आपका दृढ-निश्चय होता है—
और वह है आपके होने का भाव।
उसके लिए किसी प्रमाण या किसी बाह्य-प्रकाश की जरूरत नही है।
आप जानते है कि आप है, आप अनुभव करते है कि आप हैं।
इसलिए एक सूक्ष्म प्रकाश वहाँ अवश्य होना चाहिए।
उससे हम अवगत न हो, यह दूसरी बात है।
हम उसके प्रति बेहोश हो सकते है, लेकिन वह है।

इसलिए अपनी दृष्टि को अन्दर की ओर मोड़ें,
सभी इन्द्रियो को बन्द कर ले, ताकि बाह्य-प्रकाश का कोई अनुभव न हो।
बिलकुल अन्धेरे मे चले जाएँ, आँखें बन्द कर कोशिश करें भीतर देखने की।
शुरू मे आप निपट अन्धेरा अनुभव करेगे।
इसका कारण यह है कि आप इसके लिए अभ्यस्त नही है।
लेकिन आप भीतर प्रवेश करते चले जाएँ।
भीतर जो अन्धेरा है, उसे मात्र देखते रहे।
धीरे-धीरे भीतर बहुत सारी चीजे दिखाई पडनी शुरू हो जाएँगी।
भीतर एक अन्तर्प्रकाश कार्य करने लगता है।

प्रारम्भ मे यह बहुत मन्द होगा।
भीतर आप अपने विचारो को देखने लगेगे, क्योंकि विचार वहाँ वस्तुएँ है।
आप लडखडाने लगेगे अपने मन के इन साज़-सामानो से।
ये साज़-सामान भीतर बहुत बडी तादाद मे है।
अनेको स्मृतियाँ, वासनाएँ, अतृप्त वासनाएँ, विषाद, विचार आदि भरे पडे है।

तो पहले भीतर उस अन्धेरे मे प्रवेश करने की कोशिश करें।
तब एक धीमा प्रकाश अनुभव मे आयेगा।
और वहाँ बहुत सारी चीजे दिखाई पडनी शुरू होगी।
यह ठीक वैसे ही है,
जैसे कोई सूर्य की तेज रोशनी मे चलकर कमरे मे प्रवेश करे,
तो शुरू मे तो कमरे मे बिल्कुल अन्धेरा लगेगा,
लेकिन कुछ देर बाद— आँखो के समायोजित, एडजस्ट हो जाने पर—
कमरे के अन्दर की चीजें दिखाई पडने लगेगी।

आँखो को व्यवस्थित होने मे थोडा समय लगता है।
अगर कोई लगातार सिर्फ नजदीक की चीजो को ही देखने मे अपनी आँखो
को लगाए हुए हो— जैसे कि पढने, लिखने आदि मे—
तो वह 'अल्प दृष्टिवाला'—'शॉर्ट साइटेड' हो जायेगा।
कारण ? आँखो का सतत उपयोग सिर्फ निकट की चीजो को देखने मे करने
से आँखो की यान्त्रिक व्यवस्था उसी स्थिति मे थिर हो जाती है।

और तब अगर वह दूर तारो को देखने की जब कोशिश करता है तो वह देख नही सकता, क्योकि निकट की चीजो को देखते रहने से उसकी आँखो की यान्त्रिक व्यवस्था सख्त हो जाती है, अपना लचीलापन खो बैठती है।

ठीक यही बात,
भीतर जब हम अपने विचारो को देखने चलते है तो होती है।
हम जन्मो-जन्मो से लगातार बाहर ही देखते रहे हैं,
इसलिए देखने की यान्त्रिक व्यवस्था उसी स्थिति मे सख्त हो गयी है।
इसलिए भीतर देखने मे कठिनाई होती है।

पर कोशिश करे, उस अन्धेरे मे देखने का प्रयास करें, और जल्दबाजी न करें,
क्योकि जन्मो-जन्मो से आँखे बाहर देखने मे अभ्यस्त हो गयी है।
वे बिल्कुल भूल ही गयी है कि अन्दर कैसे देखा जाता है।
क्योकि आपने उसका वैसा कभी उपयोग ही नही किया है।

इसलिए भीतर अन्धेरे मे देखने का प्रयास करें और धैर्य न खोएँ।
अन्धेरे मे प्रवेश करते चले जाएँ
और तब तीन महीने के अन्दर आप भीतर बहुत सारी चीजो को—
जिन्हे आपने कभी नही समझा था कि वहाँ अन्दर हो सकती है—
देखने मे सक्षम हो जाएँगे।
और तब पहली बार आपको यह जाहिर होगा
कि भीतर विचार, मात्र वस्तुएँ है।

इतना ज्ञान हो जाने के बाद—
आप किसी विचार को अपनी इच्छानुसार कही भी रख सकते है।
अगर आप चाहे तो बाहर भी फेक सकते है।
लेकिन, अभी आप जिस स्थिति मे है,
उसमे आप विचारो को बाहर नही फेक सकते—
क्योकि आप उन्हे पकड ही नही पाते।
आप यह भी नही जानते कि विचार वस्तुएँ है—
जिन्हे पकडा जा सकता है और बाहर फेका जा सकता है।
आप नही जानते कि ये विचार कहाँ पर स्थित है, कहाँ से आते हैं।

बहुत लोग कहते है,
'मैं भयभीत नही होना चाहता हूँ, मै क्रोध करना नही चाहता हूँ'—
पर वे कुछ कर नही सकते,
क्योकि वे नही जानते कि यह क्रोध कहाँ से आ रहा है,
कहाँ पर सगृहीत है, कहाँ है इसकी जडे ।

सभी विचार वस्तुमात्र है—एक सग्रह है ।
इसलिए, हल्के प्रकाश मे जब आपको भीतर विचार, इच्छाएँ, क्रोध, वासनाएँ,
ईर्ष्या आदि दिखाई पडनी शुरू हो, तो उनसे लडे मत, सिर्फ उन्हे देखते रहे।
क्योंकि सिर्फ देखते रहने स आप और होश से भरेंगे ।
भीतर देखते रहे—
और मात्र देखते रहने से भीतर प्रकाश बढता चला जायेगा ।
प्रकाश भीतर मौजूद है, सिर्फ आपकी दृष्टि को समायोजित होना है ।
और मात्र देखते रहने से ही यह दृष्टि समायोजित हो पायेगी—
उस विशाल प्रकाश को देखने मे समथ हो पायेगी ।

और जब उस तीव्र प्रकाश मे भीतर की सारी चीजे स्पष्ट हो जाती हैं,
भीतर का जब कोई कोना अन्धेरा नही रहता है,
तव आप अपने मन के मालिक हो जाते हैं ।
तब आप किसी चीज को भीतर से बाहर कर सकते है ।
और चीजो को अपने ढग से सुव्यवस्थित कर सकते है ।
जब आप अपने मन के मालिक हो जाएँगे, तब आपको स्पष्ट होगा
कि यह प्रकाश कहाँ से आ रहा है, इसका स्रोत कहाँ है ।

सबसे पहले आपको प्रकाशित वस्तुओ का ज्ञान होगा
और आप अपनी मनस-वस्तुओ के मालिक हो जाएँगे ।
और उसके बाद आपको प्रकाश के उद्गम का आभास मिलने लगेगा ।
अभी भी आप प्रकाश को नही देखेगे,
बल्कि उस सूर्य को देखेगे जिससे प्रकाश आ रहा है ।
सर्वप्रथम आप मन की वस्तुओ से भिज्ञ होगे

और आपका मन उत्तरोत्तर साफ होता जायेगा।
और तब आप प्रकाश के उद्गम को जान पाएँगे।
ठीक मनस के केन्द्र मे ही वह स्रोत है।

और तब इस स्रोत मे प्रवेश कर जाएँ।
अब आप अपने मन को भूल सकते है, अब आप इसके मालिक हैं।
अब सिर्फ मन को कहे—'रुक जाओ'— और मन ठहर जायेगा।
इस मालकियत के लिए होश की आवश्यकता है।
जब मन पर मालकियत हो गयी,
तब आप उस प्रकाश-उद्गम तक जाएँ और उसमे प्रवेश कर जाएँ।
इस प्रवेश से पूरे जीवन पर ही आपकी मालकियत हो जाती है,
स्वय चेतना पर ही आपकी मालकियत हो जाती है।
जो इस प्रकाश-स्रोत मे एक बार स्नान कर लेता है,
वह अपनी शाश्वतता को देख पाता है।
इस क्षण मे आपका सम्पूर्ण भूत एव भविष्य आपके सामने होता है।
यह शाश्वत का क्षण है।
यह अत प्रकाश मे प्रवेश बडा घबरानेवाला भी है,
क्योकि इसमे प्रवेश के साथ ही,
जो भी आप अपने को अभी तक समझे हुए हैं, वह सब मिट जायेगा।
आपका अहकार, आपका व्यक्तित्व—सब मिटेगा,
क्योकि वे सब आपके अस्तित्व पर गदगियो के आवरण हैं।
सिर्फ शुद्ध अस्तित्व—जिसका न कोई नाम है और न रूप— बचेगा।

इस प्रकाश मे प्रवेश के बाद परमात्मा मे प्रवेश है।
इसी बिन्दु तक आपके प्रयास की आवश्यकता है।
उसके बाद तो आप प्रभु-प्रसाद के क्षेत्र मे प्रविष्ट होते हैं
और परमात्मा की कशिश ही काम करने लगती है।

विस्तार के लिए देखें—The Ultimate Alchemy, Vol-I

१८. अन्तर्वाणी साधना

स्वधर्म ! कैसे पहचानें क्या है स्वधर्म ?
पहचान हो सकती है।
सूक्ष्म होगे पहचान के सूत्र ।

पहली बात
अगर आप दुखी है जीवन मे,
तो पक्का समझ लेना कि आप स्वधर्म से च्युत हुए है।
स्वधर्म से च्युत हो रहे है—
क्योकि जहाँ स्वधर्म की यात्रा होती है,
वही आनन्द फलित होता है, शान्ति फलित होती है ।
अशान्त हो यदि, तो जान लेना कि परधर्म के पीछे चल रहे हैं ।

रुक जाना, पुन सोच लेना—रि-कन्सिडर कर लेना
कि जो यात्रा चुनी, जो कर रहे है, उससे दु ख, पीडा और अशान्ति बढती है,
तो निश्चित ही वह मार्ग मेरा नही है।

दूसरी बात
अगर कोई स्वधर्म के साथ चल रहा हो,
तो उसके जीवन मे स्वीकार का भाव बढता जायेगा,
वह हर स्थिति मे अपने को सन्तुष्ट पायेगा ।

तीसरी बात
दैनन्दिन कामो मे कभी पता नही चलता कि स्वधर्म क्या है, परधर्म क्या है ।
स्वधर्म का पता अत वाणी के अतिरिक्त और कही से नही चलता है ।

पहले मैने दो लक्षण की बात कही कि इसे आप पता लगा लेना
कि जिन्दगी ठीक मार्ग से जा रही है या नही ।
और तीसरे से मैं आपके स्वधर्म के केन्द्र को ही छू लेने की सूचना देता हूँ ।
आपको पता नही—
लेकिन आपकी अन्तरात्मा को पता है कि क्या है आपका स्वधर्म ।

तो घन्टेभर के लिए, चौबीस घन्टे मे बन्द कर लेना बाहर की दुनिया को—
भूल जाना, छोड देना बाहर का बाहर,
अपने भीतर डुबकी लगा लेना— मौन,
सिर्फ भीतर ध्यान को मोडकर सुनने की कोशिश करना
कि भीतर कोई बोलता है? कोई आवाज है?

पहले बहुत-सी आवाजे सुनाई पडेगी
और पहचानने मे कठिनाई न होगी कि ये बाहर की आवाजे हैं।
मित्रो के शब्द याद आएँगे, शत्रुओ के शब्द—
दूकान, बाजार, मन्दिर, शास्त्र—सब याद आएँगे।
पहचान सकेंगे भलीभाँति कि बाहर के सुने हुए हैं।
छोड दे, उन पर ध्यान न दे, और भीतर उतरें, और प्रतीक्षा करते रहे।

अगर तीन महीने कोई सिर्फ एक घन्टा चुप बैठकर प्रतीक्षा कर सके धैर्य से,
तो उसे भीतर की आवाज का पता चलना शुरू हो जायेगा।
और एक बार भीतर का स्वर पकड लिया जाये,
तो आपको फिर जिन्दगी मे किसी से सलाह लेने की जरूरत नही पडेगी।

जब भी जरूरत हो, आँखें बन्द करे और भीतर से सलाह ले लें।
. पूछ ले भीतर से कि क्या करना है।
और स्वधर्म की यात्रा पर आप चल पडेंगे।
क्योकि भीतर से स्वधर्म की ही आवाज आती है,
भीतर मे कभी परधर्म की आवाज नही आती।

जो व्यक्ति अपने भीतर की इनर-वायस, अंतर्वाणी की नही सुन पाता,
वह व्यक्ति कभी स्वधर्म के तप को पूरा नही कर पायेगा।
लेकिन सब हो सकता है, सबके पास वह अन्तर्वाणी का स्रोत है।
जन्म के साथ ही वह स्रोत है, बस हमे उसका स्मरण नही है।
हमने कभी उसे जगाया नही।
हमने कभी कानो को प्रशिक्षित नही किया कि उस सूक्ष्म आवाज को पकड लें।
जीसस, बुद्ध या महावीर, भीतर की आवाज से जीते हैं।

इसमे एक बात और याद दिला दूँ
कि भीतर की आवाज एक बार सुनाई पडनी शुरू हो जाये,
तो आपको अपना गुरु मिल गया।
वह गुरु भीतर बैठा हुआ है।
लेकिन हम सब बाहर गुरु को खोजते फिरते है और गुरु भीतर बैठा हुआ है।
परमात्मा ने प्रत्येक को वह विवेक, वह अन्त करण, वह कन्साइन्स,
वह अन्तर की वाणी दी है, जिससे अगर हम पूछना शुरू कर दें,
तो उत्तर मिलने शुरू हो जाते हैं।
और वे उत्तर कभी गलत नही होते।

अन्तर्वाणी साधना सार - संक्षेप

घन्टेभर के लिए,
चौबीस घन्टे मे बन्द कर लेना बाहर की दुनिया को।
भूल जाना, छोड देना बाहर का बाहर,
अपने भीतर डुबकी लगा लेना—मौन।
सिर्फ भीतर ध्यान को मोडकर सुनने की कोशिश करना
कि भीतर कोई बोलता है ? . कोई आवाज है ?

अगर तीन महीने कोई सिर्फ एक घन्टा चुप बैठकर
प्रतीक्षा कर सके धैर्य से,
तो उसे भीतर की आवाज का पता चलना शुरू हो जायेगा।
और एक बार भीतर का स्वर पकड लिया जाये,
तो आपको फिर ज़िन्दगी मे किसी से
सलाह लेने की जरूरत नही पडेगी।
भीतर की आवाज एक बार सुनाई पड जाये,
तो आपको अपना गुरु मिल गया।
वह गुरु भीतर बैठा हुआ है।

अधिक विस्तार के लिए देखें— 'गीता-दर्शन . अध्याय-चौथा'।

१९. संयम साधना-१

कृष्ण ने दो निष्ठाओ की बात कही है
एक वे हैं जो इन्द्रियो का सयम कर लेते है—
विषयो की तरफ इन्द्रियो की जो यात्रा है, उसे विदा कर देते हैं।
  यात्रा ही विदा कर देते हैं।
दूसरे वे ह जो विषयो को भोगने रहते हैं, फिर भी लिप्त नही होते।
इन दानो की साधनाएँ अलग-अलग हैं।

जो इन्द्रियो को विषयो तक जाने ही नहा देते,
वे इन्द्रियो और विषयो के बीच मे जो सेतु हे, ब्रिज हे, उसे ही तोड देते हैं।
दूसरे इन्द्रियो को विषयो तक जाने देते है।
इन दो सेतुओ का जो तोडना ह, उसे खयाल मे ले लेना जरूरी है।
दोनो ही स्थितियो से एक ही परम-अवस्था उपलब्ध होती है।

इन्द्रियाँ विषयो की तरफ भागती ही रहती है।
रास्ते पर गुजरे हैं आप—
सुन्दर भवन दिखाई पड गया ह,
सुन्दर चेहरा दिखाई पड गया हे,
सुन्दर कार दिखाई पड गयी है—
आपको पता ही नही चलता कि जब आपने कहा 'सुन्दर ह'—
तभी इन्द्रियाँ दौड चुकी।

ऐसा नही कि 'सुन्दर है'— ऐसा जानने के बाद इन्द्रियाँ दौडना शुरू करती हैं,
इन्द्रियाँ दौड चुकी होती है।
तब उनका निष्कर्ष, कन्क्लूजन है यह कि 'सुन्दर हे'।

'सुन्दर' हमारी निष्पति है, कारण नही।
'सुन्दर' की वजह से कोई आकर्षित होता है— ऐसा नही,
बल्कि आकर्षित होने की वजह से 'सुन्दर' का निष्कर्ष लेता है।
यह हमारा बौद्धिक निष्कर्ष है।
इन्द्रियो ने तो अनुभव किया है 'आकर्षण' का,
बुद्धि ने निर्णय लिया है 'सुन्दर' का।
इन्द्रियाँ पहुँच चुकी, इन्द्रियो ने स्पर्श कर लिया।

इन्द्रियो की गति सूक्ष्म है।
ऐसा नही कि जब आप किसी के शरीर को छूते है, तभी इन्द्रियाँ छूती है,
इन्द्रियो के छूने के अलग-अलग मार्ग हैं।
आँख देखती है और छू लेती है।
देखना आँख के छूने का ढग है, सुनना कान के छूने का ढग है।
ये सब छूने के ढग है, सब इन्द्रियाँ छूती है।

इन्द्रिय का अर्थ है, स्पर्श की व्यवस्था—उपकरण।
सूक्ष्म स्पर्श दूर से हो जाते है, स्थूल स्पर्श पास से करने पडते है।

इससे विपरीत काम भी चलता है पूरे समय
शरीर से सबको नही छुआ जा सकता।
लेकिन एक परफ्यूम डालकर,
बडे सूक्ष्म तल पर गन्ध से सब-कुछ छुआ जा सकता है।

आवाज, गन्ध, ध्वनि, दृश्य, दर्शन— वे सब छूते हैं।
जब आप सज-सवर के घर से निकलते है,
तब आप दूसरो की आँख से छुए जाने का निमन्त्रण लेकर निकल रहे है।
अगर कोई आँख से न छूए, तो आप बडे उदास लौटेंगे।
तो यह दोहरा काम चल रहा है, छूने का— छुए जाने का।
इन्द्रियाँ प्रतिपल इस काम मे सलग्न है।
आपको पता भी नही चलता है कि यह हो रहा है।
यह ख्याल मे भी नही आता।

इन्द्रियाँ पूरे समय स्पर्श को लालायित हैं,
स्पर्श देने को और लेने को आतुर हैं।

तो जिस व्यक्ति को इन्द्रियो को विषयो तक जाने से रोकना है,
उसे इन्द्रियो की इस सूक्ष्म स्पर्श-व्यवस्था के प्रति जागरूक होना पडेगा।
यह अत्यन्त सूक्ष्म व्यवस्था है।
इतनी शीघ्रता से घटित होता है इन्द्रियो का स्पर्श
कि आपको पता ही तब चलता है, जब घटित होता है।
इसके प्रति जागना पडेगा, इसे देखना पडेगा।
इसको स्मरण रखना पडेगा पूरे वक्त कि क्या हो रहा है।
इसके प्रति होश से भरना पडेगा कि 'तुम्हारी आँख सिर्फ देख रही है
या स्पर्श भी कर रही है'?

इन दोनो मे फर्क है।
अगर सिर्फ देखा हो, तो पीछे कोई लकीर नही छूटेगी,
और अगर स्पर्श भी किया हो, तो पीछे लकीर छूटेगी।
अगर सिर्फ देखा हो, तो लौटकर नही देखना पडेगा, तो स्मृति नही बनेगी,
अगर स्पर्श भी किया हो, तो स्मृति बनेगी।
अगर सिर्फ देखा हो, तो कल भी देखूँ, ऐसी आकाँक्षा नही जगेगी,
अगर स्पर्श किया हो—'फिर फिर देखूँ'— ऐसी आकाँक्षा जगेगी।

तो आँख से सिर्फ देखने का काम लें, कान से सिर्फ सुनने का,
हाथ से सिर्फ छूने का— स्पर्श करने का नही।

आप कहेगे कि छूना और स्पर्श करना तो बिल्कुल एक ही बात है,
लेकिन वही फर्क है, जो मैने आँख के लिए कहा।
कोई आवाज कान सुनता है— ठीक है,
लेकिन मीठी लग गयी, तो छू गयी।
फिर आकाँक्षा जगेगी, डिजायर पैदा होगी— और, और।
इन्द्रियो ने रस लेना शुरू कर दिया,
इन्द्रियाँ सिर्फ उपकरण न रही, मालिक हो गयी।

जो योगी इन्द्रिय को विषय से तोडता है,
वह विषय और इन्द्रिय के बीच स्पर्श को, सस्पर्श को तोडता है।
देखना तो नही तोडा जा सकता, देखने को तोडने से कुछ फर्क नही पडता—
आँख से स्पर्श विदा होना चाहिए।

. .लेकिन कब होगा ?
जब आप जागेगे तो स्पर्श विदा हो जायेगा।

क्या करेगे ?
जब भी देखे, तब होश से यह भी देखे कि 'स्पर्श हो रहा है कि नही' ?
' सिर्फ देख रहे ह ? मैने स्पर्श किया कि देखा ?

और जब आप पाएँगे कि दिखाई पडने लगा 'स्पर्श किया',
तभी आपको अनुभव हो जायेगा कि इन्द्रियाँ जहाँ-जहाँ स्पर्श करती है,
वही-वही बन्धन वो निर्मित करती हैं,
जहाँ-जहाँ स्पर्श नही करती, वहाँ-वहाँ बन्धन निर्मित नही होता।

सयमी का अर्थ है, जो इन्द्रियो से उपकरण का काम लेता है—भोग का नही।
सयमी का अर्थ है जो इन्द्रियो से भोगता नही, केवल उपयोग लेता है।
भोग बन्धन है, उपयोग बन्धन नही है।

इस स्पर्श की सूक्ष्म व्यवस्था को स्मरणपूर्वक देखने मे व्यवस्था क्रमश टूटती
चली जाता है और इस तरह से पहली घटना घट सकती है सयम की—
अर्थात् विषयो तक इन्द्रियो का गम तिरोहित हो जाता है।

ऐसा सयमी व्यक्ति परम सत्ता को उपलब्ध हो जाता है।

२०. संयम साधना–२

कृष्ण कहते हैं भोग करते हुए भी, भोग मे होते हुए भी—
स्पर्श करते हुए भी ज्ञानीजन बाहर हो जाते हैं।

इसकी प्रक्रिया और भी सूक्ष्म होगी, क्योंकि यह एक प्रतिशत के लिए है।
अभी जो मैने कहा, वह निन्यानबे प्रतिशत के लिए है।

फिर क्या करें ? कैसे सेतु टूटेगा ?
जब भोग करते हुए भी—
पूरा भोग करते हुए भी जो भोग के क्षण मे जाग सकता है
. भोग के क्षण मे !

भोजन कर रहे हैं,
डूब रहे है, .स्वाद की तरगे बह रही हैं, स्वाद मे उतर रहे हैं,
ठीक उसी क्षण मे स्वाद के प्रति जो जाग जाये—
देखे कि डूब रहा है, उतरा रहा है—
भागे नही, तोडे नही, स्वाद पूरी तरह लेते हुए सिर्फ होश से भर जाये—
तो अचानक दिखाई पडेगा कि "मैं भोक्ता नही हूँ— भोग है, मैं द्रष्टा हूँ।"
द्रष्टा का भोक्ता-भाव गिर जाता है।

सगीत को सुनेगा, कान गद्‌गद् होगे, आनन्दातिरेक मे नाचने लगेगे—
कान पूरी तरह रसमग्न हो जायेगा, लेकिन भीतर जो चेतना है,
वह जागकर देखेगी 'ऐसा हो रहा है'— 'दिस इज़ हेपनिंग',
और ऐसे स्मरण से कि 'ऐसा हो रहा है'—
तत्काल कोई गहरा सेतु टूट जाता है,
जहाँ से भीतर की चेतना भोक्ता नही रह जाती, सिर्फ द्रष्टा रहती है।
इस मार्ग से भी ज्ञानीजन उस परात्पर सत्य को उपलब्ध हो जाते हैं।

इस दूसरी साधना मे एक कठिनाई है।
डर है कि कही हम अपने को धोखा दे लें,
डिसेप्शन का डर है, आत्म-वचना का डर है।

एक आदमी कह सकता है कि "ठीक है,
हम तो वेश्या के घर नृत्य देखते है, साक्षी रहते है,
रस लेते है पूरा, लेकिन ज्ञानीजन की तरह लेते है।"

परीक्षा बहुत कठिन है।
लेकिन परीक्षाएँ भी निकाली गयी है, तन्त्र ने बहुत-सी परीक्षाएँ निकाली।
एक अद्भुत परीक्षा तन्त्र ने निकाली है, वह मै आपसे कहूँ।

वह परीक्षा यह थी कि जो व्यक्ति कहता है
कि मै भोगते हुए भी तटस्थ होता हूँ, द्रष्टा होता हूँ—
तन्त्र ने उसे कहा कि तुम शराब पियो और शराब पीते हुए तुम होश मे रहो।
और हम शराब पिलाये चले जाएँगे, तुम होश मे रहना।
अगर घटना घट गयी है साक्षी की, द्रष्टा की—
भोगते हुए की अवस्था मे—
तो शराब मे भी होश कायम रहना चाहिए।
क्योकि नशा करेगी इन्द्रियाँ, तुम जागे रहना, तुम मत सो जाना।

तन्त्र ने अद्भुत प्रक्रिया निकाली नशे की कि जब गाँजा, अफीम, शराब—
इन सबका कोई असर नही हुआ साधक पर—
वह जागा ही रहा उतने ही होश मे, जितने होश मे वह बिना नशे का था,
तब साँप से भी जीभ पर काटने के प्रयोग किये गये
और उसमे भी वह जागा रहा।

यह आमतौर पर हमे कठिन मालूम पडता है कि साधु-सन्यासी गाँजा पीये,
शराब पीये, पर वह कभी गहरी परीक्षा थी।
अब वह रोज का उपक्रम है, रोज साँझ को गाँजा पी रहे हैं।

लेकिन यह दूसरे वर्ग की ही परीक्षा है, पहले वर्ग की नही।

२१. शान्ति-सूत्र : नियति की स्वीकृति

जीवन मे छोटे बडे दुःख के कारण
कभी-कभी मन अशान्त, निराश और बेचैन बन जाता है।
तो ससार मे ही रहकर मन सदा शान्त, प्रसन्न और उत्साही कैसे रखें ?

नियति की बात अगर ठीक-से समझ लें तो मन शान्त हो जायेगा।
और कोई भी उपाय मन को शान्त करने का नही है,
और सब उपाय ऊपरी-ऊपरी हैं।
उनसे थोडी-बहुत राहत मिल सकती है, लेकिन मन शान्त नही हो सकता।
लेकिन नियति की बात थोडी कठिन है, समझ मे थोडी मुश्किल से पडती है।

मन अशान्त होता है, नियति का विचार कहेगा
उस अशान्ति को स्वीकार कर ले—
उसके विपरीत शान्त होने की कोशिश मत करें।
मन उदास है, नियति का विचार कहेगा
उदासी को स्वीकार कर ले, प्रफुल्लित होने की चेष्टा न करें।
क्योंकि असली अशान्ति, अशान्ति के कारण नही,
अशान्ति को दूर हटाने के विचार से पैदा होती है,
असली उदासी, उदासी से नही—'कैसे मै प्रफुल्लित हो जाऊँ'—
इस धारणा से, इस विचार से, इस आकाँक्षा से पैदा होती है।

उदासी को स्वीकार कर ले,
और आप पाएँगे शीघ्र ही कि उदासी विलीन हो गयी है।
उसकी स्वीकृति मे ही उसका अन्त है।

'कैसे दुःखी न हो'— यह न पूछें, दुःखी हैं, दुःख को स्वीकार कर लें।
वह भाग्य, वह नियति, वह है।

उससे लड़ें मत, उससे सब लड़ाई छोड़ दें।
उसके पार जाने की आकांक्षा भी छोड़ दें।
उससे विपरीत की माँग भी छोड़ दें।
उसे स्वीकार कर ले कि यह मेरी नियति, यह मेरा भाग्य है—
मैं दुःखी हूँ, बात यहाँ पूरी हो गयी।
दुःख से राजी हो जाएँ और फिर देखें कि दुःख कैसे टिक सकता है
अशान्ति को स्वीकार कर ले और आप शान्त हो जाएँगे।

हमारी अशान्ति अशान्ति नहीं है,
हमारी अशान्ति शान्ति की चाह से पैदा होती है।
इसलिए जो लोग शान्ति के लिए बहुत आकांक्षी हो जाते है,
उनसे ज्यादा अशान्त कोई भी नही होता।
जिस दिन से आपको खयाल हो जाता है कि शान्त कैसे होऊँ,
उस दिन से आपकी अशान्ति और बढ़ जाती है।
क्योंकि अशान्ति तो है ही, अब एक नयी अशान्ति भी शुरू हो गयी
कि शान्त कैसे हो जाऊँ।

और अशान्त आदमी कैसे शान्त हो सकता है?
और अशान्त आदमी पूजा भी करेगा तो उसकी अशान्ति ही
उसकी पूजा से प्रकट होगी।
और अशान्त आदमी ध्यान भी करेगा,
तो उसका ध्यान भी उसकी अशान्ति से ही निकलेगा।
अशान्त आदमी मन्दिर भी जायेगा तो अपनी बेचैनी को साथ ले जायेगा।
अशान्त गीता भी पढ़ेगा, तो करेगा क्या?
अशान्ति से अशान्ति ही निकल सकती है।
इसलिए आप कुछ भी करें, करेगा कौन?
वह जो अशान्त है, वही कुछ करेगा।

ध्यान रहे, एक बहुत मनोवैज्ञानिक आधारभूत नियम है .
कि अगर आप अशान्त है, तो आप जो भी करेंगे, अशान्ति उसमे बढ़ेगी।
कौन करेगा?

अशान्त आदमी कुछ करेगा—
वह और अशान्ति को दो-गुनी कर लेगा, तीन-गुनी कर लेगा।

ऐसा समझें कि एक लोभी आदमी है—
और वह लोभ छोड़ने की कोशिश कर रहा है।
वह करेगा क्या?
यह लोभ छोड़ने की कोशिश भी लोभ से ही निकलेगी, वह लोभी आदमी है!
तो अगर कोई उसको विश्वास दिला दे कि अगर वह इतना दान करता है,
तो स्वर्ग मे उसे भगवान् के मकान के बिलकुल पास मकान मिल जायेगा—
अगर यह पक्का हो जाये, तो वह दान कर सकता है।
मगर यह दान लोभ से निकलेगा।
स्वर्ग मे जगह बिलकुल निश्चित हो जाये—यह लोभ—तो दान कर सकता है।
मगर यह दान लोभ के विपरीत नही है, लोभ का हिस्सा है।

लोभी आदमी क्या करेगा?
जो भी करेगा, वह लोभ के कारण ही कर सकता है।
क्रोधी आदमी क्या करेगा?
वह जो भी करेगा, क्रोध के कारण ही कर सकता है।
आप जो है, उसके रहते आप जो भी करेंगे, वह आपसे ही निकलेगा।
और अगर नीम से पत्ता निकलेगा, तो वह कड़वा होगा।
और आपसे जो पत्ता निकलेगा, वह आपके ही स्वादवाला होगा।

नियति का विचार यह कहता है कि आप कुछ करे मत—
आप कर नही सकते कुछ, आप सिर्फ राज़ी हो जाएँ।

इसका प्रयोग करके देखें।
अशान्ति आयी है बहुत बार—
और आपने शान्त होने की कोशिश की और अब तक हो नही पाये;
इस दूसरे प्रयोग को करके देखें
अशान्ति आये, स्वीकार कर लें कि 'मैं अशान्त हूँ,
'मैं आदमी ऐसा हूँ कि मुझे अशान्ति मिलेगी,

"मैंने ऐसा कर्म किया होगा कि मुझे अशान्ति मिल रही है,
'नियति में मेरी अशान्ति का ही पात्र हूँ मैं'—इसे स्वीकार कर लें,
इस अशान्ति से रत्ती-मात्र संघर्ष न करें।

क्या होगा ?
जैसे ही आप स्वीकार करते हैं, अशान्ति तिरोहित होनी शुरू हो जाती है।
क्योंकि स्वीकार का भाव ही उसकी मृत्यु बन जाता है।
'जिस चीज को हम स्वीकार कर लेते हैं, उसके हम पार हो जाते हैं।
अशान्त हैं, अशान्ति को स्वीकार कर लें—लड़ें मत,
फिर देखें क्या होता है।
(स्वीकृति क्रान्तिकारी तत्त्व है।
और जिस बात को हम स्वीकार कर लेते हैं,
उससे छुटकारा उसी क्षण शुरू हो जाता है।)

(हमारा उपद्रव क्या है ?
सुख को हम पकड़ते है, दुःख को हम पकड़ते नही है,
दुःख से हम बचना चाहते है।
सुख कही छूट न जाये, इस कोशिश में होते हैं।
और हमे पता नही कि सुख और दुःख एक ही सिक्के के पहलू है।

तो जब हम सुख को पकड़ते है, तब हमने दुःख को पकड़ लिया,
वह उसी का छिपा हुआ पहलू है।)
तो हम उलटा काम कर रहे हैं,
सुख को पकड़ना चाहते है, दुःख को हटाना चाहते हैं।
यह नही होगा।
या तो दोनो को छोड़ दे, या दोनो के लिए राजी हो जाएँ।
दोनो हालत मे आपके जीवन मे क्रान्ति हो जायेगी।

लेकिन सुख-दुःख तो हमारी समझ मे आ जाते हैं,
पर जब कोई आ जाता है—और कहता है "शान्ति-अशान्ति" ?
तो लगता है यह कोई दूसरी बात कर रहा है।

बात वही है, वही के-वही सिक्के है, नाम बदल गये हैं ।
आप शान्ति चाहते है, इसलिए आपको अशान्त होना पडेगा,
क्योकि वह दूसरा हिस्सा कौन स्वीकार करेगा ?
आप शान्ति पा लेंगे तो अशान्ति कौन पायेगा ?
आधा हिस्सा कहाँ जायेगा ?
और सिक्के के दो पहलू अलग नही किये जा सकते ।
आप अशान्ति को भी राजी हो जाएँ,
अगर शान्ति चाहते है, तो दोनो से राजी हो जाएँ ।

(दोनो के लिए राजी होने मे ही क्रान्ति घट जाती है ।
क्योकि साधारणतया मन दोनो के लिए राजी नही होता,
एक के लिए राजी होता है ।
मन की तरकीब यह है कि आधे को पकडो, आधे को छोडो ।
यही मन का द्वन्द्व है, यही उसका कष्ट है ।
जब आप दोनो के लिए राज़ी हो गये, आप मन के पार हो गये ।
या दोनो को छोड दे, या दोनो को पकड ले— दोनो एक ही बात है ।)

जगत् मे दो उपाय है, दो विधियाँ है—
परम अनुभूति को पाने की दो विधियाँ है
दोनो को छोड दे— यह सन्यासी का मार्ग है ।
दोनो को पकड ले— यह गृहस्थ का मार्ग है ।
दोनो का परिणाम एक है,
क्योकि मन की तरकीब है एक को पकडना और एक को छोडना ।
दोनो को छोडें— तो भी मन छूट जाता है,
दोनो को पकड लें— तो भी मन छूट जाता है ।
क्योकि मन आधे के साथ जी सकता है ।

ये दो उपाय हैं
या तो दोनो छोड दें— सुख भी, दु ख भी, शान्ति भी, अशान्ति भी ।
फिर आपको कोई अशान्त न कर सकेगा, या दोनो पकड लें ।
दोनो पकडना 'सहज-योग' है ।

इन मित्र ने यही पूछा है कि घर मे, ससार मे रहते हुए कैसे शान्ति पाऊँ ?

पहली बात

शान्ति पाने की कोशिश मत करें, अशान्ति को स्वीकार कर लें—
आप शान्त हो जाएँगे।
फिर दुनिया मे कोई आपको अशान्त नही कर सकता।
अगर मै अशान्ति के लिए राजी हूँ, कौन मुझे अशान्त कर सकता है ?
अगर मै गाली के लिए राजी हूँ, तो कौन मेरा अपमान कर सकता है ?
मैं गाली के लिए राजी नही हूँ, इसलिए कोई मेरा अपमान कर सकता है।
मैं अशान्ति के लिए राजी नही हूँ, इसलिए कोई भी अशान्त कर कर सकता है।

अगर हम ठीक-से मन की प्रक्रिया को समझ ले,
तो मन की प्रक्रिया को समझकर जीवन बदल जाता है।
प्रक्रिया यह है कि मन हमेशा चीजो को दो मे तोड लेता है—
मान-अपमान, सुख-दु ख, शान्ति-अशान्ति, ससार-मोक्ष—
दो मे तोड लेता है और कहता है— एक नही चाहिए, अरुचिकर है,
और एक चाहिए, वह रुचिकर है— बस, यह मन का खेल है।

इस मन स बचने के दो उपाय है
या तो दोनो के लिए राजी हो जाएँ— मन मर जायेगा,
या दोनो को छोड दे— तो भी मन मर जायेगा।
जो आपके लिए अनुकूल पडे, वैसा कर लें—
अन्यथा आपके शान्त होने का फिर कोई उपाय नही है।

जब तक आप शान्त होना चाहते है, तब तक शान्त न हो सकेंगे।
जब तक आप सुखी होना चाहते है, दु ख आपका भाग्य होगा।
और जब तक मोक्ष के लिए पागल है, ससार आपकी परिक्रमा होगी।
दोनो के लिए राजी हो जाएँ—माँग ही छोड दें—
कह दे, 'जो होता है, मैं राजी हूँ'।

इसका थोडा प्रयोग करके देखें— चौबीस घन्टे, ज्यादा नही।
लडने का प्रयोग तो आप हजारो जन्मो से कर रहे हैं,

(एक चौबीस घन्टे तय कर लें कि आज सुबह छह बजे से
कल सुबह छह बजे तक जो भी होगा, उसको मैं स्वीकार कर लूंगा,
जहाँ भी हो विरोध, द्वन्द्व खड़ा नहीं करूँगा।

करके देखें,
चौबीस घन्टे मे आपकी ज़िन्दगी मे एक नयी हवा का प्रवेश हो जायेगा।
जैसे कोई झरोखा अचानक खुल गया
और ताजी हवा आपकी ज़िन्दगी मे आनी शुरू हो गयी।
फिर ये चौबीस घन्टे कभी खत्म न होंगे।
एक दफा इसका अनुभव हो जाये, फिर आप इसमे गहरे उतर जाएंगे।

कोई विधि नहीं है शान्त होने की, शान्त होना जीवन-दृष्टि है।
कोई मेथड नहीं होता कि भगवान् का नाम जप लिया और शान्त हो गये।
अशान्ति को स्वीकार कर लें, दुःख को स्वीकार कर लें,
मृत्यु को स्वीकार कर ले, फिर आपकी कोई मृत्यु नहीं है।

जिसे हम स्वीकार कर लेते हैं, उसके हम पार हो जाते हैं)

शान्ति-सूत्र · नियति की स्वीकृति : सार-संक्षेप

कोई विधि नहीं है शान्त होने की, शान्त होना जीवन दृष्टि है।
अशान्ति को स्वीकार कर लें, दुःख को स्वीकार कर लें,
फिर आपको कोई अशान्ति नहीं, दुःख नहीं।
जिसे हम स्वीकार कर लेते है, उसके हम पार हो जाते हैं।
स्वीकृति क्रान्तिकारी तत्त्व है।

४

साधना सूत्र

४. साधना सूत्र

भगवान्श्री रजनीश के साधकों को लिखे गये ध्यान-साधना-सम्बन्धी २१ पत्र

साधना सूत्र : प्रवेश के पूर्व

अब प्रस्तुत हैं भगवान्‌श्री के विभिन्न साधको को सकेत कर व्यक्तिगत रूप से लिखे गये साधना-सम्बन्धी इक्कीस पत्र।

ये पत्र "प्रेम के फूल, ढाई आखर प्रेम का, अन्तर्वीणा, पद घुँघरू बाँध, तत्त्वमसि तथा Turning In, Gateless Gate, The Silent Music, What is Meditation" आदि विविध पत्र-सकलनो से चुने गये हैं।

इन पत्रो मे साधना-सूत्रो की ओर सूक्ष्म इशारे हैं।
इन सूत्रो के अभ्यास के लिए किसी भी प्रकार के— शारीरिक या मानसिक— प्रयास-विशेष की आवश्यकता नही है।
बस, थोडी समझ व जागरूकता पर्याप्त है।
चाहे तो इन्हे साख्य की विधियाँ कह लें।

वेदान्त योग्यता की दृष्टि से साधको की तीन कोटियाँ मानता है
एक, उत्तम अधिकारी, दो, मध्यम अधिकारी, तीन, अधम अधिकारी।

यदि आप उत्तम अधिकारी हैं— या साधना कर बन चुके है—
तो अवश्य ये सूत्र आपके काम पड जाएँगे।
या फिर सक्रिय-निष्क्रिय विधियो के सतत अभ्यास से
जब ध्यान मे प्रवेश हो जाये, समझ थोडी बढ जाये—
विवेक जाग्रत होने लगे, अवेयरनेस बढने लगे—
तब इन सूत्रो मे प्रवेश सरलता से हो सकेगा, क्योकि ये सूत्र करने से, क्रिया से कम तथा समझ, विवेक व अवेयरनेस से ज्यादा सम्बन्धित हैं।

प्रस्तुत पत्र जिन साधको को सम्बोधित कर लिखे गये हैं,
यहाँ पत्रो के साथ उनके नाम रखने की आवश्यकता नही समझी गयी है,
अत उनके नाम न देकर सीधे ही पत्र रख दिये गये हैं।
और यही क्रम पाँचवें अध्याय "ध्यानोपलब्धि" मे भी रखा गया है।

१. तीन सूत्र— साक्षी-साधना के

साक्षी-भाव की साधना के लिए इन तीन सूत्रो पर ध्यान दो

१ संसार के कार्य मे लगे हुए श्वास के आवागमन के प्रति जागे हुए रहो।
शीघ्र ही साक्षी का जन्म हो जाता है।

२. भोजन करते समय स्वाद के प्रति होश रखो।
शीघ्र ही साक्षी का आविर्भाव होता है।

३ निद्रा के पूर्व जब कि नींद आ नही गयी है और जागरण जा रहा है—
सम्हलो ओर देखो।
शीघ्र ही साक्षी पा लिया जाता है।

२. चेतना के प्रतिक्रमण का रहस्य-सूत्र

अंधकार बाहर ही है ।

भीतर तो सदा ही आलोक है ।

ध्यान बहिर्गामी है तो रात्रि है ।

ध्यान अन्तर्गामी बने तो रात्रि दूर हो जाती है, और सुबह का जन्म हो जाता है ।

बाहर से हटावें मन को ।

मुड़ें भीतर की ओर ।

शब्द से रहें— मौन हो ।

विचार से विश्राम लें— शून्य हो ।

बाह्य को भूलें— और स्मरण करें उसका जो कि भीतर है ।

जब भी समय मिले— चेतना की धारा को भीतर की ओर ले चलें ।

सोते समय— सोने के पूर्व आँखें बन्द करें और भीतर देखें ।

जागते समय— ज्ञात हो कि नींद टूट गयी है तो आँखें न खोलें—
पहले देखें भीतर ।

और धीरे-धीरे चेतना के क्षितिज पर सूर्योदय हो जायेगा ।

और जिसके भीतर प्रकाश है, फिर उसके बाहर भी अन्धकार नहीं रह जाता है ।

३. निद्रा में जागरण की विधि जागृति मे जागना

जागृति मे ही जागें।

निद्रा या स्वप्न मे जागने का प्रयास न करें।

जाग्रत मे जागने के परिणाम स्वरूप ही अनायास निद्रा या स्वप्न मे भी जागरण उपलब्ध होता है।

लेकिन उसके लिए करना कुछ भी नही है।

कुछ करने से उसमे बाधाएँ ही पैदा हो सकती है।

निद्रा तो जागरण का ही प्रतिफलन है।

जो हम जागते मे हैं, वही हम सोते मे हैं।

यदि हम जागते मे ही सोये हुए हैं, तो ही निद्रा भी निद्रा है।

जागते मे विचारो का प्रवाह ही सोते मे स्वप्नो का जाल है।

जागने मे जागते ही निद्रा मे भी जागरण का प्रतिफलन शुरू हो जाता है।

जागते मे विचार नही तो फिर सोते मे स्वप्न भी मिट जाते हैं।

४. ब्रह्म का मौन-संगीत

ध्वनि से ध्वनिशून्यता मे जाना मार्ग है।

धीरे-धीरे 'ओऽम्-जैसी' ध्वनि का सुर मे उच्चार करो।

और जैसे ध्वनि-शून्यता मे प्रवेश करे, वैसे ही तुम भी कर जाओ।

या, किन्ही दो ध्वनियो के अन्तराल मे ठहरो।

और तुम स्वय ध्वनिशून्यता हो जाओगे।

या, एक झरने की अनवरत ध्वनि मे नहाओ— या किसी अन्य की।

या; कानो मे अगुलियाँ डालकर सब ध्वनियो की उद्गम ध्वनि को सुनो।

और तब अकस्मात् तुम्हारे ऊपर ब्रह्म के मौन-सगीत का विस्फोट हो जायेगा।

किसी भी ढग से ध्वनिशून्यता के खड्ड मे गिर जाओ—

और तुम प्रभु को पा लोगे।

५. सुनने की कला

जो भी मैं कहता हूँ, उसमे नया कुछ नही है ।

न ही उसमे कुछ भी पुराना है।

या वह दोनो है—पुराने-से-पुराना और नये-से-नया।

और यह जानने के लिए तुम्हे मुझे सुनने की जरूरत नही ।

ओह ! सुनो प्रात पक्षियो के कलरव को—

या फूलो को और धूप मे चमकती घास की बालियो को—

और तुम उसे सुन लोगी ।

और यदि तुम्हे सुनना नही आता, तो तुम मुझसे भी न जान सकोगी ।

इसलिए वास्तविक बात यह नही है कि तुम क्या सुनती हो—

वरन् तुम कैसे सुनती हो ।

क्योकि सन्देशा तो सब जगह है— सब जगह— सब जगह ।

अब मै तुम्हे सुनने की कला बतलाता हूँ

' घूमती रहो जब तक कि प्राय निढाल न हो जाओ ।

या नाचो—या तीव्रता से श्वास लो और तब जमीन पर गिरकर सुनो ।

अथवा, जोर-जोर से अपना नाम दोहराओ जब तक कि थक ही न जाओ ।

और तब अचानक रुको और सुनो ।

अथवा, नीद-प्रवेश के बिन्दु पर, जब कि नीद अभी भी नही आयी हो

और बाह्य-जागरण चला गया हो—अचानक सतर्क हो जाओ और सुनो ।

और, तब तुम मुझे सुन लोगी ।

६. शरीर मे घनिष्ठता से जीने का आनन्द

शरीर मे आत्मीयता से जियो ।

और, घनिष्ठता से ।

शरीर को अधिक अनुभव करो और शरीर को अधिक अनुभव करने दो ।

यह आश्चर्यजनक है कि कितने ही लोग स्वय की शारीरिक सत्ता के प्रति प्राय अनभिज्ञ हैं !

शरीर को अत्यधिक दबाया गया है और जीवन को नकारा गया है ।

इसी कारण यह मात्र एक मृत बोझ है, एक जीवन्त आह्लाद नही ।

इसी कारण मैं जोर देता हूँ कि शरीर मे वापिस लौट जाओ और उसकी गतिविधियो मे आश्चर्यजनक उल्लास को पुन प्राप्त करो ।

विशुद्ध गतिविधियो मे ।

इसे ध्यान ही बना लो और तुम्हे बहुत लाभ होगा ।

इतना कि समझ के बाहर हो ।

७. सजग होकर स्वप्न देखना— एक ध्यान

स्वप्न देखने को सचेतन रूप से ध्यान बनाओ।

और, भलिभाँति जानो कि सजग होकर स्वप्न देखना अवलोकन के नये द्वार खोलता है।

लेट जाओ, विश्राम करो और स्वप्न देखो।

पर सो नही जाना।

भीतर सजग बनी रहो।

प्रतीक्षा करो और सतर्क रहो।

मन मे जो भी स्वप्न आये उसे देखो।

पहले से कोई योजना न करो।

कोई भी स्वप्न देखो, क्योकि स्वप्न मे सारा ससार तुम्हारा है।

जैसा तुम्हे भाये, स्वय को स्वप्न मे देखो।

स्वप्न देखो और सन्तुष्ट हो जाओ।

सन्तुष्ट अपने सपनो से— क्योकि वे तुम्हारे हैं।

और स्मरण रखो कि तुम्हारे स्वप्नो की भाँति कुछ भी तुम्हारा नही हो सकता है— क्योकि तुम स्वय भी एक स्वप्न-सत्ता हो।

और इसलिए भी, क्योकि तुम्हारे स्वप्न मे ही तुम्हारी इच्छाएँ वास्तविक होती है— सिर्फ तुम्हारे स्वप्नो मे।

लेकिन उनसे तादात्म्य मत करो।

उनकी साक्षी बनो।

सजग रहो।

और, तब, अचानक स्वप्न विलीन हो जायेगा।

और, केवल तुम्ही होओगी।

और, प्रकाश होगा।

८. स्मरण रखो एक का

सदैव एक का स्मरण रखो जो कि शरीर के भीतर है।

चलते हुए, बैठे हुए, खाते हुए— या कुछ भी करते हुए एक का स्मरण रखो,

जो कि न तो चल रहा है, न ही बैठा है, न ही खा रहा है। *

सब करना ऊपर सतह पर है।

और सब करने के पार हमारा होना है।

इसलिए सब करने मे 'अकर्त्ता' के प्रति, चलने मे 'अचल' के प्रति सजग रहो।

एक दिन मुल्ला नसरुद्दीन की पत्नी अपने कमरे की ओर भागी—

जब उसने एक भारी धम्म की आवाज़ सुनी।

"घबरानेवाली कोई बात नही"—मुल्ला ने कहा

"मेरा यह चोगा ज़मीन पर गिर गया था।"

"क्या ? और इतने जोर का धमाका हुआ ?"— उसकी बीबी ने पूछा।

"हाँ, उस समय मैं उसके भीतर जो था"— मुल्ला ने कहा।

९. ध्यान—मृत्यु पर

मृत्यु के सीधे साक्षात् मे जीवन अधिक प्रामाणिक हो जाता है।

लेकिन हम सदा मृत्यु के तथ्य से बचने की कोशिश करते हैं।

और इससे जीवन मिथ्या और कृत्रिम बन जाता है।

और मृत्यु से भी बदतर।

क्योंकि प्रामाणिक मृत्यु का भी अपना एक सौन्दर्य है।

जब कि मिथ्या जीवन मात्र कुरूप है।

मृत्यु पर ध्यान करो—

क्योंकि मृत्यु का साक्षात् किये बिना जीवन को जानने का उपाय नही है।

और वह सब कही है।

जहाँ कही जीवन है, मृत्यु भी है।

वे, वास्तव मे, उसी एक घटना के दो पहलू हैं।

और जब कोई यह जान लेता है—वह दोनो का अतिक्रमण कर जाता है।

और केवल उसी अतिक्रमण मे चेतना समग्ररूपेण खिलती है।

और होता है सत्ता का आनन्द।

(१०. स्वयं को पाना हो तो दूसरों पर ज्यादा ध्यान मत देना)

फकीर झुगान (Zuigan) सुबह होते ही जोर से पुकारता

"झुगान ! झुगान !"

सूना होता उसका कक्ष ।

उसके सिवाय और कोई भी नही ।

सूने कक्ष मे स्वय की ही गूँजती आवाज को वह सुनता

"झुगान ! झुगान !"

उसकी आवाज को आसपास के सोये वृक्ष भी सुनते ।

वृक्ष पर सोये पक्षी भी सुनते ।

निकट ही सोया सरोवर भी सुनता ।

और फिर वह स्वय ही उत्तर देता "जी, गुरुदेव ! आज्ञा, गुरुदेव !"

उसके इस प्रत्युत्तर पर वृक्ष हँसते ।

पक्षी हँसते ।

सरोवर हँसता ।

और फिर वह कहता

"ईमानदार बनो, झुगान ! स्वय के प्रति ईमानदार बनो !"

वृक्ष भी गभीर हो जाते ।

पक्षी भी ।

और वह कहता "जी, गुरुदेव !"

और फिर कहता "स्वय को पाना है तो दूसरों पर ज्यादा ध्यान मत देना"

वृक्ष भी चौंककर स्वय का ध्यान करते ।

पक्षी भी ।

सरोवर भी ।

और झुगान कहता "जी, हाँ ! जी, हाँ !"
और फिर इस एकालाप के बाद झुगान बाहर निकलता तो वृक्षो से कहता
"सुना ?"
पक्षियो से कहता "सुना ?"
सरोवर से कहता "सुना ?"
और फिर हँसता ।
कहकहे लगाता ।

कहते हैं वृक्षो को, पक्षियो को, सरोवरो को उसके कहकहे अभी भी याद हैं।
लेकिन, मनुष्यो को ?
नही— मनुष्यो को कुछ भी याद नही है ।
यह मनो-नाटक (Mono Drama) तुम्हारे बडे काम का है ।
इसका तुम रोज अभ्यास करना ।
सुबह उठकर— उठते ही बुलाना जोर से—" . ... "
ध्यान रहे कि धीरे नही— बुलाना है जोर से ।
इतने जोर से कि पास-पडोस सुने " ... . "
फिर कहना "जी, गुरुदेव !"
फिर कहना "स्वय को पाना है तो दूसरो पर ज्यादा ध्यान मत देना ।"
और फिर कहना "जी, हाँ ! जी, हाँ !"
और यह सब इतने जोर से कहना कि तुम्हें ही नही,
औरो को भी इसका लाभ हो ।
फिर हँसते हुए बाहर आना ।
कहकहे लगाना ।
और हवाओ से पूछना "सुना ?"
बादलो से पूछना "सुना ?"

११ अदृश्य के दृश्य और अज्ञात के ज्ञात होने का उपाय — ध्यान

अदृश्य को दृश्य करने का उपाय पूछते हैं ?

दृश्य पर ध्यान दें ।

मात्र देखे नही, ध्यान दें ।

अर्थात् जब फूल को देखें तो स्वय का सारा अस्तित्व आँख बन जाये ।

पक्षियो को सुने तो सारा तन-प्राण कान बन जाये ।

फूल देखे तो सोचें नही ।

पक्षियो को सुनें तो विचारे नही ।

समग्र चेतना (Total Consciousness) से देखें या सुनें या सूंघें या स्वाद लें या स्पर्श करें ।

क्योकि, सवेदनशीलता (Sensitivity) के उथलेपन के कारण ही अदृश्य दृश्य नही हो पाता है और अज्ञान अज्ञात ही रह जाता है ।

सवेदना को गहरावे ।

सवेदना मे तैरे नही, डूबें ।

इसे ही मैं ध्यान (Meditation) कहता हूँ ।

और ध्यान मे दृश्य भी खो जाता है और अन्तत द्रष्टा भी ।

बचता है केवल दर्शन ।

उस दर्शन मे ही अदृश्य दृश्य होता है और अज्ञात ज्ञात होता है ।

यही नही— अज्ञेय (Unknowable) भी ज्ञेय हो जाता है ।

और ध्यान रखें कि जो भी मैं लिख रहा हूँ— उसे भी सोचें न, वरन् करें ।

'कागज लेखी' से न कभी कुछ हुआ है, न हो ही सकता है ।

'आँखन देखी' के अतिरिक्त कोई और द्वार नही है ।

१२. जीवन नृत्य है

आकाश से थोडा तालमेल बढा।

आँखो को विराट् को पीने दे।

दिन हो या रात—जब भी मौका मिले आकाश पर ध्यान कर।

आकाश को उतरने दे हृदय मे।

शीघ्र ही बीच से परदा उठने लगेगा।

भीतर और बाहर का आकाश आलिंगन करने लगेगा।

स्वय के मिटने मे इससे सहायता मिलेगी।

अह के विसर्जन मे इससे मार्ग बनेगा।

और यदि अनायास ही आकाश पर ध्यान करते-करते तन-मन नृत्य को आतुर हो उठे तो स्वय को रोकना नही— नाचना।

हृदयपूर्वक नाचना।

पागल होकर नाचना।

उस नृत्य से जीवन रूपान्तरण की अनूठी कुजी हाथ लग जाती है।

क्योकि नृत्य ही है अस्तित्व।

अस्तित्व के होने का ढग ही नृत्यमय है।

अणु-परमाणु नृत्य मे लीन हैं— ऊर्जा अनन्त रूपो मे नृत्य कर रही है।

जीवन नृत्य है।

१३. स्वयं की कील

* ससार का चक्र घूम रहा है, लेकिन उसके साथ तुम क्यो घूम रहे हो ?

शरीर और मन के भीतर जो है, उसे देखो।

वह तो न कभी घूमा है, न घूम रहा है, न घूम सकता है।

वही तुम हो।

"तत्वमसि, श्वेतकेतु"।

सागर की सतह पर लहरें हैं, पर गहराई मे ?

वहाँ क्या है ?

सागर को उसकी सतह ही समझ लें तो बहुत भूल हो जाती है।

बैलगाडी के चाक को देखना।

चाक घूमता है, क्योकि कील नही घूमती है।

स्वय की कील का स्मरण रखो।

उठते, बैठते, सोते, जागते उसकी स्मृति को जगाये रखो।

धीरे-धीरे सारे परिवर्तन के पीछे उसके दर्शन होने लगते हैं

जो कि परिवर्तन नही है।

१४. स्वीकार से दुःख का विसर्जन

दुःख को स्वीकार करें।

दुःख से भागें नही।

जो दुःख से भागता है, दुःख उससे कभी नही भागता।

जो दुःख से नही भागता है, दुःख उससे भाग जाता है।

यही शाश्वत नियम है।

दुःख से बचने के लिए ध्यान न करें।

ध्यान करें—ध्यान के लिए ही।

ध्यान के आनन्द के लिए ही ध्यान करें।

और दुःख फिर खोजे से भी नही मिलेगा।

१५. अवलोकन—वृत्तियों की उत्पत्ति, विकास व विसर्जन का

(भीतर की आवाज पर ज्यादा से ज्यादा ध्यान दो।
उसे सुनो एकाग्र होकर।
उसके द्वारा साक्षी जन्म लेना चाह रहा है।)
क्रोध हो कि प्रेम— जैसे ही भीतर से कोई कहे
"देख ले! यह है तेरा क्रोध!"—
वैसे ही शान्त-एकाग्रता से देखने मे लग जाना।
निश्चय ही, देखते ही वृत्ति विलीन हो जायेगी।
तब वृत्ति को विलीन होते देखना।
विलीन हो गया देखना।
वृत्ति का उठना, फैलना, विलीन होना, विलीन हो जाना—जब चारो
स्थितियाँ समग्ररूपेण देख ली जाती हैं तब ही वृत्तियो का रूपान्तरण
(Transformation) होता है।
और चित्त-वृत्तियो का रूपान्तरण ही निरोध है।
और ऐसे निरोध को ही पतजलि ने योग कहा है।
योग द्वार है उसका जो कि चित्त के पार है।
और जो चित्त के पार है वही शाश्वत है, वही सत्य है।

१६ क्रोध के दर्शन से क्रोध की ऊर्जा का रूपान्तरण

जब क्रोध आये तो दो-चार गहरी साँसें लेना और क्रोध के साक्षी बनना।

क्रोध न तो करना ही और न क्रोध से लड़ना ही।

क्रोध को देखना।

क्रोध के दर्शन से क्रोध की ऊर्जा (Energy) क्षमा मे रूपान्तरित हो जाती है।

पूछोगे क्यो ?

ऐसे ही जैसे १०० डिग्री तापमान पर पानी वाष्पीभूत हो जाता है।

या, ऐसे ही जैसे हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के मिलने से जल निर्मित हो जाता है।

१७ काम-ऊर्जा का रूपान्तरण— संभोग में साक्षीत्व से

काम-वासना स्वाभाविक है।

उससे लडना नही, अन्यथा उसके विकृत-रूप चित्त को घेर लेंगे।

काम (Sex) को समझो और काम-कृत्य (Sex-Act) को भी ध्यान का विषय बनाओ।

काम मे, सम्भोग मे भी साक्षी (Witness) बनो।

सम्भोग मे साक्षी-भाव के जुडते ही काम-ऊर्जा (Sex energy) का रूपान्तरण प्रारम्भ हो जाता है।

वह रूपान्तरण ही ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्य काम का विरोध नही— काम-ऊर्जा का ही ऊर्ध्वगमन है।

जीवन मे जो भी है उसे मित्रता से और अनुग्रह से स्वीकार करो।

शत्रुता का भाव अधार्मिक है।

स्वीकार से परिवर्तन का मार्ग सहज ही खुलता है।

शक्ति तो सदा ही तटस्थ है।

वह न बुरी है, न अच्छी।

शुभ या अशुभ उससे सीधे नही— वरन् उसके उपयोग से ही जुडे हैं।

१८ काम-वृत्ति पर ध्यान

काम-वासना से भयभीत न हो ।

क्योकि भय हार की शुरूआत है ।

उसे भी स्वीकार करें ।

वह भी है और अनिवार्य है ।

हाँ— उसे जानें जरूर— पहचानें ।

उसके प्रति जागें ।

उसे अचेतन (Unconscious) से चेतन (Conscious) बनावें ।

निंदा से यह कभी भी नही हो सकता है ।

क्योकि, निंदा दमन (Repression) है ।

और दमन ही वृत्तियो को अचेतन मे ढकेल देता है ।

वस्तुत तो दमन के कारण ही चेतना चेतन और अचेतन मे

विभाजित हो गई है ।

और यह विभाजन समस्त द्वन्द्व (Conflict) का मूल है ।

यह विभाजन ही व्यक्ति को अखण्ड नही बनने देता है ।

और अखण्ड बने बिना शान्ति का, आनन्द का, मुक्ति का कोई मार्ग नही है ।

इसलिए काम-वासना पर ध्यान करो ।

जब वह वृत्ति उठे तो ध्यानपूर्वक (Mindfully) उसे देखो ।

न उसे हटाओ, न स्वय उससे भागो ।

उसका दर्शन अभूतपूर्व अनुभूति मे उतार देता है ।

और ब्रह्मचर्य इत्यदि के सम्बन्ध मे जो भी सीखा-सुना हो,

उसे एकबारगी कचरे की टोकरी मे फेंक दो ।

क्योकि, इसके अतिरिक्त ब्रह्मचर्य को उपलब्ध होने का और कोई मार्ग नही है ।

१९ विचारों के पतझड़

विचारो के प्रवाह मे बहना भर नही ।

बस जागे रहना ।

जानना स्वय को पृथक और अन्य ।

दूर और मात्र द्रष्टा ।

जैसे राह पर चलते लोगो की भीड को देखते हैं,

ऐसे ही विचारो की भीड को देखना ।

जैसे पतझड मे सूखे पत्तो को चारो ओर उडते देखते है,

वैसे ही विचारो के पत्तो को उडते देखना ।

न उनके कर्त्ता बनना ।

न उनके भोक्ता ।

फिर शेष सब अपने-आप हो जायेगा ।

उस शेष को ही मैं ध्यान (Meditation) कहता हूँ ।

२० आनन्दातिरेक और भगवत्-मादकता का मार्ग

कल से निम्नलिखित ध्यान प्रारम्भ करो ।

और जानो कि यह आदेश है ।

अब तुम मेरी इतनी अपनी हो कि सिवाय आदेश देने के मैं और कुछ नही कर सकता ।

पूर्व-आवश्यकताएँ

(१) प्रफुल्लता से करो, (२) शिथिलता मे करो,

(३) और, आनन्दित होओ । (४) प्रात स्नान करने के बाद इसे करो ।

ध्यान के चरण

१ पहला चरण — लयबद्धता से गहरी श्वास लो ।
तेज नही, बल्कि धीमी गति से ।
दस मिनट के लिए ।

२ दूसरा चरण — मन्द गति से लय मे नाचो ।
आनन्दित होओ ।
जैसे कि उसमे बह रहे हो ।
दस मिनट के लिए ।

३ तीसरा चरण — महामन्त्र हू-हू का उपयोग करो ।
हू दस मिनट के लिए ।
नाचना व हिलना-डोलना चलता रहे ।
गम्भीर मत होना ।

४ चौथा चरण — आँखें बन्द कर लो और मौन हो जाओ ।
अब नाचना, या हिलना-डोलना नही करो ।
खडी रहो, बैठ जाओ या लेट जाओ—
जैसा भी तुम्हे ठीक लगे ।

६ पर ऐसी हो रहो, जैसे मर ही गयी हो।
गहरे डूबने का अनुभव करो।
समर्पित हो जाओ और स्वय को समग्र के हाथो मे
छोड दो।
दस मिनट के लिए।

बाद की आवश्यकताएँ

१ पूरे दिन आनन्दातिरेक मे जियो—भगवत् मादकता मे।
उसमे बहो और खिलो।
और जब कभी मन डूबता-सा लगे— भीतर कहो हू-हू-हू
और बाहर हँसो।
हँसो बिना किसी कारण के।
और, इस पागलपन को स्वीकार करो।

२ सोने के पहले, महामन्त्र हू-हू-हू का उच्चार करो।
दस मिनट के लिए।
और तब स्वय पर हँसो।

३ प्रात जब तुम्हे लगे कि जाग खुल गयी है, पुन महामन्त्र हू-हू-हू का
उच्चार करो।
दस मिनट के लिए।
और तब हृदयपूर्वक हँसते हुए दिन का प्रारम्भ करो।

४ और, सदैव स्मरण रखो कि मैं तुम्हारे साथ हूँ।

२१ संवेदनशीलता बढ़ाने का प्रयोग

कभी आरामकुर्सी पर बैठकर ही अनुभव करें कि कितनी सवेदनाएँ घट रही हैं :

कुर्सी पर आपके शरीर का दबाव।

कुर्सी से आपका स्पर्श।

ज़मीन पर रखे आपके पैर।

हवा का झोका जो आपको छू रहा है।

फूलो की गन्ध जो खिडकी से भीतर आ गई है।

चौके मे बर्तनो की आवाज़।

बनते हुए भोजन की गन्ध जो आपके नासापुटो मे भर गयी है।

छोटे बच्चे की किलकारी छूती है और आह्लादित कर जाती है।

किसी का चीत्कार, किसी का रोना जो आपको कम्पित कर जाता है।

. अगर कोई रोज़ पन्द्रह मिनट चुप बैठकर अपने चारो तरफ की सवेदनाओं का ही अनुभव करे, तो भी बडे गहरे ध्यान को उपलब्ध होने लगेगा।

५

ध्यानोपलब्धि

५. ध्यानोपलब्धि

ध्यान में घटनेवाली घटनाओं, बाधाओं, अनुभूतियो, उपलब्धियो, सावधानियों, सुझावों तथा निर्देशो-सम्बन्धी साधको को लिखे गये भगवान्श्री रजनीश के २१ पत्र

१ अन्ततः सब खो जाता है

सुबह सूर्योदय के स्वागत मे जैसे पक्षी गीत गाते हैं—

ऐसे ही ध्यानोदय के पूर्व भी मन-प्राण मे अनेक गीतो का जन्म होता है।

वसन्त मे जैसे फूल खिलते हैं,

ऐसे ही ध्यान के आगमन पर अनेक-अनेक सुगन्धें आत्मा को घेर लेती हैं।

और वर्षा मे जैसे सब ओर हरियाली छा जाती है,

ऐसे ही ध्यान की वर्षा मे भी चेतना नाना रगो से भर उठती है।

यह सब और बहुत-कुछ भी होता है।

लेकिन, यह अन्त नही, बस आरम्भ ही है।

अन्तत तो सब खो जाता है।

रग, गन्ध, आलोक, नाद—सभी विलीन हो जाते हैं।

आकाश जैसा अन्तर्आकाश (Inner Space) उदित होता है।

शून्य, निर्गुण, निराकार।

उसकी करो प्रतीक्षा।

उसकी करो अभीप्सा।

लक्षण शुभ हैं, इसलिए एक क्षण भी व्यर्थ न खोओ और आगे बढो।

मै तो साथ हूँ ही।

२ मौन के तारो से भर उठेगा हृदयाकाश

जब पहले-पहले चेतना पर मौन का अवतरण होता है,

तो सन्ध्या की भाँति सब फीका-फीका और उदास हो जाता है—

जैसे सूर्य ढल गया हो और रात्रि का अन्धेरा धीरे-धीरे उतरता हो

और आकाश थका-थका हो दिनभर के श्रम से ।

लेकिन, फिर आहिस्ता-आहिस्ता तारे उगने लगते हैं और रात्रि के सौन्दर्य का जन्म होता है ।

ऐसा ही होता हे मौन मे भी ।

विचार जाते हैं, तो उनके साथ ही एक दुनिया अस्त हो जाती है ।

फिर मौन आता है, तो उसके पीछे ही एक नयी दुनिया का उदय भी होता है ।

इसलिए, जल्दी न करना ।

घबडाना भी मत ।

धैर्य न खोना ।

जल्दी ही मौन के तारो से हृदयाकाश भर उठेगा ।

प्रतीक्षा करो और प्रार्थना करो ।

३ ऊर्जा - जागरण से देह-शून्यता

ध्यान शरीर की विद्युत-ऊर्जा (Body Electricity) को जगाता है—
सक्रिय करता है—प्रवहमान करता है।

तू भय न करना।

न ही ऊर्जा-गतियो को रोकने की चेष्टा करना।

वरन्, गति के साथ गतिमान होना—गति के साथ सहयोग करना।

धीरे-धीरे तेरा शरीर-भान, पौद्गलिक-भाव (Material-Sense) कम होता जायेगा और अपौद्गलिक, ऊर्जा-भाव (Non Material Energy-Sense) बढेगा।

शरीर नही— ऊर्जा— शक्ति ही अनुभव मे आयेगी।

शरीर की सीमा है— शक्ति की नही।

शक्ति के पूर्णानुभव मे अस्तित्व (Existence) मे तादात्म्य होता है।

सम्यक् है तेरी स्थिति— अब सहजता से लेकिन दृढता से आगे बढ।

जल्दी ही सफलता मिलेगी।

सफलता सुनिश्चित है।

४ ध्यान— अशरीरी-भाव—और ब्रह्म-भाव

ध्यान मे शरीर-भाव खोयेगा ।

अशरीरी दशा निर्मित होगी ।

शून्य का अवतरण होगा ।

इससे भय न लें— वरन् प्रसन्न हो, आनन्दित हो ।

क्योंकि, यह बडी उपलब्धि है ।

धीरे-धीरे ध्यान के बाहर भी अशरीरी-भाव फैलेगा और प्रतिष्ठित होगा ।

यह आधा काम है ।

शेष आधे मे ब्रह्म-भाव का जन्म होता है ।

पूर्वार्ध है— अशरीरी-भाव ।

उत्तरार्ध है— ब्रह्म-भाव ।

और श्रम मे लगें ।

स्रोत बहुत निकट है ।

और सकल्प करें ।

विस्फोट शीघ्र ही होगा ।

और समर्पण करें ।

और, स्मरण रखें कि मैं सदा साथ हूँ, क्योंकि अब बडा निर्जन पथ सामने है ।

मन्जिल के निकट ही मार्ग सर्वाधिक कठिन होता है ।

सुबह के करीब ही रात और गहरी हो जाती है ।

५ कुण्डलिनी-ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन

शरीर मे विद्युत्-ऊर्जा-जैसा सचार शुभ है।

धीरे-धीरे शरीर-भाव मिट जायेगा— और ऊर्जा का बोध ही बचेगा।

पौद्गलिक (Material) शरीर एक भ्रान्ति है।

वस्तुत तो, जो है, वह ऊर्जा (Energy) ही है।

ऊर्जा (Life Energy) ही अज्ञान मे शरीर और ज्ञान मे आत्मा प्रतीत होती है।

मस्तिष्क मे धक्के लगेंगे।

लगेगा कि जैसे अब फटा— अब फटा।

लेकिन, भय न लाना।

जीवन-ऊर्जा के हाथो मे स्वय को छोड दो।

यही भगवत्-समर्पण है।

ऐसे ही ब्रह्मरन्ध्र सक्रिय होगा।

ऐसे ही सहस्र पखुरियो वाले कमल की कली टूटेगी और फूल बनेगी।

नाभि-केन्द्र पर अपूर्व शान्ति का जो अनुभव हो रहा है, उसमे रमण करो।

उसमें डूबो—उससे एक हो जाओ।

जीवन-ऊर्जा का मूल-स्रोत ध्यान मे आ रहा है— उसे पहचानो।

और, अब किसी भी अनुभव के सम्बन्ध मे सोच-विचार मत करो।

अनुभव करो और अनुगृहीत होओ।

६ अलौकिक अनुभवो की वर्षा— कुण्डलिनी-जागरण पर

कुण्डलिनी जागती है, तो ऐसा ही होता है ।

विद्युत दौडती हे शरीर मे ।

मूलाधार पर आघात लगते हैं ।

शरीर गुरुत्वाकर्षण (Gravitation) खोता मालूम पडता है ।

और, अलौकिक अनुभवो की वर्षा शुरू हो जाती है ।

प्राण अनसुने नाद से आपूरित हो उठते है ।

रोआँ-रोआँ आनन्द की पुलक मे काँपने लगता है ।

जगत् प्रकाश-पुज मात्र प्रतीत होता है ।

इन्द्रियो के लिए बिलकुल अबूझ अनुभूतियो के द्वार खुल जाते है ।

प्रकाश मे सुगन्ध आती है ।

सुगन्ध मे सगीत सुनाई पडता है ।

सगीत मे स्वाद आता है ।

स्वाद मे स्पर्श मालूम होता है ।

तर्क की सभी कोटियाँ (Catagories) टूट जाती हैं ।

और, बेचारे अरस्तू के सभी नियम उलट-पुलट हो जाते हैं ।

कुछ भी समझ मे नही आता है और फिर भी सब सदा से जाना हुआ मालूम होता है ।

कुछ भी कहा नही जाता है और फिर भी सब जीभ पर रखा प्रतीत होता है ।

'गूँगे के गुड' का अर्थ पहली बार समझ मे आता है ।

आनन्दित होओ कि ऐसा हुआ है ।

अनुगृहीत होओ कि प्रभु की अनुकम्पा है ।

७. तैयारी—विस्फोट को झेलने की

'कुछ करो नहीं, बस देखो।'

नाटक के एक दर्शक की भाँति।

नाट्य-गृह मे— पर नाटक मे नही।

शरीर नाट्य-गृह है और तुम दर्शक हो।

ऊर्जा उठती है— ऊर्ध्वगामी होती है तो ऐसे ही आघातो से तन-तन्तु काँप-काँप उठते हैं।

ऊर्जा अपना नया यात्रा-पथ निर्माण करती है तो आँधी मे सूखे पत्तो की भाँति शरीर आन्दोलित होता है।

फिर जैसे-जैसे नये प्रवाह-पथ निर्मित हो जाएँगे

वैसे-वैसे ही शरीर की पीडा खो जावेगी।

फिर आज जो आघात-जैसा प्रतीत होता है,

वही आनन्द की पुलक बन जाता है।

ऐसे आनन्द की जो कि शरीर मे घटित होता है, पर शरीर का नही है।

और निकट है वह क्षण।

पर उसके पूर्व बहुत बार तूफान आयेगा ऊर्जा का और चला जायेगा।

ऊफान उठेगा और शान्त हो जायेगा।

इससे चिन्तित मत होना।

क्योंकि, ऐसे ही विस्फोट (Explosion) की तैयारी होती है।

गौरीशंकर के शिखर-अनुभव (Peak-Experience) के पूर्व अनेक छोटे-छोटे शिखरो के अनुभव से गुजरना पडता है।

उससे ही विराट को बूंद मे झेलने की क्षमता निर्मित होती है।

८ अहिंसा—अनिवार्य छाया ध्यान की । `

ध्यान से मासाहार तो कठिनाई मे पडेगा ही ।

अपने तथाकथित सुख के लिए अब दु ख किसी को भी न दे सकोगे ।

अहिंसा ध्यान की अनिवार्य छाया है ।

और, उस ध्यान मे कुछ चूक है,

जिससे कि अहिंसा सहज ही फलित नहीं होती है ।

अहिंसा को प्रयास से लाना पडे, तो भी ध्यान म भूल है ।

अहिंसा को भी जो साधते हैं,

उन्हे वास्तविक अहिंसा का कोई पता ही नही है ।

अहिंसा तो आती है— सहज— ध्यान के साथ-साथ—

बस, ऐसे ही जैसे सूर्य के साथ प्रकाश ।

आनन्द मनाओ और प्रभु को धन्यवाद दो कि ऐसी ही अहिंसा का पदार्पण

तुम्हारे जीवन मे हो रहा हो ।

९ गहरे ध्यान के बाद जाति-स्मरण का प्रयोग

विगत जन्म की स्मृति मे उतर सकते हो।
लेकिन, उसके पूर्व गहरे ध्यान (Deep Meditation) का प्रयोग
अति आवश्यक है।
उसके बिना चेतना को पीछे लौटाना अत्यन्त कठिन है।
और यदि किसी भाँति सम्भव भी हो तो खतरनाक भी।
इसलिए, गहरे ध्यान के पूर्व मैं कोई सुझाव नही दे सकता हूँ।
इसे कठोरता मत समझ लेना।
ऐसा मैं करुणावश ही लिख रहा हूँ।
साधारण चित्त अतीत-जन्म की स्मृतियो की बाढ को झेलने मे समर्थ नही है।
इसलिए, प्रकृति उस द्वार को बन्द कर देती है।
और पूर्ण तैयारी के बिना प्रकृति के नियमो से खेल खेलना महँगा सिद्ध
होता है।

१० सिद्धियों में रस न लेना

योग से बहुत-कुछ सम्भव है— अतीन्द्रिय, अलौकिक।
लेकिन, नियमातीत कुछ भी घटित नही होता है।
अतीन्द्रिय— अनुभवो और सिद्धियो के भी अपने नियम हैं।
चमत्कार भी, जो नही जानते उन्ही के लिए चमत्कार हैं।
या फिर, अस्तित्व ही चमत्कार है।
पर, जहाँ तक बने, सिद्धियो मे रस न लेना।
साधक के लिए उससे अकारण ही व्यवधान निर्मित होता है।

११ विचारों का विसर्जन

ध्यान मे प्रकाश के साथ-साथ बीच-बीच मे विचार आते हैं,

तो उन्हे देखना— तीव्रता से— पूरी चेतना से— समग्र एकाग्रता से ।

और, कुछ भी न करना— बस, द्रष्टा बनना ।

पर, दृष्टि प्रगाढ हो और पैनी ।

और, विचार खो जावेंगे ।

बडे कमजोर है बेचारे ।

लेकिन, हमारी दृष्टि उनसे भी ज्यादा बेजान है— इसीलिए कठिनाई है ।

अन्यथा, विचार से ज्यादा हवाई चीज और क्या हो सकती है ?

१२ चक्रो के खुलते समय पीड़ा स्वाभाविक

६ पीड़ा थोडी बढे, तो चिन्तित मत होना।

चक्र सक्रिय होते है, तो पीडा होती है।

पीडा के कारण ध्यान को शिथिल न करना।

वस्तुत तो, चक्रो पर पीडा शुभ-लक्षण है।

और, जैसे ही अनादि-काल से सुप्त चक्र पूर्णरूपेण सक्रिय हो उठेंगे,

वैसे ही पीडा शान्त हो जायेगी।

चक्रो की पीडा—प्रसव-पीडा है।

तेरा ही नया जन्म होने को है।

सौभाग्य मान और अनुगृहीत हो—

क्योकि स्वय के जन्म को देखने से बडा और सद्भाग्य नही है। ६

१३ कुछ भी हो— ध्यान को नहीं रोकना

ध्यान मे और भी शक्ति लगाओ।

ध्यान के अतिरिक्त शेष समय मे भी ध्यान की स्मृति (Remembering) बनाये रखो।

जब भी स्मरण आये— क्षणभर को तत्काल भीतर डुबकी ले लो।

मस्तिष्क मे शीतलता और भी बढेगी।

उसमे घबडाना मत— बिल्कुल बर्फ जमी हुई मालूम होने लगे तो भी नही।

रीढ मे सवेदना गहरी होगी और कभी-कभी अनायास कही-कही दर्द भी उभरेगा।

उसे साक्षी-भाव से देखते रहना है।

वह आयेगा और अपना काम करके विदा हो जायेगा।

नये चक्र सक्रिय होते है तो दर्द होता ही है।

और कुछ भी हो तो ध्यान को नही रोकना है।

जो भी ध्यान से पैदा होता है, वह ध्यान से ही विदा हो जाता है।

१४ मन का रेचन ध्यान में

भय न करो।

ध्यान मे जो भी हो होने दो।

मन रेचन (Catharsis) मे है तो उसे रोको मत।

चित्त-शुद्धि का यही मार्ग है।

अचेतन (Unconscious) मे जो भी दबा है, वह उभरेगा।

उसे मार्ग दो ताकि उससे मुक्ति हो सके।

उसे दबाया कि ध्यान व्यर्थ हुआ।

और उससे मुक्ति हुई नही कि ध्यान सार्थक हुआ।

इसलिए, समस्त उभार का स्वागत करो।

और उसे सहयोग भी दो।

क्योकि, अपने-आप जो कार्य बहुत समय लेगा,

वह सहयोग से अल्पकाल मे ही हो जाता है।

१५ छलांग—बाहर—शरीर के, संसार के, समय के

(ध्यान में शरीर झूमता है तो भय न करना ।

वरन् उसे आनन्द से सहयोग देना ।

शरीर के साथ झूमो ।

मन को भी झूमने दो ।

और आत्मा को भी ।

झूमना नृत्य बन जायेगा ।

और नृत्य की अति मे ही छलांग है ।)

शरीर के बाहर—ससार के बाहर—समय के बाहर ।

१६ समय के पूर्व शक्ति का जागरण हानिप्रद

तृतीय नेत्र (Third Eye) की चिन्ता मे तू न पड ।
आवश्यक होगा तो मै तुझमे उस दिशा मे कार्य करने को कहूँगा ।
वह तेरी सम्भावना के भीतर है और बिना ज्यादा श्रम के ही सक्रिय भी हो सकती है ।
लेकिन, तू स्वय उत्सुकता न ले ।
समय के पूर्व शक्ति का जागरण बाधा भी बन सकता है ।
और मूल-साधना से भटकाव भी ।
फिर सत्य के साक्षात्कार के लिए वह आवश्यक भी नही है ।
और अनिवार्य तो बिलकुल ही नही ।
कभी-कभी कुछ शक्तियाँ अनचाहे भी सक्रिय हो जाती है,
लेकिन उनके प्रति भी उपेक्षा (Indifference) आवश्यक है ।
और नये सोपान पर गतिमय होने मे सहयोगी भी ।
अब जब मैं तेरी चिन्ता करता हूँ तो तू सब चिन्ताओ से सहज ही विश्राम ले सकती है ।

१७ पूर्व-जन्मों के बन्द द्वारों का खुलना

हाँ— तुम विगत किसी जन्म मे योग विवेक से सम्बन्धित थी।
अब, बहुत-सी बाते शीघ्र ही तुम्हे याद आ जाएँगी।
क्योकि, चाबी तुम्हारे हाथ मे है।
परन्तु उनके बारे मे कुछ भी न सोचो।
अन्यथा तुम्हारी कल्पना तुम्हारी स्मृतियो के साथ घुलमिल जायेगी और तब यह जानना बहुत मुश्किल होगा कि क्या वास्तविक है और क्या नही।
इसलिए अब सतत जागरूक रहो कि तुम्हे पूर्व-जन्मो के बारे मे नही सोचना है।
स्मृतियो को अपने से आने दो।
तुम्हारी ओर से किसी सचेतन प्रयास की आवश्यकता नही है।
इसके विपरीत वह एक बडी बाधा ही बनेगा।
अचेतन को अपना कार्य करने दो।
तुम मात्र साक्षी रहो।
और जैसे-जैसे ध्यान गहरा होगा, बहुत-से बन्द द्वार तुम्हारे समक्ष खुलेंगे।
लेकिन प्रतीक्षा करना न भूलो और रहस्यो को स्वय प्रकट होने दो।
बीज टूट चुका है और बहुत-कुछ होने को है।
तुम मात्र प्रतीक्षा करो और साक्षी रहो।

१८. साधना में धैर्य

साधना के जीवन मे धैर्य सबसे बडी बात है ।

बीज को बोकर कितनी प्रतीक्षा करनी होती है ।

पहले तो श्रम व्यर्थ ही गया दीखता है ।

कुछ भी परिणाम आता हुआ प्रतीत नही होता ।

पर एक दिन प्रतीक्षा प्राप्ति मे बदलती है ।

बीज फटकर पौधे के रूप मे भूमि के बाहर आ जाता है ।

पर स्मरण रहे, जब कोई परिणाम नही दीख रहा था,

तब भी भूमि के नीचे विकास हो रहा था ।

ठीक ऐसा ही साधक का जीवन है ।

जब कुछ भी नही दिख रहा होता, तब भी बहुत कुछ होता है

सच तो यह है कि—

जीवन-शक्ति के समस्त विकास अदृश्य और अज्ञात होते हैं ।

विकास नही, केवल परिणाम दिखाई पडते हैं ।

साध्य की चिन्ता छोडकर साधना करते चलें,

फिर साध्य तो अपने-आप आता चला जाता है ।

एक दिन आश्चर्य से भरकर ही देखना होता है कि यह क्या हो गया है ।

मैं क्या था और क्या हो गया हूँ ।

तब जो मिलना है, उसके समक्ष उसे पाने के लिए किया गया श्रम न-कुछ

मालूम होता है

१९. ध्यान में पूरा डूबना ही फल का जन्म है

जल्दी न करें।

धैर्य रखें।

धैर्य ध्यान के लिए खाद है।

ध्यान को सँभालते रहे।

फल आयेगा ही।

आता ही है।

लेकिन, फल के लिए चिन्तित न हो।

क्योकि वैसी चिन्ता ही फल के आने मे बाधा बन जाती है।

क्योकि वैसी चिन्ता ही ध्यान से ध्यान को बँटा लेती है।

ध्यान (Meditation) पूरा ध्यान (Attention) माँगता है।

बँटाव नही चलेगा।

आंशिकता नही चलेगी।

ध्यान तुम्हारी समग्रता (Totality) के बिना सम्भव नही है।

इसलिए, ध्यान के कर्म पर ही लगो और ध्यान के फल को प्रभु पर छोड़ो।

और फल आ जाता है।

क्योकि ध्यान मे पूरा डूबना ही फल का जन्म है।

२० अनुभूति मे बुद्धि के प्रयास बाधक

ध्यान तेरा रोज गहरा हो रहा है, यह जानकर अति आनन्दित हूँ।

बहुत-से अनुभव होंगे—लेकिन उन्हे बुद्धि से समझने के प्रयास मे मत पडना।

बुद्धि के प्रयास बाधा बन जाते है।

और न ही कोई अनुभव पुनरुक्त हो ऐसी वासना ही करना।

क्योकि, ऐसी वासना भी बाधा बन जाती है।

जो हो उसके लिए बस प्रभु को धन्यवाद दे आगे बढ जाना है।

२१ समिष्टि को बाँट दिया ध्यान ही समाधि बन जाता है

"ध्यान के बाद प्रार्थना किया कर कि ध्यान मे मिली शान्ति और आनन्द सब ओर बिखर जावे— सबको मिल जावे।
ध्यान करना हे तुझे, लेकिन फल समष्टि को बाँट देना है।
तभी ध्यान समाधि बनता है।"

६

जिज्ञासा समाधान

६. जिज्ञासा समाधान

**साधकों के संग भगवान्श्री रजनीश की ध्यान व साधना-सम्बन्धी
२१ प्रश्नोत्तर चर्चाएँ**

१. क्या तुम ध्यान करना चाहते हो

क्या तुम ध्यान करना चाहते हो ?
तो ध्यान रखना कि ध्यान मे न तो तुम्हारे सामने कुछ हो, न पीछे कुछ हो।
अतीत को मिट जाने दो और भविष्य को भी।
स्मृति और कल्पना— दोनो को शून्य होने दो।
फिर न तो समय होगा और न आकाश ही होगा।
उस क्षण जब कुछ भी नही होता है—
तभी जानना कि तुम ध्यान मे हो।

२. ध्यान कैसे करें

ध्यान के लिए पूछते हो कि कैसे करें ?
कुछ भी न करो।
बस शान्ति से श्वास-प्रश्वास के प्रति जागो।
होशपूर्वक श्वास-पथ को देखो।
श्वास के आने-जाने के साक्षी रहो।
यह कोई श्रमपूर्ण चेष्टा न हो,
वरन् शान्त और शिथिल विश्रामपूर्ण बोध-मात्र हो।
और फिर तुम्हारे अनजाने ही, सहज और स्वाभाविक रूप से एक अत्यन्त प्रसादपूर्ण स्थिति मे तुम्हारा प्रवेश होगा।
इसका भी पता नही चलेगा तुम कब प्रविष्ट हो गये हो।
अचानक ही तुम अनुभव करोगे कि तुम वहाँ हो, जहाँ कि कभी भी नही थे।

३. मौन कैसे हों

पूछते हो, मौन कैसे हो ?
बस हो जाओ।
बहुत विधि और व्यवस्था की बात नही है।
चारो ओर जो हो रहा है, उसे सजग होकर देखो।
और जो सुन पड रहा है, उसे साक्षी-भाव से सुनो।
संवेदनाओ के प्रति होश तो पूरा हो, पर प्रतिक्रिया न हो।
प्रतिक्रियाशून्य सजगता से मौन सहज ही निष्पन्न होता है।

४ स्वप्न में कैसे जागें

स्वप्न मे—'जो हम देख रहे है वह सत्य नही है, स्वप्न है'—
इसे स्मरण रखने का क्या उपाय है ?

जो व्यक्ति जाग्रत अवस्था मे यह स्मरण रखता है
कि वह जो भी देख रहा है वह सब स्वप्न है,
तब वह धीरे-धीरे स्वप्न मे भी जानने लगता है
कि जो वह देख रहा है, वह सत्य नही है।
जाग्रत को क्योकि हम सत्य मानते है,
इसलिए स्वप्न भी सत्य मालूम होते है।
जाग्रत मे जो हमारे चित्त की आदत है,
स्वप्न मे उसी का प्रतिपालन होता है।

५. विचारों से कैसे मुक्त हो

विचारों से मुक्ति का क्या उपाय है ?

साधारणत जब तक मनुष्य प्रत्येक विचार की गति के साथ
गतिमय होता रहता है, तब तक उसे विचारो से पैदा हो रही अशान्ति का
अनुभव ही नही होता है।
लेकिन जब वह रुककर—ठहरकर विचारो को देखता है,
तभी उसे उनकी सतत दौड और अशान्ति का प्रत्यक्ष होता है।

विचारो से मुक्ति की दिशा मे यह आवश्यक अनुभूति है।
हम खडे होकर देखे तभी विचारो की व्यर्थ भागदौड का पता चल सकता है।
निश्चय ही, जो उनके साथ ही दौडता रहता है, वह इसे कैसे जान सकता है।

विचारो की प्रक्रिया के प्रति एक अत्यन्त निर्वैयक्तिक भाव को अपनाएँ—
एक मात्र दर्शक का भाव।
जैसे देखने-मात्र से ज्यादा आपका उनसे और कोई सम्बन्ध नही।
और जब विचारो के बादल मन के आकाश को घेरें,
और गति करें, तो उनसे पूछे
"विचारो! तुम किसके हो ? . क्या तुम मेरे हो ?"
और आपको स्पष्ट उत्तर मिलेगा—"नही, तुम्हारे नही।"

निश्चय ही यह उत्तर मिलेगा, क्योंकि विचार आपके नही है।
वे आपके अतिथि है।
आपके मन को उन्होने सराय बनाया हुआ है।
उन्हे अपना मानना भूल है।
और वही भूल उनसे मुक्त नही होने देती है।
उन्हे अपना मानने से जो तादात्म्य पैदा होता है,
वही उन्हे विसर्जित नही होने देता है।
ऐसे, जो मात्र अतिथि हैं, वे ही स्थायी निवासी बन जाते हैं।

विचारो को निर्वैयक्तिक भाव से देखने से क्रमश उनसे सम्बन्ध टूटता है।
जब कोई वासना उठे या विचार,
तब ध्यान दें कि यह वासना उठ रही है—
या कि विचार उठ रहा है।
फिर देखे और जाने कि अब वह पूरे रूप मे मन के समक्ष है।
फिर जानें कि अब वह विलीन हो रहा है—
अब विलीन हो चुका है।
अब दूसरा विचार उठ रहा है बन रहा है बन गया है—
विलीन हो रहा है विलीन हो गया है।

और इस भाँति शान्ति मे, अनुद्विग्न भाव से दर्शक की भाँति साक्षी बनकर विचारो की सतत धारा का निरीक्षण करे।
इस भाँति शान्त चुनावरहित निरीक्षण से विचारो की गति क्षीण होती जाती है और अन्तत निर्विचार-समाधि उपलब्ध होती है।

निर्विचार-समाधि मे विचार तो विलीन हो जाते हैं और विचारशक्ति का उद्भव होता है।
उस विचारशक्ति को ही मैं प्रज्ञा कहता हूँ।

विचारशक्ति के जागरण के लिए विचारो से मुक्त होना अत्यन्त आवश्यक है।

६. शून्य कैसे हो ?

शून्य से पूर्ण का दर्शन होता है।
और शून्य आता है विचार-प्रक्रिया के तटस्थ, चुनावरहित साक्षी-भाव से।
विचार मे शुभाशुभ का निर्णय नही करना है।
वह निर्णय राग या विराग लाता है।
किसी को रोक रखने और किसी को परित्याग करने का भाव उससे पैदा होता है।
वह भाव ही विचार-बन्धन है।
वह भाव ही चित्त का जीवन और प्राण है।
उस भाव के आधार पर ही विचार की शृंखला अनवरत चलती जाती है।

विचार के प्रति कोई भी भाव हमे विचार मे बाँध देता है।
उसके तटस्थ साक्षी का अर्थ है, विचार को निर्भाव के बिन्दु से देखना।
विचार को निर्भाव के बिन्दु से देखना ध्यान है।
बस, देखना है (Just-Seeing) और चुनाव नही करना है।
और निर्णय नही लेना है।

यह—'बस-देखना'—बहुत श्रमसाध्य है।
यद्यपि कुछ करना नही है,
पर कुछ-न-कुछ करते रहने की हमारी इतनी आदत बनी है
कि कुछ 'न-करने-जैसा' सरल और सहज कार्य भी बहुत कठिन हो गया है।
बस, देखने-मात्र के बिन्दु पर थिर होने से क्रमश विचार विलीन होने लगते है।
वैसे ही, जैसे प्रभात मे सूर्य के उत्ताप मे दूब पर जमे ओसकण वाष्पीभूत हो जाते है।

बस देखने का उत्ताप विचारो के वाष्पीभूत हो जाने के लिए पर्याप्त है।
वह राह है जहाँ से शून्य उद्घाटित होता है और मनुष्य को आँख मिलती है— और आत्मा मिलती है।

७ ध्यान की परिभाषा

ध्यान किसे कहते है, और उसे करने की क्या विधि है ?

निर्विचार-चेतना, ध्यान है।
और निर्विचारणा के लिए विचारो के प्रति जागना ही विधि है।

विचारो का सतत प्रवाह है मन।
इस प्रवाह के प्रति मूर्च्छित होना— सोये होना— अजाग्रत होना
साधारणत हमारी स्थिति है।
इस मूर्च्छा से पैदा होता है तादात्म्य।
मैं मन ही मालूम होने लगता हूँ।
जागें और विचारो को देखें।

जैसे कोई राह चलते लोगों को किनारे खड़े होकर देखे।
बस, इस जागकर देखने से क्रान्ति घटित होती है।
विचारो से स्वय का तादात्म्य टूटता है।
इस तादात्म्य-भग के अन्तिम छोर पर ही निर्विचार-चेतना का जन्म होता है।
ऐसे ही, जैसे आकाश मे बादल हट जाएँ तो आकाश दिखाई पड़ता है।
विचारो से रिक्त चित्ताकाश ही स्वय की मौलिक स्थिति है।
वही समाधि है।

ध्यान है विधि।
समाधि है उपलब्धि।

लेकिन, ध्यान के सम्बन्ध मे सोचें मत।
ध्यान के सम्बन्ध मे विचारना भी विचार ही है।
उसमे तो जाएँ।
डूबें।
ध्यान को सोचें मत—चखें।

मन का काम है सोना और सोचना।
जागने मे उसकी मृत्यु है।
और ध्यान है जागना।
इसलिए मन कहता है चलो, ध्यान के सम्बन्ध मे ही सोचें
यह उसकी आत्म-रक्षा का अन्तिम उपाय है।

इससे सावधान होना।
सोचने की जगह, देखने पर बल देना।
विचार नही, दर्शन— बस यही मूलभूत सूत्र है।
दर्शन बढता है, तो विचार क्षीण होते है।
साक्षी जागता है, तो स्वप्न विलीन होता है।

ध्यान आता है, तो मन जाता है।
मन है द्वार, संसार का।
ध्यान है द्वार, मोक्ष का।
मन मे जिसे पाया है, ध्यान मे वह खो जाता है।
मन से जिसे खोया है, ध्यान मे वह मिल जाता है।

८ निराकार के ध्यान की विधि

क्या निराकार वस्तु का ध्यान हो सकता है ?
और यदि हो सकता है, तो क्या निराकार, निराकार ही बना रहेगा ?

ध्यान का साकार या निराकार से कोई भी सम्बन्ध नही है।
और न ध्यान का विषय-वस्तु से ही कोई सम्बन्ध है।
ध्यान है विषय-वस्तु-रहितता— गाढ निद्रा की भाँति।
लेकिन, निद्रा मे चेतना नही है— और ध्यान मे चेतना पूर्णरूपेण है।
अर्थात् निद्रा अचेतन-ध्यान है।
या, ध्यान सचेतन-निद्रा है।
गाढ निद्रा मे भी हम वही होते है, जहाँ ध्यान मे होते है— लेकिन, मूर्च्छित।
ध्यान मे भी हम वही होते है, जहाँ निद्रा मे होते है— लेकिन, जाग्रत।

जागते हुए सोना ध्यान है।
या, सोते हुए जागना ध्यान है।
फिर जो जाना जाता है, वह न आकार है, न निराकार है।
वह है आकार मे निराकार, या निराकार मे आकार।
असल मे वहाँ द्वन्द्व नही है, द्वैत नही है।
और, इसलिए हमारे सब शब्द व्यर्थ हो जाते है।
वहाँ न ज्ञाता है, न ज्ञेय है, न दृश्य है, न द्रष्टा है।
इसलिए, वहाँ जो है, उसे कहना असम्भव है।
कठिन नही, असम्भव है।

ध्यान है मन की मृत्यु और भाषा है मन की अर्धांगिनी।
वह मन के साथ ही सती हो जाती है।
वह विधवा होकर जीना नही जानती है।
जाने, तो भी जी नही सकती है।
और उसका पुनर्विवाह भी नही हो सकता है।
क्योकि, मन के पार जो है, वह उससे विवाह के लिए चिर-अनुत्सुक है।
उसका विवाह हो ही चुका है— शून्यता से।

९. स्वाध्याय और ध्यान का अन्तर[1]

स्वाध्याय और ध्यान मे क्या अन्तर है ?

स्वाध्याय, अर्थात् स्वय का अध्ययन ।
और स्वय का अध्ययन विचार के बिना सम्भव नही है ।
इसलिए, स्वाध्याय विचार की ही प्रक्रिया है ।
जब कि ध्यान है विचारातीत ।
वह है विचारो के प्रति जागना ।
स्वाध्याय है सोचना ।
ध्यान है जागना ।
सोचने मे जागना नही है ।
क्योकि, जागे और सोचना गया ।
सोच-विचार मे होने के लिए निद्रा आवश्यक है ।
सोच-विचार, आँखे खोलकर स्वप्न देखना है ।
स्वप्न, आदिम सोच-विचार है ।
स्वप्न चित्रो की भाषा मे सोचता है ।
सोचना स्वप्न का सभ्य रूप है ।
सोचने मे चित्रो की जगह शब्द और प्रत्यय ले लेते है ।
लेकिन, ध्यान एक अलग ही आयाम है ।
वह स्वप्न-मात्र से मुक्ति है ।
वह विचार-मात्र के पार जाना है ।
स्वप्न अचेतन मन का चिन्तन है ।
विचार चेतन मन का चिन्तन है ।
ध्यान मनातीत है

चेतन मन जब अन्य को विषय बनाता है, तो भी वह विचार है,
और जब स्वय को विषय बनाता है, तो भी ।
ध्यान मे विषय से ऊपर उठना है—विषय-मात्र से ।

इसमे कोई मौलिक भेद नही पडता है कि विषय क्या है।
धन है या धर्म ? पर है या स्व ?
मौलिक भेद— रूपान्तरण— या क्रान्ति तो तभी घटित होती है,
जब चेतना विषय के ही बाहर हो जाती है।
क्योकि, तभी 'स्व' को जाना जा सकता है।
जब चेतना के पास जानने को कुछ भी शेष नही बचता है,
तभी वह स्वय को जान पाती है।
ज्ञेय जब कोई भी नही है, तभी आत्मज्ञान होता है।
अर्थात्, स्वाध्याय है स्वय के सम्बन्ध मे सोच-विचार,
और ध्यान है स्वय को जानना।
और निश्चय ही, जिसे जानते ही नही,
उसके सम्बन्ध मे सोचेगे-विचारेगे क्या ?
और जिसे जान ही लिया, उसके सम्बन्ध मे सोच-विचार का प्रश्न ही कहाँ है ?

इसलिए, स्वाध्याय से बचे तो अच्छा है।
क्योकि, वह भी ध्यान मे बाधा है— और सर्वाधिक सबल।
क्योकि, वह ध्यान का नाटक बन जाती है।
मन तो उससे बहुत प्रसन्न होता है,
क्योकि इस भाँति वह पुन स्वय को बचा लेता है।
लेकिन, साधक भटक जाता है।
वह फिर विषय मे उलझ जाता है।

मन है विषय-उन्मुखता।
उसे चाहिए विषय।
वह विषय फिर चाहे कोई भी हो— काम हो या राम,
वह विषय-मात्र से राजी है।
इसलिए, ध्यान के लिए काम और राम दोनो से ऊपर उठना आवश्यक है।
'पर' और 'स्व' दोनो को सम-भाव से विदा देनी है।
तभी वह प्रकट होता है, जो कि 'स्व' है— और जो कि 'पर' भी है।
या कि जो न 'स्व' है, न 'पर' है, वरन् 'बस है'।

१० ध्यान की अन्तिम अवस्था तथा दिन-प्रतिदिन वृद्धि

ध्यान की गहराई मे उतरने से उसकी दिन-प्रतिदिन वृद्धि किस प्रकार से होगी, और ध्यान की अन्तिम अवस्था क्या है ?

आप भोजन कर लेते है, फिर उसे पचाना नही होता है, वह पचना है।
ऐसे ही आप जागे विचारो के प्रति।
विचारो के प्रति मूर्च्छा न रहे—इतना आप करे।
यह है ध्यान का भोजन।
फिर पचना अपने-आप होता है।
पचना यानी ध्यान का खून बनना—ध्यान की गहराई।
भोजन आप करे—और पचना परमात्मा पर छोड दे।
वह काम सदा से ही उसने स्वय के हाथो मे ही रखा हुआ है।

लेकिन, यद्यपि आप भोजन पचा नही सकते हैं,
फिर भी उसके पचने मे बाधा जरूर डाल सकते है।
ध्यान के सम्बन्ध मे भी यही सत्य है।
आप ध्यान के गहरे होने मे बाधा जरूर डाल सकते हैं।
विचारो के प्रति सूक्ष्मतम चुनाव और झुकाव ही बाधा है।

शुभ या अशुभ मे चुनाव न करें।
निंदा या स्तुति, दोनो से बचें।
न कोई विचार अच्छा है, न बुरा।
विचार सिर्फ विचार है।
और आपको विचार के प्रति जागना है।
सूक्ष्मतम चुनाव भी बाधा है जागने मे।
तराजू के दोनो पलडे सम हो, तभी ध्यान का कॉंटा स्थिर होता है।
और ध्यान का कॉंटा स्थिर हुआ कि तराजू, पलडे और कॉंटा—
सब तिरोहित हो जाते हैं।
फिर जो शेष रह जाता है, वही समाधि है,
वही ध्यान की अन्तिम अवस्था है।

११. निर्विचार हो जाने पर मन की परिस्थिति

साक्षीभाव से मन को देखने से जब मन निर्विचार हो जाता है, उसके बाद क्या परिस्थिति होती है ?

परिस्थिति ? परिस्थिति वहाँ कहाँ ?
बस, सब परिस्थितियाँ मिट जाती हैं और वही शेष रह जाता है, जो है।
और जो है, वह सदा से है।
परिस्थिति प्रतिपल बदलती है, वह कभी नही बदलता है।
परिस्थिति परिवर्तन है और वह सनातन।
परिस्थिति मे सुख है, दुख है।
सुख दुख मे बदलता है, दुख सुख मे बदलता है।
बदलना है तो और कोई राह भी नही है।
और वहाँ न सुख है, न दुख है, क्योकि वहाँ परिवर्तन नही है।
फिर वहाँ जो है, उसी का नाम आनन्द है।

ध्यान रहे कि आनन्द सुख नही है।
क्योकि सुख वही है, जो दुख मे बदल सकता है।
और आनन्द दुख मे नही बदलता है।
आनन्द बदलता ही नही है।
इसीलिए आनन्द से विपरीत कोई स्थिति नही है।
आनन्द अकेला है।
आनन्द अद्वैत है।

ऐसे ही, परिस्थिति मे ही जन्म है, मृत्यु है।
जहाँ जन्म है, वहाँ मृत्यु होगी ही।
वे एक ही परिक्रम की दो परिवर्तन-स्थितियाँ हैं।
जन्म मृत्यु बनता रहता है।
फिर मृत्यु जन्म बनती रहती है।
परिस्थिति इसी चक्र का नाम है।
और वहाँ— सत्य मे— न जन्म है, न मृत्यु।

कहें कि वहाँ जीवन है।
जन्म की उल्टी परिस्थिति मृत्यु है।
जीवन से उल्टा कुछ भी नहीं है।
वहाँ जीवन है, जीवन है, और जीवन है।
रस आनन्द, जीवन का नाम ही ब्रह्म है।

१२ मन स्थिर करने का उपाय

मन को स्थिर कैसे करें ? उसका उपाय क्या है ?

मन स्थिर होना ही नही।
वस्तुत, अस्थिरता, चचलता का नाम ही मन है।
इसलिए मन या तो होता है, या नही होता है।
मन या अ-मन, बस ऐसी ही दो स्थितियाँ है।
मन से सत्य ससार की भाँति दीखता है।
ससार, अर्थात् चचलता के द्वार से देखा गया ब्रह्म।
और अ-मन से, जो है, वह वैसा ही दीखता है, जैसा है।

सत्य जैसा है, उसे वैसा ही जानना ब्रह्म है।
इसलिए मन को स्थिर करने की बात ही न पूछें।
मन को स्थिर नही करना है, बल्कि मिटाना है।
शान्त-तूफान-जैसी कोई चीज देखी-सुनी है ?
ऐसे ही शान्त-मन-जैसी कोई चीज नही है।
मन अशान्ति का ही पर्याय है।
और तब उपाय का तो सवाल ही नही उठता है।
सब उपाय मन के ही हैं।
मन मिटाना है तो उपाय मे नहीं, निरुपाय मे जाना पडता है।
उपाय करने से मन घटता नही, बढता है।
क्योकि, उपाय वही तो करता है।
और मन ही जो करता है, उससे मन कैसे मिट सकता है ?

फिर क्या करें ?
नही, करे कुछ भी नहीं—बस, जागे— देखें, सारी बाते।
मन को ही देखे, मन के प्रति होशपूर्ण हो।
और फिर धीरे-धीरे मन गलता है, पिघलता है, मिटता है।
साक्षी-भाव सूर्योदय की भाँति मन की ओस को वाष्पीभूत कर देता है।
चाहे तो कह कि यही उपाय है।

१३ मन मे उठते बुरे भावो का निराकरण

मन मे उठते बुरे भावों को किस प्रकार रोका जाये ?

यदि रोकना है तो रोकना ही नही।
रोका, कि वे आये।
उनके लिए निषेध सदा निमन्त्रण है।
और दमन से उनकी शक्ति कम नही होती, वरन् बढती है।
क्योकि दमन मे वे मन की और भी गहराइयो मे चल जाते है।
और न ही उन भावो को बुरा कहना।
क्योकि बुरा कहते ही उनसे शत्रुता और सघर्ष शुरू हो जाता है।
और स्वय मे स्वय म सघर्ष, सन्ताप का जनक है।
ऐसे सघर्ष मे शक्ति का अकारण अपव्यय होता है और व्यक्ति निर्बल होता जाता है।
जीतने का नही, हारने का ही यह मार्ग है।

फिर क्या करे ?

पहली बात
जाने कि न कुछ बुरा है, न भला है— बस भाव है।
उन पर मूल्याकन न जडे,
क्याकि, तभी तटस्थता सम्भव है।

दूसरी बात
रोके नही, देखे।
कर्त्ता नही, द्रष्टा बने।
क्योकि, तभी सघर्ष से विरत हो सकते है।

तीसरी बात
जो है, उसे बदलना नही है, स्वीकार करना है।
जो है, सब परमात्मा का है।
इसलिए आप बीच मे न आएँ तो अच्छा है।

आपके बीच मे आने से ही अशान्ति है ।
और अशान्ति मे कोई भी रूपान्तरण सम्भव नही हे ।
समग्र-स्वीकृति का अर्थ है कि आप बीच से हट गये है ।
और आपके हटते ही क्रान्ति है ।
क्योकि, जिन्हे आप बुरे भाव कह रहे है,
उनके प्राणो का केन्द्र अहकार है ।
अहकार है तो वे है ।
अहकार गया कि वे गये ।
आपके हटते ही वह सब हट जाता है,
जिसे कि आप जन्मो-जन्मो से हटाना चाहते थे और नही हटा पाये थे ।
क्योकि, उन सबो की जडे आपमे ही छिपी थी ।

लेकिन, लगता है कि आप सोच मे पड गये !

सोचिये नही, हटिये ।
बस हट ही जाइये और देखिये ।
जैसे अन्धे को अनायास आँखे मिल जाएँ,
बस ऐसे ही सब-कुछ बदल जाता है ।
जैसे अन्धेरे मे अचानक दीया जल उठे, बस ऐसे ही सब-कुछ बदल जाता है ।

कृपा करिये और हटिये ।

१४ ध्यानपूर्वक किये गये जाप का फल

ध्यानपूर्वक किया हुआ जाप क्या फलीभूत नहीं हो सकता है ?

जब ध्यान ही करना है, तो जाप अनावश्यक है।
जपादि, ध्यान से बचने की विधियाँ है।
वे विचार को ही पीछे के द्वार से भीतर लाने के उपाय हैं।

ध्यान है जागरण— सजगता— साक्षीभाव।
और जपादि हैं ज्यादा-से-ज्यादा आत्मसम्मोहन।
स्वय को सुलाने के उपाय।
नीद न आती हो तो उपयोगी है।
शान्तिदायी भी है— वैसे ही, जैसे नीद है।
शब्द की पुनरुक्ति आत्मसम्मोहन बन जाती है—
किसी भी शब्द की।
फिर वह चाहे हो 'ओम्', चाहे हो 'कोका-कोला'।

अशान्त मन स्वय को भूलने के लिए तो सदा ही तैयार है।
इसीलिए तो मादक द्रव्यो का इतना आकर्षण है।
जपादि अरासायनिक मादकताएँ हैं।

लेकिन भूलने से क्या होगा ?
विस्मरण विमुक्ति तो नही है ?
जो है, वह फिर लौटेगा, फिर-फिर लौटेगा।
बेहोश कितनी देर रहियेगा ?

नही, ऐसे नही चलेगा।
स्वय को बदलना ही होगा।
विस्मरण नही, रूपान्तरण ही चाहिए।
ध्यान रूपान्तरण है।
और जाप से, इसीलिए, वह आमूल भिन्न है।
ध्यान है, स्मृतिपूर्वक होना।

जो है, बाहर या भीतर, उसके प्रति जागते हुए होने का नाम ध्यान है ।
जाप है क्रिया, ध्यान है अक्रिया ।
जाप मे कुछ करना होगा ।
इसीलिए वह मानसिक है ।
और मन की कोई भी क्रिया कभी भी मन से बाहर नही ले जा सकती है ।

ध्यान है जागना— देखना— साक्षित्व ।
यह क्रिया नही है ।
यह समस्त क्रियाओ का विश्राम है ।
इसलिए, ध्यान मन के पार है
और जो सजातीय है, उसे जानने का द्वार है ।

१५ ध्यान का रूप ले लेनेवाले जप

क्या ऐसे भी कोई जाप हैं जो सहज जप व ध्यान का रूप ले लें ?

नही ! क्योकि, असहज सहज कैसे हो सकता है ?
असहज सहज नही बनता है ।
असहज से मुक्ति ही सहज मे ले जाती है ।
प्रयास अप्रयास का द्वार नही है ।
प्रयास से मुक्ति ही अप्रयास का द्वार बनती है ।
और सत्य को प्रयास मे नही पाया जा सकता है ।
क्योकि, वह तो है ही— और मिला ही हुआ है ।
प्रयास मे है हम, इसीलिए उससे चूके हुए है ।
वह है निकट और सदा से उपस्थित ।
लेकिन, हम हैं व्यस्त— अर्थात्— उसके प्रति अनुपस्थित ।
यह अनुपस्थिति तो समान ही है ।
कोई धन पाने मे व्यस्त है, कोई धर्म पाने मे ।
कोई फिल्मी गीत गाने मे व्यस्त है, कोई जप-जाप मे ।
कोई माला फेरने मे व्यस्त है, कोई धूम्रपान मे ।
कोई कागज के शास्त्रो मे उलझा है, कोई कागज के पत्तो मे लीन है ।
लेकिन, सभी उसके प्रति अनुपस्थित है, जो कि है— सभी ओर— सदा से ।
एक व्यस्तता से ऊब जाता है मन,
तो तत्काल दूसरी व्यस्तता का आविष्कार कर लेता है ।
धूम्रपान से ऊब जाता है, तो माला फेरता है ।
दुकान से ऊबता है, तो मन्दिर खोज लेता है— लेकिन, अव्यस्त नही होता है ।
जबकि, जो है, वह अव्यस्त क्षणो के अन्तराल मे ही जाना और जिया जाता है ।

उसे खोजो मत, वह तो यह रहा, उसके लिए दौडें मत, वह तो यहीं है ।
उसके लिए प्रयास मत करें,
क्योंकि उसका निर्माण नही करना है, वह तो है ही ।
केवल, बस आप भी हो—'अभी और यहीं'— और वह प्रकट हो जाता है ।

१६. कल्पना से कल्पना कटती है

क्या कल्पना से कल्पना नहीं कटती है ?

कल्पना से कल्पना कटती है।
लेकिन, कल्पना करनेवाला मन नहीं कटता है।
और काटना कल्पना को नहीं, मन को ही है।
कल्पना करे, या कल्पना न करें, मन दोनों ही स्थितियों में सबल होता है।
क्योंकि, दोनों में ही उसकी शक्ति काम आती है।

जाना है मन के बाहर।
और यह उसे सबल करके नहीं हो सकता है।
इसलिए ऐसा कुछ करें, जो मन को निर्बल करे, निर्वीर्य करे, मृत करे।
लेकिन कुछ भी क्यों न करें, वह सबल ही होगा।
क्योंकि, सब करना उसी का करना है।
तब न करने— अक्रिया के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है।
न करना— अर्थात्— बस होना।
अब है मात्र और कुछ भी नहीं कर रहे हैं।
तभी यह जागरण आता है, जो कि ध्यान है।
और ध्यान मन से मुक्ति है।
ध्यान, अर्थात् अ-मन।

मन संसार में वाहन है।
अ-मन सत्य में।
संसार का वाहन सत्य के आयाम में साधक तो है ही नहीं, बाधक भी है।
जमीन पर चलें बैलगाड़ी से।
लेकिन, आकाश में बैलगाड़ी से न उड़ें तो अच्छा है।
यह आपके भी हित में है, और बैलों के भी हित में।
लेकिन बैलगाड़ी से परिचित होने के कारण ख्याल आता है कि जो जमीन पर चलती थी, वह आकाश में क्यों न चलेगी ?

इसमे बैलगाड़ी की कोई भूल नही है।
भूल है तो आकाश की ही है कि वह पृथ्वी नही है।

लेकिन, यह तो कभी हो भी सकता है कि बैलगाडी आकाश मे भी उड सके।
क्योंकि पृथ्वी और आकाश भिन्न हैं, लेकिन विपरीत नही।
पर मन की सत्य मे कभी कोई गति नही हो सकती है।
क्योकि संसार और सत्य के आयाम ही विपरीत हैं।
जैसे स्वप्न मे जागना सम्भव नही है।
क्योकि, जब तक स्वप्न है, तब तक जागरण नही है।
और जब जागरण है, तब स्वप्न नही है।
स्वप्न के अस्तित्व की मूलभूत शर्त ही निद्रा है।

ऐसी ही स्थिति मन और सत्य की है।
जब तक मन है, तब तक सत्य नही है।
और जब सत्य है, तब मन खोजे से भी नही मिलता है।
सत्य को आने देना है, तो मन को जानें दें।
उसके रिक्त स्थान मे ही सत्य का सिंहासन निर्मित होता है।

१७ सजग जीने की विधि और सजगता से तात्पर्य

सजगता से आपका क्या तात्पर्य है ?

पल-पल सजग जीवन कैसे जीया जाता है ?

सजगता से तात्पर्य है, बस सजगता।
साधारणत मनुष्य सोया-सोया जीता है।
स्वय की विस्मृनि निद्रा है।
और स्वय का स्मरण जागृति।
ऐसे जिये कि कोई भी स्थिति स्वय को न भुला सके।
उठते-बैठते, चलते-फिरते— सब मे— विश्राम मे 'स्व' न भूले।
'मैं हूँ' इसकी सतत चेतना बनी रहे।
फिर धीरे-धीरे 'मैं' मिट जाता है और मात्र 'हूँ' रह जाता है।
क्रोध आये, तो जाने कि 'मैं हूँ'— और क्रोध नही आयेगा।
क्योकि क्रोध केवल निद्रा मे ही प्रवेश करता है।
विचार घेरें, तो जानें कि 'मैं हूँ'— और विचार विदा होने लगेंगे।
क्योकि वे केवल निद्रा के ही सगी-साथीभर है।
और जब चित्त से काम, क्रोध, लोभ, मोह सब विदा हो जाएगे,
तब अन्त मे विदा होगा 'मै'।
और जहाँ 'मैं' नही, वही वह है, जो ब्रह्म है।

१८. साक्षीत्व की प्रक्रिया

हमारा जो मन है वह एक तीर की तरह है
जिसमे एक तरफ फल लगा हुआ है।
तीर को आपने देखा है, तीर दो तरफ नही चल सकता ?
अगर आप तीर को चला दे, तो एक ही तरफ जायेगा।
या कि आप सोचते है, दो तरफ भी जा सकता है ?
तीर के दो तरफ जाने का कोई उपाय नही है।
तीर जायेगा अपने निशाने की तरफ— एक तरफ।

तो जब प्रत्यचा पर कोई तीर चढाना है,
और प्रत्यचा से तीर छूटता है,
तो दो बाते ख्याल मे ले लें
प्रत्यचा, जहाँ वह चढा था, वहाँ से छूट जाता है, दूर हटने लगता है,
और जहाँ वह नही था—साध्य, लक्ष्य— उस तरफ बढ़ने लगता है।
एक स्थिति यह थी कि प्रत्यचा पर चढा था तीर, दूर बैठा था पक्षी वृक्ष पर,
उसकी छाती मे नही चुभा था तीर, तीर था प्रत्यचा पर—पक्षी पर नही था,
फिर छूटा तीर, प्रत्यचा से दूर होने लगा— और पक्षी के पास होने लगा।
फिर एक स्थिति आयी, तीर पक्षी की छाती मे चुभ गया—
प्रत्यचा खाली रह गयी और तीर पक्षी की छाती मे हो गया।

ध्यान मे पूरे समय हम यही कर रहे है
कि जब भी हमारे ध्यान का तीर छूटता है
तो हमारी प्रत्यचा से खाली हो जाता है— भीतर,
और जिसकी तरफ जाता है, उस पर जाकर टिक जाता है।

कोई चेहरा आपको सुन्दर लगा, तीर छूट गया ध्यान का।
भीतर नही है अब तीर।
अब ध्यान भीतर नही है।
अब ध्यान भागा और दौडा और सुन्दर चेहरे से जाकर लग गया।
सड़क पर हीरा पड़ा है, तीर छूट गया प्रत्यचा से।

अब ध्यान भीतर नही है।
अब ध्यान भागा, दौड़ा और जाकर चुभ गया हीरे की छाती मे।
अब ध्यान हीरे मे है, अब आपमे नही है—या अब ध्यान कही और है।

तो आपके सब ध्यान के तीर कही कही कही कही जाकर छिद गये हैं।
आपके पास भीतर कोई ध्यान नही है, हमेशा बाहर जा रहा है।

तीर तो एक-तरफा ही हो सकते है, लेकिन ध्यान दो-तरफा हो सकता है।
और वही हो जाय तो साक्षी का अनुभव होता है।
ध्यान का तीर दो-तरफा हो सकता है, उसमे दो फल हो सकते हैं।
और जब आपका ध्यान किसी की तरफ जाये,
तो अगर आप इतना कर पाएँ,
तो आपको साक्षी का अनुभव किसी-न-किसी दिन हो जायेगा।

जब आपका ध्यान किसी पर जाये,
रास्ते से गुजरी कोई सुन्दर युवती, कोई सुन्दर युवक—
आपका ध्यान अटक गया! अब आप अपने को बिल्कुल भूल गये!
यहाँ भीतर ध्यान न रहा।
अब आप होश मे नही है, अब आप बेहोश है।
क्योंकि आपका होश तो किसी और के पास चला गया।
अब आपका होश तो उसकी छाया बन गया।
अब आप होश मे नही है!

अगर आप यह काम कर सके कि कोई आपको सुन्दर दिखाई पड़ा,
ध्यान उस पर गया,
उस समय इस पर भी भीतर ध्यान जाए,
जहाँ से प्रत्यंचा से तीर छूट रहा है,
उसकी तरफ भी हम एकसाथ ही अगर देख पाएँ—
जहाँ से ध्यान जा रहा है, वह स्रोत—
और जिसकी तरफ ध्यान जा रहा है, वह लक्ष्य—
अगर दोनो हमारे ध्यान मे एक साथ आ जाएँ,

तो आपको पहली दफा पता चलेगा कि साक्षी का क्या अर्थ है।
कहाँ से ध्यान जा रहा है, उस स्रोत का अनुभव होना चाहिए,
कहाँ से ध्यान पैदा हो रहा है ?

वृक्ष हमे दिखायी पडता है, शाखाएँ दिखायी पडती है,
फूल-पत्ते दिखायी पडते हैं,
फल लग जाते हैं, वे दिखायी पडते हैं— जडें हमे नही दिखाई पडती।
जडें अन्धेरे मे छिपी हैं।
लेकिन वही से वृक्ष रस ले रहा है।
आपका ध्यान फैलता है चारो तरफ, जगत् का बडा वृक्ष निर्मित हो जाता है।
लेकिन जहाँ से ध्यान निकलता है—जिस स्रोत से,
जिस चैतन्य के सागर से निकलता है, उसका कोई भी पता नही चलता।
उन जडो का भी बोध साथ-साथ होने लगे,
एकसाथ आपको दोनो बात दिखायी पडने लगें, .

इसे ऐसा समझें
मै बोल रहा हूँ तो आपका ध्यान मेरे बोलने पर लगा है।
इसको दोहरा तीर बना लें।
यह दोहरा तीर अभी—इसी वक्त भी बन सकता है।
जब मैं बोल रहा हूँ, तो आप केवल— मैं जो बोल रहा हूँ— वही न सुनें,
आपको यह भी स्मरण रहे कि मैं सुन रहा हूँ।
बोलनेवाला कोई और है, वह बोल रहा है,
मै सुननेवाला हूँ, मैं सुन रहा हूँ।
अगर आप एक क्षण को भी— 'अभी— यही'—
ये दोनो बातें एकसाथ कर लें— सुनें भी और सुननेवाले का स्मरण भी,
रिमेम्बरिंग भी भीतर बनी रहे कि मैं सुन रहा हूँ,...

. शब्द दोहराने की जरूरत नही है।
अगर आप कहें कि 'मैं सुन रहा हूँ', तो उतनी देर मे आप सुन न पाएँगे,
जो मैंने कहा वह चूक जायेगा।

भीतर शब्द बनाने की जरूरत नहीं कि .'मैं सुन रहा हूँ' ..'मैं सुन रहा हूँ'।
अगर आपने ऐसा किया तो उतनी देर आप बहरे हो जाएँगे।
उस सेकेन्ड आप अपनी भीतर की आवाज़ सुनेंगे कि 'मैं सुन रहा हूँ',
लेकिन जो मैं बोल रहा हूँ यहाँ से वह आपका सुनाई नहीं पड़ेगा ।

मैं जो बोल रहा हूँ वह सुनाई पड़ता रहे,
और साथ ही आपको यह भी— सुनना भी सुनाई पड़ता रहे।
आप सुननेवाले है–ऐसी भी आपको प्रतीति हुई, एहसास हुआ, अनुभव हुआ–
यह दूसरा बिन्दु हो गया।

यह दूसरा बिन्दु पाना बहुत कठिन है।
अगर यह दूसरा बिन्दु आपको मिल जाए तो तीसरा बिन्दु पाना बहुत सरल है।
वह तीसरा बिन्दु यह है कि बोलनेवाला है 'अ', सुननेवाला है 'ब',
फिर आप कौन है भीतर जो कि दोनों को अनुभव कर रहे हैं—
बोलनेवाले को भी और सुननेवाले को भी ?
आप तीसरे हो गये—दि थर्ड प्वाइन्ट।
वह जो तीसरा बिन्दु है, वही साक्षी है।
इस तीसरे के पार नहीं जाया जा सकता।
यह तीसरा आखिरी बिन्दु है।
और यह है त्रिकोण जीवन का
दो बिन्दु—विषय और विषयी,
और तीसरा बिन्दु दोनों का— साक्षी।
दोनों को अनुभव करनेवाला।
दोनों को भी देख लेनेवाला।
दोनों का गवाह।

१९. सजगता और साक्षीत्व का फर्क

सजगता और साक्षित्व दोनो एक हैं, या उनमें भेद है ?

सजगता और साक्षित्व दोनो एक नही है,
लेकिन एक ही वस्तु के दो छोर अवश्य हैं।
वे चेतना के दो अनुभव है।

चेतना को एक ऐसा तीर समझें, जिसमे कि दोनो ओर फल हैं।
इस तीर का एक फल उस ओर है, जिसके प्रति कि चेतना चेतन है।
और दूसरा फल उस ओर है, जहाँ से कि चेतना चेतन है।
सजगता मे पहली बात की ओर इशारा है।
साक्षित्व मे दूसरी बात का ओर।

ध्यान इन दोनो मे से किसी भी छोर से शुरू किया जा सकता है।
क्योंकि, एक छोर अनिवार्यत दूसरे छोर को भी अपने साथ ही लपेट पाता है।
सजग हो, तो साक्षी आ जायेगा।
साक्षी हो, तो सजगता आ जायेगी।
जहाँ चेतना है, वहाँ दोनो हैं।
जहाँ अचेतना है, वहाँ दोनो नही हैं।

और जहाँ एक है, वहाँ अर्धचेतना, अर्धमूर्च्छा है।
साधारणत मनुष्य अर्धचेतना— अर्धमूर्च्छा की अवस्था मे है।
वह अर्धसजग, अर्ध-साक्षी है।
उसका होने का बोध अति धूमिल है।
जैसे कुहासा घिरा हो चारो तरफ,
ऐसे ही कुछ दिखाई भी पडता है, कुछ नही भी दिखाई पडता है।
जो देखता है, उसकी भी झलक कभी मिलती है, कभी नही मिलती है।
ध्यान इस अर्ध-स्थिति को तोडने का प्रयास है।
निद्रा मे, गहरी निद्रा मे, स्वप्न-तुल्य निद्रा मे,
सजगता और साक्षित्व दोनो सो जाते हैं।
ध्यान की पूर्णता मे दोनो खो जाते हैं।

इसीलिए, समाधि और सुषुप्ति विपरीत होकर भी एक अर्थ मे समान है।
सुषुप्ति मे न सजगता है, न साक्षी है, क्योकि दोनो ही सो गये हैं।
समाधि मे भी दोनो नही है, क्योकि दोनो खो गये हैं।
सुषुप्ति मे मूर्च्छा पूर्ण है, इसलिए द्वैत नही है।
समाधि मे प्रज्ञा पूर्ण है, इसलिए द्वैत नही है।
पूर्ण सदा अद्वैत है।
लेकिन, सुषुप्ति के गर्भ मे द्वैत है।
जबकि, समाधि मे द्वैत की मृत्यु हो गयी है।

ध्यान है प्रक्रिया, मूर्च्छा से प्रज्ञा की ओर।
उसके प्राथमिक प्रारम्भ ध्रुव दो हैं— सजगता और साक्षित्व।
बहिर्मुखी व्यक्तित्व के लिए सजगता से प्रारम्भ करना आसान है—
क्योकि सजगता बाहर से प्रारम्भ होती है।
अन्तर्मुखी व्यक्तित्व के लिए साक्षित्व से प्रारम्भ करना आसान है—
क्योकि साक्षित्व भीतरी ध्रुव से शुरू होता है।

ध्यान के ये प्रस्थान बिन्दु भिन्न है, लेकिन उपलब्धि एक ही है।
जैसे ही ध्यान मे एक ध्रुव स्पष्ट होता है,
वैसे ही दूसरा ध्रुव भी अनिवार्यत प्रकट हो जाता है।
और जैसे ही दोनो ध्रुव पूर्णरूपेण प्रकट होते है,
वैसे ही दोनो का अतिक्रमण हो जाता है।
यह अतिक्रमण ही समाधि बन जाता है।
फिर दो नही है।
फिर तो जो है, वह है।

२०. साक्षी और तथाता में भेद

साक्षी और तथाता मे भेद बताने की कृपा करें ?

साक्षी मे द्वैत मौजूद है ।
साक्षी अपने को अलग और जिसे जान रहा है, उसे अलग मानता है ।
अगर उसके पैर मे काँटा गडा है, तो साक्षी कहता है
मुझे नही गडा, मै जाननेवाला हूँ, काँटा शरीर को गडा है ।
गडना कही और है, जानना कही और है ।

'जानने' और 'होने' मे द्वैत है साक्षी की साधना मे ।
इसलिए जो साधक साक्षी पर रुक जाएँगे, वे एक तरह के ड्यूअलिज्म,
एक तरह के द्वैत मे घिर जाएँगे ।
अन्तत वे जगत् को दो हिस्से मे तोड देंगे— चेतन और जड ।
चेतन— वह जो जानता है, जड— वह जो जाना जाता है ।
अन्तत इस जगत् को दो हिस्सो मे तोडे बिना वे नही मानेंगे—
पुरुष और प्रकृति मे ।

साक्षी प्रकृति और पुरुष तक जायेगा ।
वह तोड देगा यह रही प्रकृति— जड, और यह रहा पुरुष— चेतन ।
जाननेवाला (नोअर) और जो जाना गया (नोन) मे फासला
खडा हो जायगा ।

तथाता और भी बडी बात है ।
तथाता का मतलब है, कोई द्वैत नही है,
न कोई जाननेवाला है, न कुछ जानने को है—
या जो जाननेवाला है, वही जाना भी जा रहा है ।
द नोअर इज द नोन ।

अब ऐसा नही है कि काँटा अलग है और मैं अलग हूँ ।
अब ऐसा भी नही है कि काँटा न गडा होता, तो अच्छा होता ।
अब ऐसा भी नही है कि काँटा निकल जाए, तो अच्छा हो ।

नही, अब ऐसा कुछ भी नही है ।
काँटे का होना, गडने का होना, गडने का पता चलना, पीडा का होना
सब हो सकता है ।
और सब एक ही चीज के छोर हैं ।

तो काँटा भी मैं हूँ, गडना भी मैं हूँ ।
जानना भी मैं हूँ, पहचानना भी मैं हूँ ।
सब मैं हूँ ।
इसलिए इस मै के बाहर कोई जाना नही है ।
न तो ऐसा सोच सकता हूँ कि काँटा न गडता—
क्योकि कैसे सोच सकता हूँ !
क्योकि काँटा भी मैं हूँ, जानना भी मैं हूँ ।
न मैं ऐसा सोच सकता हूँ कि काँटा न गडे तो अच्छा,
क्योकि अपने ही को कही काटकर अलग करूँगा ।

तथाता जो है, वह परम स्थिति है ।
वह, 'जो है', वह है ।
'जो है' उसकी परम स्वीकृति ।
उसमे कोई भेद नही है ।
लेकिन साक्षी हुए बिना तथाता तक नही पहुँचा जा सकता ।
हालाँकि कोई चाहे तो साक्षी पर रुक सकता है और तथाता पर न पहुँचे ।
सकल्प के बिना कोई साक्षी तक नही पहुँच सकता ।
हालाँकि कोई चाहे तो सकल्प पर रुक जाए और साक्षी पर न पहुँचे ।

जो आदमी सकल्प पर रुक जायेगा ।
वह आदमी शक्तिशाली तो बहुत हो [illegible] जायेगा,
लेकिन ज्ञानवान न हो पायेगा ।
इसलिए सकल्प के दुरुपयोग भी हो सकते हैं,
क्योकि वहाँ ज्ञान अनिवार्य नही है ।
शक्ति तो बहुत आ जाएगी, इसलिए उससे दुरुपयोग हो सकते हैं ।

सारा ब्लैक मैजिक जो है, वह संकल्प की ही शक्ति से पैदा हुआ है।
क्योंकि ज्ञान तो कुछ भी नही है, शक्ति बहुत आ गयी है।
उसका कुछ भी उपयोग हो सकता है।
संकल्पवान व्यक्ति शक्ति से भर गया है।
वह शक्ति का क्या उपयोग करेगा, यह कहना अभी मुश्किल है।
वह बुरा उपयोग भी कर सकता है।

शक्ति तटस्थ है।
लेकिन शक्ति होनी तो चाहिए ही।
बुरा करने के लिए भी होनी चाहिए, भला करने के लिए भी होनी चाहिए।
और मेरा मानना है कि शक्तिहीन होने से शक्तिवान होना बेहतर है।
चाहे बुरा भी करो तो भी ठीक है,
क्योंकि जो बुरा करता है, वह कभी अच्छा भी कर सकता है।
लेकिन, जो बुरा नहीं कर सकता, वह तो अच्छा भी नही कर सकता।
इसलिए निर्वीर्य, शक्तिहीन होने से शक्तिवान होना बेहतर है।

शक्तिवान होने मे भी शुभ और अशुभ की यात्राएँ हैं।
शक्तिवान होकर शुभ की यात्रा पर होना बेहतर है।
शक्ति की शुभ की यात्रा अगर ठीक से चले, तो साक्षी पर पहुँचा देगी।
अगर अशुभ की यात्रा चले, तो साक्षी पर नही पहुचाएगी,
साधक संकल्प की शक्ति मे ही भटक कर रह जायेगा।
तब मेस्मेरिज्म हो,
हिप्नोटिज्म होगा, तन्त्र होगा, मन्त्र होगा, जादू-टोना होगा,
सब तरह की चीजें पैदा हो जाएँगी।
लेकिन, इससे कोई आत्मा की यात्रा नही होगी।
यह भटकाव हो गया।
शक्ति तो हुई, लेकिन भटक गयी।

अगर शक्ति शुभ की यात्रा पर चले, तो साक्षी का जन्म हो जायेगा।
क्योंकि, अन्तत जब शक्ति पैदा होगी, तो आदमी शक्ति का इसलिए उपयोग करेगा कि स्वयं को जान सके और पा सके।

यह मेरी शुभ यात्रा हो गयी।
शक्ति की अशुभ यात्रा का मतलब है कि दूसरे को दबाऊँ,
दूसरे का मालिक हो जाऊँ, दूसरे को कस लूँ।
तो अशुभ यात्रा शुरू हो गयी।
वह ब्लैक मैजिक है।
शक्ति से अपने को पाऊँ, पहचानूँ, जान लूँ कौन हूँ, क्या हूँ—
यह शुभ यात्रा हो गयी।

अगर शक्ति शुभ यात्रा पर होगी, तो साक्षी बन जायेगी।
अगर साक्षी का भाव, सिर्फ मैं स्वयं को जान लूँ, इतने पर तृप्त हो जाए,
तो पाँचवे शरीर[1] तक बात पहुँचेगी और खत्म हो जायेगी।
लेकिन साक्षी का भाव अगर और गहरा हो
और इसका भी पता लगाया जाये कि मैं अकेला तो नहीं हूँ,
मेरे होने में चाँद-तारे भी सम्मिलित हैं, सूरज भी सम्मिलित है,
मेरे होने में पत्थर, मिट्टी, फूल, पौधे सब सम्मिलित हैं,
मेरे होने में दूसरों का होना भी सम्मिलित है,
मेरा होना सम्मिलित होना है—अगर इस ख्याल से यात्रा शुरू हो,
तो तथाता तक पहुँच जायगा।

तथाता धर्म की परम उपलब्धि है, जहाँ सब स्वीकार है,
टोटल ऐक्सेप्टीबिलिटी है।
जैसा हो रहा है, वह सबके लिए राजी है,
जो आदमी, जैसा हो रहा है, सबके लिए पूरा राजी है,
ऐसा आदमी ही पूर्ण शान्त हो सकता है।
क्योंकि जो जरा भी शिकायत से भरा है, उसकी अशान्ति जारी रहेगी।
जिसके मन में जरा भी ऐसा है कि 'ऐसा होना था' और 'ऐसा नहीं हुआ',
तो उसके मन में तनाव जारी रहेगा।
परम शान्ति, परम तनावमुक्तता, परम मुक्ति तथाता में ही सम्भव है।

---

१. सात शरीरों के सम्बन्ध में विस्तार से जानने के लिए 'जिन खोजा तिन पाइयाँ' देखें।

पर संकल्प हो, तो साक्षी तक जाया जा सकता है,
साक्षीभाव हो, तो तथाता तक जाया जा सकता है।
क्योंकि जिस व्यक्ति ने अभी साक्षी होना ही नहीं जाना,
वह सर्व-स्वीकार नहीं जान सकता।
जिसने अभी यही नहीं जाना कि मैं काँटे से अलग हूँ,
वह कभी यह नहीं जान सकता कि मैं काँटे से एक हूँ।
असल में काँटे से अलग होना जो जान ले, वह दूसरा कदम उठा सकता है—
काँटे से एक होने का।
तथाता को समझने में वह सहयोगी होगा।

बुद्ध खुद अपने लिए भी 'तथागत' शब्द का उपयोग करते हैं।
बुद्ध खुद कहते हैं कि तथागत ने ऐसा कहा।
'तथागत' का मतलब है—'दस केम, दस गॉन, ऐसे आये और ऐसे गये'।
जैसे हवा का झोंका आये और चला जाये।
न कोई प्रयोजन न कोई अर्थ।
बस हवा का झोंका जैसे आये भीतर और चला जाये—
जो ऐसे ही आये और गये।
जिनका आना-जाना ऐसा निष्प्रयोजन, निष्काम है—
जैसा हवा का झोंका हो।
ऐसे व्यक्तित्व को कहते हैं, तथागत।

लेकिन हवा के झोंके की तरह कौन आयेगा और कौन जायेगा?
हवा के झोंके की तरह वही आ और जा सकता है, जो तथाता को उपलब्ध है।
जिसको न आने से कोई फर्क पड़ता है, न जाने से कोई फर्क पड़ता है
आये तो आये, गये तो गये।

संकल्प से साक्षी, साक्षी से तथाता—ऐसी यात्रा है।

२१. केवल होश और तथाता मे साम्य

जस्ट अवेयरनेस, केवल होश और तथाता क्या एक ही बात है ?

अमल मे जब हम कहते है 'जस्ट अवेयरनेस, बस होश-मात्र',
तो इसमे और तथाता मे थोडा-सा फर्क है ।
इसमे और साक्षी मे भी थोडा-सा फर्क है ।
ऐसा समझे कि यह साक्षी और तथाता के बीच की कडी है ।
जब तुम साक्षी से गुजरोगे तथाता तक,
तब यह बीच की एक कडी होगी— जस्ट अवेयरनेस ।

साक्षी होने मे 'मै हू' और 'तू है' का भाव पक्का है ।
जस्ट अवेयरनेस मे 'मैं' और 'तू' का भाव भूल गया है,
सिर्फ होने का भाव रह गया है ।
तथाता मे सिर्फ होने का भाव ही नही है,
तथाता मे यह 'मेरा होना' और 'तेरा होना' एक ही होना है ।
क्योकि जब तक 'जस्ट अवेयरनेस' ही है,
तब तक सिर्फ होने का भाव भी है ।
तब तक होने के भाव के बाहर एक सीमा होगी, जो मैं नही हूँ ।

अगर तथाता कहे, तो 'जस्ट बीइग' ठीक है, 'जस्ट अवेयरनेस' नही ।
'बीइग' बडा शब्द है ।
जैसे ही तुम कहते हो 'जस्ट अवेयरनेस— होश मात्र',
उसमे कुछ को छोड दिया ।
वह 'जस्ट' शब्द जो है, वह छोडनेवाला है ।
जब हम कहते है 'बस चेतना', तो 'बस' के बाहर हमने कुछ छोड दिया ।
नही तो 'बस' क्या लगाते हम ?
जब हम कहते है 'सिर्फ चेतना', तो 'सिर्फ' के बाहर कुछ को इनकार
कर दिया ।
नही तो 'सिर्फ' क्यो लगाते ?

७

ध्यान मन्दिर

ध्यान मन्दिर

'ध्यान-मन्दिर' की आवश्यकताओं पर भगवान् श्री रजनीश के २ पूरे प्रवचन

प्रवचन–१

ध्यान-मन्दिर से एक ऐसे स्थान का प्रयोजन है जहाँ किसी भी धर्म का, किसी भी मार्ग का और किसी भी तरह से सोचनेवाला व्यक्ति वैज्ञानिक रूप मे, साइन्टिफिक विधि से ध्यान से परिचित हो सके और ध्यान मे प्रवेश कर सके।
इतना ही नही, ध्यान के मार्ग पर जो बाधाएँ है—
उनसे परिचित हो सके वैज्ञानिक ढग से।
और ध्यान रहे! मैं जोर देकर कह रहा हूँ, 'वैज्ञानिक ढग से'—
क्योकि मन्दिरो की कोई कमी नही है, मस्जिदो की कोई कमी नही है, गुरुद्वारे बहुत है— लेकिन गुरुद्वारो की, मस्जिदो की, मन्दिरो की भाषा और आज के आदमी के बीच कोई सम्बन्ध नहीं रह गया।

ऐसा नही है कि मन्दिर जो बोलते हैं, वह गलत बोलते हैं।
और ऐसा भी नही है कि मस्जिद मे जो कहा जाता है, वह गलत है।
और ऐसा भी नही कि गुरुद्वारा जो सन्देश लिये बैठा है, वह गलत है।
वे सन्देश सब ठीक है, लेकिन भाषा उनकी इतनी पुरानी पड गयी है कि उससे आज के आदमी का कोई सम्बन्ध नही है।
आज कोई सम्बन्ध हो भी नही सकता,
आज के आदमी की सारी शिक्षण की व्यवस्था वैज्ञानिक है—
और मन्दिर और मस्जिद, और गुरुद्वारे के सोचने के सारे ढग पूर्व-वैज्ञानिक है—प्रि-साइन्टिफिक है।
उनसे आज के आदमी का कही भी कोई तालमेल नही हो पाता।

ध्यान-केन्द्र से या ध्यान-मन्दिर से मेरा प्रयोजन है
वैज्ञानिक विधियो से, वैज्ञानिक व्यवस्था से, आधुनिक आदमी के मन को

ध्यान से न केवल बौद्धिक रूप से परिचित कराया जा सके,
बल्कि प्रयोगात्मक, एक्सपेरिमेन्टली भी उसे ध्यान मे प्रवेश दिया जा सके।
और बौद्धिक रूप से ध्यान से परिचित होना बहुत कठिन है,
प्रयोगात्मक रूप से परिचित होना बहुत सरल।
कुछ चीजे है जिन्हे हम करके ही जान सकते है,
जिन्हे हम जानकर कभी नही कर सकते।
असल मे उन्हे हम जान ही नही सकते, जब तक कि हम कर न ले।

ध्यान-मन्दिर मे एक ऐसी वैज्ञानिक व्यवस्था हो, जिसमे प्रत्येक व्यक्ति
आज की आधुनिक भाषा एव प्रतीको मे ध्यान को समझ सके—
न केवल समझ सके, बल्कि कर भी सके— ध्यान से परिचित भी हो सके।

इसमे दो-तीन बातें ख्याल मे लेने जैसी है।
कई बार बहुत छोटी-सी चीजे हमारे ख्याल मे नही होती।
डा० पर्ल्स एक अमेरिकन मनोवैज्ञानिक है।
उसने एक बहुत छोटी-सी बात पर जिन्दगीभर प्रयोग किया—
एक बहुत छोटी बात, जिसका हमे ख्याल भी नही हो सकता।
उसका कहना है कि जो आदमी भोजन ठीक से चबा के नही करता,
उस आदमी की जिन्दगी मे हिंसा ज्यादा होगी, वह ज्यादा वायलेन्ट होगा।
जो आदमी भोजन ठीक-से चबा के करता है,
उसकी जिन्दगी मे हिंसा कम हो जायेगी।

यह बहुत अजीब-सी बात मालूम पडती है
चबाने से और हिंसा का क्या सम्बन्ध हो सकता है?
लेकिन पर्ल्स की तीस साल की खोज यही है
कि सभी जानवरो की हिंसा उनके दाँतो से बधी होती है,
सभी जानवर दाँत मे हिंसा करते हैं—
जब भी हिंसा करते है तो दाँत से ही करते है।
आदमी की हिंसा भी उसके दाँतो मे केन्द्रित है।
लेकिन आदमी ने जो भोजन विकसित किये है,

उनमे उतनी हिंसा नही हो पाती,
इसलिए उसके दाँत की हिंसा उसके पूरे शरीर मे फैल जाती है।

पर्ल्स ने पिछले दस वर्षों मे अनेक लोग—
जो वायलेन्ट थे, पागल थे, जो हिंसा बिना किये रह नही सकते थे,
उनको सिर्फ भोजन ठीक-से चबाने का प्रयोग करवाया और पाया कि तीन
महीने के प्रयोग मे जो आदमी चीजो को बिना तोडे-फोडे नही रह सकता था,
जो आदमी किसी-न-किसी को मारे बिना नही रह सकता था,
उस आदमी की हिंसा तिरोहित हो गयी।
फिर उसने दाँतो और हिंसा और मनुष्य के व्यक्तित्व की वैज्ञानिक आधारो
पर खोजबीन की और उसकी बात बहुत दूर तक सच साबित हुई।

आप प्रयोग करके देखे तो ख्याल मे आयेगा।
एक पन्द्रह दिन भोजन को इतना चबाएँ
कि जब तक वह लिक्विड न हो जाये, तब तक उसको भीतर न ले जाएँ।
और चौबीस घन्टे आप स्मरण करें
कि आपकी हिंसा मे रोज फर्क पडता है, या नही पडता है ?
और आप इक्कीस दिन के प्रयोग के बाद दग हो जाएँगे
कि आपके क्रोध मे फर्क हो गया है।
और क्रोध के लिए कुछ भी नही करना पडा, करना पडा कही कुछ और।
और अगर आप सीधे क्रोध के लिए कुछ करेंगे, तो कोई फर्क नही पडेगा,
क्रोध दब जायेगा एक तरफ से और दूसरी तरफ से निकलना शुरू हो जायेगा।

आपको क्रोध आ जाये जोर से, तो अपनी टेबल के नीचे दोनो हाथ
बाँध के नाखूनो को अपनी ही गद्दी मे जोर से गडा लें,
फिर तीन बार मुट्ठी जोर से भीचे और खोलें,
और फिर क्रोध करके देखें।
तो आप बहुत हैरान हो जाएँगे
तीन बार मुट्ठी को खोलने और बन्द करने मे वह ताकत खो गयी
जिससे आप क्रोध कर सकते थे।

असल मे नाखून और दाँत हिसा के केन्द्र हैं।
सारे जानवर नाखून और दाँतो से हिसा कर रहे हैं।
और चूँकि आदमी के पास दाँत कमजोर थे, और नाखून कमजोर थे,
इसलिए उसने हथियार बनाये,
जिनसे उसने दाँतो और नाखूनो का काम लिया है।
अगर हम आदमी के सारे हथियारो को देखें तो पाएँगे—
या तो वे दाँत का विस्तार है, या नाखून का।

ध्यान-केन्द्र पर मैं इस तरह की सारी-की-सारी वैज्ञानिक व्यवस्था करना चाहता हूँ, जहाँ आपकी हिसा, आपका क्रोध, आपकी चिन्ता, आपका तनाव, आपकी अनिद्रा, इन्सोमेनिया, आपके चित्त पर आनेवाले सारे विकार क्यो पैदा होते हैं, कैसे पैदा होते हैं— वे आपको पैदा करके भी बताये जा सकें और वे कैसे विदा होते है, वह आपसे ही विदा करवा के भी बताया जा सके।

यह नकारात्मक हिस्सा होगा ध्यान का,
कि आप मे जो व्यर्थ का कचरा इकट्ठा है, वह कैसे अलग हो सके।
और फिर विधायक रूप मे ये मैंने चार सीढियाँ कही
'वैखरी, मध्यमा पश्यन्ति, परा'—
इन चार सीढियो मे आपको भीतर कैसे उतारा जा सके,
आप इनमे भीतर कैसे उतर जाएँ,

एकबार बाहर का कचरा फिक जाये,
तो भीतर उतर जाना बडी ही सरल बात है, बहुत कठिन नही।
शायद इस जिन्दगी मे हम बहुत-सी फिजूल की बातें सीखने मे जितना समय नष्ट करते हैं, उससे बहुत कम समय मे ध्यान मे गति शुरू हो जाती है।
मीटरलिंक ने कही लिखा है कि एक आदमी नरक जाने के लिए जितनी मेहनत उठाता है, उससे बहुत कम मेहनत मे स्वर्ग पहुँच सकता है।

हम क्रोध के लिए जितना श्रम करते हैं,
उससे बहुत कम श्रम मे हम ध्यान मे उतर सकते है।
हम दूसरे के साथ लडने मे जितना श्रम करते है,

उतना अगर अपने को बदलने के लिए करें, तो हम कभी के परमात्मा की प्रतिमा को अपने भीतर खोजने मे सफल हो जाएँ।
हम बाहर के रास्तो पर जितना दौडते है,
अगर उससे सौवाँ हिस्सा भी हम भीतर के रास्ते पर जाएँ
तो हम अपने पास पहुँच जाएँ।

और जो आदमी अपने पास नही पहुँचता,
वह बाहर कितना ही दौडे, वह कही भी नही पहुँचेगा।
जो अपने तक ही नही पहुँच पाया, वह कही और नही पहुँच सकता है।
और जिसे अपने भीतर कोई शान्ति का संगीत नहीं मिला,
उसे बाहर— वह जगत् के कोने-कोने मे घूम आये—
नरक के अतिरिक्त कुछ भी मिलनेवाला नही है।
हम अपना नरक या अपना स्वर्ग अपने साथ लेकर चलते हैं।

इस ध्यान-मन्दिर को एक वैज्ञानिक व्यवस्था—
साम्प्रदायिक जरा भी नही, किसी धर्म मे बधी हुई जरा भी नही—
और सब धर्मों के लिए खुला हुआ,
और प्रत्येक धर्म ने भी जो ध्यान के अलग-अलग प्रयोग खोजे हैं,
उनकी भी क्या वैज्ञानिकता है,
उस पर भी प्रयोग करने का उस केन्द्र मे ख्याल है।

कोई एक सौ बारह विधियाँ है सारे जगत् मे ध्यान की।
और प्रत्येक विधि अद्भुत है।
और एक सौ बारह विधियो से आदमी परमात्मा तक पहुँच सकता है।
उसमे एक-दूसरे से बिलकुल विपरीत विधियाँ भी है।
इसलिए एक विधि को माननेवाला दूसरी विधि को बिलकुल गलत कहता है।
लेकिन वे एक सौ बारह विधियाँ सभी व्यक्तियो को ध्यान और शान्ति और आनन्द और सत्य तक तक ले जाने का मार्ग बन जाती है।

इस ध्यान-केन्द्र पर पूरी तक एक सौ बारह विधियो का प्रयोग करने का ख्याल है।

और तब पहली बार पृथ्वी पर उस तरह का प्रयोग होगा,
जिसमें आज तक पृथ्वी पर आविष्कृत ध्यान की सारी प्रक्रियाओं को
एकसाथ, एक जगह पर

हम एक भी व्यक्ति को वहाँ खोना न चाहेंगे—
वह किसी भी मार्ग से जा सके, उस मार्ग पर ही उसे सुझाव दिये जा सकेंगे।

इन सारी एक सौ बारह विधियों पर विस्तृत वैज्ञानिक व्यवस्था इस
ध्यान-केन्द्र में देना चाहता हूँ।
और न केवल आपको समझाया जा सके,
बल्कि आपको करवाया जा सके।
अगर एक विधि से न हो सके तो दूसरी विधि से करवाया जा सके,
लेकिन हम आपको उस मन्दिर से निराश न लौटने दें,
क्योंकि एक सौ बारह ये चरम विधियाँ हैं, इनसे ज्यादा हो नहीं सकती।
अगर एक विधि काम नहीं करती, दूसरी करेगी—
दूसरी नहीं करती, तीसरी करेगी—
और आपकी विधि तत्काल खोज ली जा सकती है
कि कौन-सी विधि आप पर काम करेगी।

आप पर कौन-सी विधि काम करेगी, इसको खोजने का भी विज्ञान है।
और यदि हम, इस समय देश के बड़े-बड़े नगरों में— और देश के बाहर भी—
ध्यान के ऐसे विज्ञान-मन्दिर निर्मित कर सकें, तो मनुष्य-जाति के लिए—
जो आज सर्वाधिक पीड़ा और सन्ताप से गुजरती है— गुजर रही है,
और जिसे कोई मार्ग नहीं दिखाई पड़ता— क्योंकि जो-जो हमने सोचा था
कि इससे सब ठीक हो जायगा, उससे कुछ भी ठीक नहीं हुआ।
सोचा था कि लोगों के पास भोजन ठीक होगा, तो सब ठीक हो जायेगा,
आज आधी दुनिया के पास भोजन बिलकुल ठीक है!
सोचा था कि लोगों के पास कपड़े होंगे, मकान होंगे, अच्छे रास्ते होंगे,
दवा होगी, चिकित्सा होगी, बीमारियाँ कम होंगी .
. आज आधी दुनिया के पास सब है!

एक बडी अद्भुत घटना घटी है कि जिनके पास आज सब है,
वे ही सर्वाधिक अशान्त, बेचैन और परेशान हो गये है।
गरीब मुल्क एक अर्थ मे सौभाग्यशाली है,
भूखे मरते हुए मुल्क एक अर्थ मे सौभाग्यशाली है,
क्योकि अभी उनकी आशा जीवित है,
उन्हे ख्याल है कि समाजवाद आयेगा, धन बढेगा, धन बँटेगा—
सब ठीक हो जायेगा।
यह आशा भी उन मुल्को की टूट गयी, जहाँ यह सब ठीक हो गया।
अब वे बडी निराशा मे, गहन निराशा मे खडे हो गये हैं।
इतनी होपलेसनेस, इतनी आशा-रहितता कभी मनुष्य के इतिहास मे पैदा
नही हुई थी।

आज अमेरिका जितना आशाहीन है, उतना पृथ्वी पर कोई भी नही है।
और आज अमेरिका मनुष्य के इतिहास मे पृथ्वी का सर्वाधिक सम्पन्न,
सर्वाधिक सुखी— हमारे अर्थो मे, सब-कुछ जिसके पास है—
और फिर भी अचानक अनुभव हो रहा है कि कुछ भी पास नही है।
इतनी आशाहीन स्थिति का कारण एक है
हमने सोचा था जिन बातो से मिलेगा सब,
वे सब डिसइल्यूजन्मेन्ट, वे सब भ्रम टूट गये।
और अब हमे वापस लौटकर सुनना पडेगा—
बुद्ध को, कृष्ण को, क्राइस्ट को, मुहम्मद को,
क्योकि उन्होने बहुत-बहुत बार, बहुत पहले यह कहा था
कि अगर सब भी मिल जाये मनुष्य को
लेकिन अगर स्वय का अनुभव न मिले,
तो कुछ भी मिलता नही।

लेकिन हमे उनकी बात ख्याल मे नही आ सकी।
नही आ सकती थी, क्योकि बात बडी काल्पनिक मालूम पडती थी,
बहुत [1]यूटोपिअन मालूम पडती थी।

---

[1] आदर्शवादी

और जो लोग कहते थे 'धन मिल जाये, मकान मिल जाये',
उनकी बात बड़ी प्रैक्टिकल और व्यावहारिक मालूम पड़ती थी।
इतिहास का मजाक है कि जो लोग बहुत प्रैक्टिकल थे,
वे बहुत यूटोपिअन सिद्ध हुए— और जो बहुत यूटोपिअन थे,
आज पृथ्वी पर वे ही सबसे ज्यादा प्रैक्टिकल सिद्ध होने के करीब हैं।

लेकिन धर्म अब पुराने रास्तों से नहीं लौटाया जा सकता,
अब धर्म नये ही रास्तों से प्रवेश करेगा।
इसके नये रास्ते वैज्ञानिक और तकनीकी होंगे।

अब जैसे एक आदमी हिमालय जाता था।
आज भी हम सोचते हैं 'एक आदमी हिमालय जाये,
तो ध्यान में जा सकता है',
लेकिन कभी हमने सोचा नहीं कि हिमालय किसलिए जाता था।
जितना ताप कम हो जाये वातावरण में,
उतना भीतर प्रवेश आसान हो जाता है,
लेकिन कितने लोग हिमालय जा सकते हैं ?
लेकिन बम्बई में एक[1] एयरकन्डीशन्ड मेडिटेशन हॉल हो सकता है,
कोई हिमालय जाने की जरूरत नहीं।
क्योंकि हिमालय पर जो ठण्डक मिल सकती है,
वह बम्बई में भी उपलब्ध हो सकती है अब।
अब हिमालय पर जाने की व्यर्थ की दौड़धूप है।
अब तो ठीक बम्बई के बीच बाजार में भी उतनी ही शीतलता उपलब्ध हो सकती है, जितनी एक योगी को हिमालय की चोटी पर उपलब्ध होती थी।
उसके आसपास भी बर्फ फैलाया जा सकता है।
अगर बर्फ से ही कुछ लाभ होता है, तो बर्फ फैलाया जा सकता है।
अगर ऊँचाई से कुछ लाभ होता है,
जमीन के [2]ग्रेव्हिटेशन के कम होने से कुछ लाभ होता है,
तो बम्बई में भी ग्रेव्हिटेशन कम किया जा सकता है।

---

१ वातानुकूलित ध्यान-भवन २ गुरुत्वाकर्षण

अगर मौन से लाभ हो सकता है,
तो बम्बई मे भी [1]साउण्डप्रूफ इन्तजाम किये जा सकते है।

और अधिकतम लोगों के लिए हिमालय की चोटी सम्भव नही है।
और अगर अधिक लोग पहुच जाएँ, तो हिमालय की बर्फ भी पिघल जायेगी।
वे भी अधिक लोग नही पहुँचे है, तभी तक है।
अधिक लोग वहाँ पहुँच जाएँ, तो वहाँ भी इतना ही उत्ताप पहुँच जायेगा,
इतनी ही गर्मी पहुच जायेगी।
एवरेस्ट पर जिस दिन जाने का रास्ता सीधा होगा,
उस दिन हम बस्तियाँ वहाँ भी बसा लेगे।

आनेवाले भविष्य मे मनुष्य जहाँ है,
वही सारी टेक्नोलाजी और साइन्स का उपयोग किया जा सकता है—
और वही सारी व्यवस्था की जा सकती है,
जो कि एक योगी को बडी तकलीफें उठाकर करनी पडती थी।
वह अब विज्ञान के द्वारा सम्भव हो गयी हैं,
वह अब एक सामान्य आदमी के लिए भी सुलभ हो सकती है।

विज्ञान और टेक्नोलाजी का पूरा उपयोग करके ही
इस ध्यान के मन्दिर को निर्मित करना है।
यह ध्यान का मन्दिर— मन्दिर सिर्फ इसी अर्थों मे होगा कि वह ध्यान का है,
अन्यथा वह एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला होगी।
इस वैज्ञानिक प्रयोगशाला मे मनुष्य ने जो-जो खोज की है आदमी के
सम्बन्ध मे, उसका पूरा उपयोग किया जाना चाहिए।

एक आदमी ध्यान करने आता है, लेकिन उसका [2]ब्लडप्रेशर बढा हुआ है।
इस आदमी को ध्यान मे ले जाना आसान नही है,
इस आदमी को ध्यान मे ले जाना कठिन है।
इसके रक्तचाप की जो अधिकता है, वह इसके ध्यान मे बाधा बनेगी।
पुराने आदमी के पास रक्तचाप को नापने का कोई माध्यम नही था,

१ ध्वनिरोधि, २ रक्तचाप

लेकिन आज के ध्यान-मन्दिर मे रक्तचाप नापने का माध्यम हो सकता है,
रक्तचाप को कम करने की व्यवस्था हो सकती है
और फिर ध्यान मे ले जाने की सुविधा बनाई जा सकती है ।
एक बार आदमी ध्यान मे चला जाये,
तो रक्तचाप मे जाना मुश्किल हो जायेगा,
लेकिन रक्तचाप मे डूबे हुए आदमी को ध्यान मे जाना मुश्किल हो जाता है ।

सारी दुनिया के योगियो ने अल्प-आहार पर जोर दिया है,
कम खाने पर जोर दिया है, उपवास पर, अल्प-आहार पर,
कम भोजन पर, सम्यक् आहार पर,
सारी दुनिया के योगियो ने जोर दिया है ।
फिर भी उनके पास अल्प-आहार क्या है,
इसकी ठीक-ठीक जाँच की कोई व्यवस्था नही थी, सिवाय अनुमान के ।
न उन्हे कैलेरीज का कुछ पता था, न उन्हे भोजन के तत्वो का कुछ पता था ।

इसलिए कई बार ऐसा हुआ कि अल्प-आहार के नाम पर जो चला,
उससे नुकसान ही पहुँचा ।
आज हमारे पास बहुत वैज्ञानिक व्यवस्था है
कि एक आदमी को कितनी कैलेरि भोजन की जरूरत है ।
और हम यह तय कर सकते है कि उसकी कितनी कैलेरि कम हो जाये,
तो उसे ध्यान मे आसानी हो जायेगी—
और कितनी कैलेरि ज्यादा हो जाये, तो कठिनाई हो जायेगी ।
अगर ज्यादा भोजन है तो ध्यान मे कठिनाई हो जायेगी,
क्योंकि भोजन ज्यादा नीद माँगता है ।
उसे पचाने के लिए उतनी ज्यादा नींद चाहिए ।
कम भोजन कम नीद माँगता है ।
और जितनी भीतर निद्रा कम पैदा होती हो,
उतना ध्यान का जागरण पैदा हो सकता है ।

ध्यान तो जागरण है ।
एक आदमी ध्यान करने बैठना है और ज्यादा भोजन करके बैठ जाता है,

तो फिर कठिनाई होगी।
लेकिन ज्यादा भोजन से मतलब सिर्फ पेट मे ज्यादा चीजे चली जाएँ,
इसमे नही है,
क्योकि हो सकता है, एक आदमी ने बहुत शाक-सब्जी खा ली हो—
पेट पर तो वजन ज्यादा हो, लेकिन भोजन ज्यादा न हुआ हो,
और एक आदमी ने थोडी-सी ही मिठाई खाई हो—
पेट पर तो वजन कम हो, लेकिन भोजन ज्यादा हो गया हो।
और आमतौर से साधु-सन्यासी, मिठाई खाते रहे, दूध पीते रहे,
रबडी लेते रहे— इस बात का बिना ख्याल किये

लेकिन उसका कोई उपाय नही था, उसका कोई साफ ख्याल नही था,
आज हमारे पास उपाय है।

एक आदमी कितना सोये,
इस पर निर्भर करेगा कि उसकी ध्यान मे गति कैसी हो सकेगी।
दोनो बातें सम्बन्धित हैं।
अगर ध्यान ठीक हो जाये, तो नीद ठीक हो जायेगी।
लेकिन ध्यान को ठीक करना उतना आसान नही,
जितना नीद को ठीक कर लेना आसान है।
पहले नीद ठीक कर ली जाये, तो ध्यान मे गति बहुत आसान हो जाये।
अब लोगो के पास नीद ही नही है,
वे रातभर सोये नही सुबह ध्यान करने बैठ गये हैं।
जो आदमी रातभर सोया नही है, वह ध्यान मे सिर्फ सोयेगा।
इसलिए मन्दिरो मे पूजा करते हुए—
साधु को सुनते हुए लोग अगर सो जाते हैं, तो बहुत हैरानी नही है।
मैंने तो सुना है, कुछ डॉक्टर सलाह देते है कि धर्म-सभा मे चले जाना चाहिए,
अगर नीद न आती हो।

मैंने सुना है एक बहुत बडा पादरी अपने एक मित्र को बार-बार कहता था—
कि तुम कभी मेरा व्याख्यान सुनने आओ।
पादरी नही माना तो एक दिन वह मित्र सुनने गया।

पादरी अच्छे-से-अच्छा जो बोल सकता था, बोला।
बाहर जब दोनो निकलने लगे तो उसने अपने मित्र से पूछा
कि व्याख्यान कैसा लगा ?
मित्र ने कहा "बहुत ही ताजगी देनेवाला—रिफ्रेशिंग।"

पादरी के हृदय की धडकन खुशी से बढ गयी,
उसने कहा "कौन-सी बात तुम्हे इतनी ताजगी देनेवाली लगी ?"

उसने कहा कि "जब मेरी नीद खुली, तो मन बडा ताजा था।
इतनी ताजगी तो मुझे घर भी जब नीद आती है, तब भी नही मिलती।
मै जरूर आया करूँगा, भाषण बहुत रिफ्रेशिंग था।"

क्यो— आखिर मन्दिर मे,
धर्म-कथा मे आदमी को नीद क्यो आ जाती है ?
बात क्या है ?

. बोर्डम! ऊब पैदा हो जाये, नीद आ जाती,
कोई चीज उबाने लगे, नीद आ जाती—
और नीद की कमी हो, तो जल्दी ही कोई चीज उबाने लगती है।

जिनको नीद नही आती, वे मेरे पास आते है।
वे कहते हैं 'हमे नीद नही आती, ध्यान से शायद नीद आ जाये ?'
उन्हे पता नही, ध्यान मे नीद जरूर ठीक हो जायेगी,
लेकिन नीद का ठीक होना ध्यान मे जाने के पहले बहुत जरूरी है।
अन्यथा ध्यान मे जाना मुश्किल हो जायेगा, कठिन हो जायेगा।
कठिन इसलिए हो जायेगा कि चित्त की पहली जरूरत नीद की है।
और जैसे ही विश्राम मिला, चित्त सो जायेगा।
और ध्यान मे जरूरत है विश्राम मे भी जागे हुए होने की,
रिलेक्स्ड एण्ड अवेयर।
एक तरफ सब विश्राम है और एक तरफ सब जागा हुआ है,
तभी कोई ध्यान मे प्रवेश कर सकता है।

और नींद का नियम यह है कि यहाँ हम विश्राम मे हुए बाहर
कि भीतर नींद आ गयी—रिलैक्स्ड हुए कि नींद आ गयी।

तो ध्यान मे अक्सर लोग सो जाएँगे।
अब यह सारी व्यवस्था आज की जा सकती है
नींद नापी जा सकती है, उनके सपने नापे जा सकते हैं—
कि कितने सपने आपको आ रहे हैं।
आपको भी नहीं पता होगा— कितने सपने आ रहे हैं, कैसे सपने आ रहे हैं?

कल ही एक साधिका मेरे पास थी।
ध्यान करना है उसे।
मैंने उसके सपनो के बाबत पूछा,
उसने कहा कि सपनो से क्या मतलब आपको? मुझे ध्यान करना है।
मैंने उससे कहा, मुझे पूछना बहुत जरूरी है, क्योंकि सपने ही मुझे बताएँगे कि
तुम्हे सच मे ध्यान करना है या कुछ और करना है।
उसने कहा "सपने मे तो मुझे सिवाय काम-वासना के और हिंसा के—
हत्या के, आग लगा देने के— इस तरह के ही सपने आते है।"
तो मैंने कहा कि वही तुम्हारा चित्त करना चाहता है।
अभी ध्यान मुश्किल पड़ेगा।
पहले तो तुम्हारे सपनो को शुद्ध करना पड़ेगा।
जिस व्यक्ति को स्वयं को शुद्ध करना है,
वह अगर अपने सपनो को भी शुद्ध न कर पाये
तो स्वयं को शुद्ध न कर पायेगा।
सपने-जैसी साधारण चीज भी अशुद्ध हो,
तो उसकी सत्ता शान्त हो जाये, यह अभी बहुत मुश्किल है।
लेकिन आज से पहले सपने के जाँचने की कोई सुविधा न थी।

इस ध्यान-केन्द्र मे, सपनो के जाँचने की पूरी व्यवस्था करना चाहता हूँ।
अब तो इन्तजाम है।
जैसे आपका कार्डियोग्राफ लिया जाता है,

वैसे ही रात मे आपके सपने का ग्राफ बन जाता है
कि आपने कितनी देर सपने देखे, किस तरह के सपने देखे
[1]वायलेन्ट थे ? [2]नॉन-वायलेन्ट थे ? [3]सेक्सुअल थे ?
. नही थे सेक्सुअल ?— क्या था ?
सपने किस तरह के थे— इसकी काफी जानकारी ग्राफ दे देता है ।

यह जानकर आप हैरान होगे कि सपनो के सम्बन्ध मे जितनी जानकारी बढी है,
उतना ही यह प्रतीत हुआ है कि चित्त के भीतर वेव्ज है, तरगे है ।
जब सपना चलता है तो तरगे और तरह की होती हैं,
जब सपना बन्द होता है तो और तरह की होती है ।
और बड़े आश्चर्य की बात है कि गहरी नींद मे जो तरगो की स्थिति होती है,
वही स्थिति ध्यान मे भी तरगो की होती है ।
ध्यान मे जब कोई व्यक्ति होता है तो उसके मस्तिष्क की तरगें वैसी होती हैं,
जैसी तरगे गहरी निद्रा मे होती हैं।
और जब कोई व्यक्ति सपने मे होता है, तो तरगे वैसी ही होती है,
जैसे जब कोई व्यक्ति चिन्ता मे होता है ।
चिन्ता और सपना का जोड है, गहरी निद्रा और ध्यान का जोड है ।

यह सारी वैज्ञानिक व्यवस्था इस ध्यान-मन्दिर मे करने का ख्याल है ।
और प्रत्यक व्यक्ति को वैज्ञानिक रूप से सहायता पहुँचाई जा सके, यह दृष्टि है ।
और मेरे देखे, आज मनुष्य को ध्यान की जितनी जरूरत है,
उतनी किसी और चीज की जरूरत नही है,
क्योकि आज मनुष्य जितना अशान्त है, उतना अशान्त कभी भी नही था ।

ये थोडी-सी बाते मैंने कही ।
सोचना-विचारना ।
मान लेने की कोई जरूरत नही है ।
और यह ध्यान-मन्दिर विश्वास करनेवालो के लिए नही होगा,
प्रयोग करनेवालो के लिए होगा ।

---

१ हिंसक २ अहिंसक ३ कामुक

विश्वास करनेवाले वैसे भी अब कहीं नही हैं।
सिर्फ कहते हुए दिखाई पड़ते हैं लोग,
कहीं कोई विश्वास करनेवाला आदमी अब नहीं है,
हर आदमी के रथ पर शल्य बैठा हुआ है।
एक छोटी-सी कहानी और अपनी बात मैं पूरी कर दूँ।

कर्ण ने महाभारत के युद्ध मे जिस आदमी को सारथी चुना,
वही उसकी हार का कारण बना।
उसने जिस आदमी को सारथी चुना, उसका नाम था शल्य।
शल्य का अर्थ होता है, 'सन्देह— शका— सशय'।
और कर्ण का अर्थ आप जानते ही हैं, कर्ण का अर्थ होता है 'कान'।
सब शकाएँ कान से प्रवेश करती है।

शल्य को कर्ण ने सारथी चुन लिया और अर्जुन ने कृष्ण को सारथी चुना।
सारे युद्ध के लिए निर्णायक, डिसीसिव यही बात हो गयी।
क्योंकि वह शल्य जो था, उसका नाम ही शल्य इसलिए था
कि वह बडा शकालु आदमी था।
कर्ण बहुत शक्तिशाली आदमी था।

जो लोग जानते है, महाभारत जिनके सामने हुआ,
उन सबका ख्याल था कि कर्ण से अर्जुन जीत न सकेगा।
कर्ण महाशक्तिशाली था।
कर्ण के पीछे सूर्य की शक्ति थी, अर्जुन जीत न पायेगा।
लेकिन अन्तत युद्ध मे हुआ ऐसा कि अर्जुन जीता और कर्ण हारा।
और तब जो जानते हैं, वे कहते हैं
कि गलत सारथी को चुनने की वजह से कर्ण हारा,
क्योंकि वह जो शल्य था, वह पूरे वक्त कर्ण को कहता रहा
अरे, "तू क्या जीतेगा अर्जुन से!" वह पूरे वक्त उससे यही कहता रहा।
कर्ण अपना धनुष-बाण सोच रहा है और शल्य उसका सारथी कह रहा है
"क्यो मेहनत कर रहा है! तू क्या जीतेगा अर्जुन से!
तेरी जीत बहुत मुश्किल है।"

एक यह था सारथी, और एक कृष्ण था सारथी अर्जुन के पास कि अर्जुन छोड के गाडीव बैठ गया और कृष्ण ने पूरी गीता कही—कि वह आदमी लडे, क्योकि कृष्ण ने कहा कि जो होना हे वह पहले से निश्चित है, तुझे कुछ करना ही नही हे, तू सिर्फ निमित्त है।

यह जो शल्य मिल गया कर्ण को, यह जो शका मिल गयी उसके मन को, वह उसे डुबानेवाली हो गयी।

आज तो हर आदमी का सारथी शल्य है—
कोई पहचानता हो, न पहचानता हो,
सन्देह आज हर आदमी के साथ खडा हे।
इसलिए जो विश्वास सन्देह के अभाव मे प्रचारित किये गये थे,
वे अब काम के नही है।
अब तो पहले शल्य की हत्या करनी पडे,
तब कही व्यक्ति के भीतर की चेतना पर कोई परिणाम लाया जा सकता है।
और इस शल्य की हत्या बिना विज्ञान के नही हो सकती।

इसलिए मै इस ध्यान-केन्द्र मे आपके शल्य की हत्या विज्ञान के द्वारा करना चाहता हूँ, विश्वास के द्वारा अब नही होगा।
मेरे यह कहने से कि आप मान लें, आप मानेगे नही।
मानने का अब कोई उपाय नही रहा।
वह वक्त गया, वह समय बीत गया जब लोग मान लेते थे।
अब वह समय कभी भी नही लौट सकता।
वो मनुष्य-जाति का बचपन सदा के लिए खो गया, अब आदमी प्रौढ है।
और इस प्रौढ आदमी के पास जो सन्देह ह,
उस सन्देह को अगर हम वैज्ञानिक प्रयोग से नष्ट न कर सके,
तो मनुष्य की जिन्दगी मे हम कोई भी क्रान्ति लाने मे सफल नही हो सकते।

इसलिए इस ध्यान-मन्दिर को मै एक वैज्ञानिक मन्दिर कहता हूँ—
जहाँ हम ध्यान को, धर्म को वैज्ञानिक मार्ग से मनुष्य तक पहुँचाने का प्रयास कर सकते हैं।

प्रवचन–२

इधर मेरे मन मे यह निरन्तर चलता रहता है
कि देश के प्रमुख नगरो मे ध्यान-केन्द्र हो।
यहाँ हम इसकी चिन्ता नही कर रहे है कि क्या ठीक है,
यहाँ हम इसकी चिन्ता कर रहे है कि कुछ लोग क्लेरिटी[1] को उपलब्ध हो रहे है और उनका मन शान्त हो रहा है और वे चीजो को देखना शुरू कर रहे हैं कि चीजें कैसी हैं।
न उनका पक्षपात काम कर रहा है,
न उनके अपने कोई पूर्वाग्रह काम कर रहे हैं—
उनके पास सिर्फ ठीक-ठीक देखनेवाली दूरबीन है,
उससे वे देखना शुरू कर रहे हैं।

अगर मुल्क के सारे बडे नगरो मे हम छोटी-सी जमात भी,
चीजो को ठीक देखनेवाले लोगो को पैदा कर सकें,
तो इस सक्रमण-काल मे उसके बहुमूल्य उपयोग होगे।
और मैं मानता हूँ, शायद वह सर्वाधिक मूल्यवान् बात सिद्ध हो—
इसलिए कि ठीक शान्त-चित्त के लिए हम हवा, भूमि और व्यवस्था दे सकें।

इस व्यवस्था को देने मे बहुत-सी बाते होगी।
जैसा ध्यान-केन्द्र के लिए कहा, मेडिटेशन हॉल के लिए कहा
यह बहुत जरूरी है कि सारे बडे नगरो मे ऐसे भवन हो—
जो न हिन्दु के हो, न मुसलमान के, न ईसाई के—जो सभी मनुष्यो के लिए हो, और जो भी वहाँ शान्त होना चाहता है उसके लिए हो।
उन भवनो मे शान्ति के लिए सब तरह की व्यवस्था की जा सकती है।
छोटे बच्चो के लिए वहाँ अलग व्यवस्था की जा सकती है,
जो बच्चो को ध्यान मे ले जाने मे सहयोगी हो सके।
और भी हजार उपाय किये जा सकते हैं।

---

१ स्पष्टता

अभी पूना मे जिस घर मे मेहमान था,
वहाँ वे दो पेन्टिग काफी खर्च करके ले आये थे।
पेन्टिग अच्छी भी थी।
उन्होने मुझसे पूछा कि 'आप क्या कहते है ?'
मैंने कहा "मैं कुछ नही कहूँगा।
तुम इस पन्टिग के पास आधे घन्टे बैठकर आधे घन्टे देखते रहो
और तब तुम्हारा मन कैसा होता है, वह मुझे बता दो।'
आधा घन्टा तो बहुत दूर था, पाँच मिनट भी उस पेन्टिग को गौर से देखने
मे आपका सिर घूमने लगेगा— और ऐसा लगेगा कि आप पागलखाने मे है।
आज कोई पश्चिम की पेन्टिग उठाकर देखे,
तो उसे ऐसा लगेगा कि वह जरूर रुग्ण चित्त मे पैदा हुई है।

अगर पिकासो की एक पन्टिग पर थोडी देर कोई ध्यान करे
तो वह पागल हो सकता है, शान्त नही।
लेकिन अगर बुद्ध की मूर्ति पर कोई पाँच मिनट बैठकर ध्यान करे,
तो वह पागल भी हो तो शान्त होकर लौटेगा।
मैं चाहता हूँ कि एसे हाल होन चाहिए सारे मुल्क मे,
जिनमे दरवेश फकीरो के नृत्य हो।
नाच तो हम रहे है— और सारी दुनिया नाच रही है,
और दुनिया को नाचने से नही रोका जा सकता।
जो कौम नाचने से रुकेगी, उसको भारी नुकसान होने शुरू हो जाएंगे।
लेकिन नाच ऐसा हो सकता है कि नाचनेवाला नाचने मे शान्त हो,
और ऐसा भी हो सकता है कि नाचने मे अशान्त हो।
ऐसा नाच हो सकता है जो कामुकता से भर दे,
और ऐसा नाच हो सकता है जो कामुकता के बाहर कर दे।
देखनेवाला भी देखते-देखते कामुक हो सकता है।
यानी नाच आपके भीतर कुछ करेगा।
जो भी आप देख रहे है, वह आपके भीतर कुछ करेगा।
दरवेश फकीरो के नृत्य है, अगर उनको कोई आधा घन्टे तक देखता रहे,
तो पायेगा कि सारे मन की चिन्ता विलीन हो गयी है,

क्योंकि वह जो गति है, वह इतने वैज्ञानिक हिसाब से निर्मित की गयी है, मानो आपके मन में थपकी देती हो— शान्त करती हो।

मेडिटेशन शब्द बहुत अर्थ रखता है।
वहाँ हम इस तरह के चित्रो की व्यवस्था करें—
जिन्हे देखकर मन शान्त हो, स्वस्थ हो,
इस तरह के नृत्यो की व्यवस्था करें—
जिन्हे देखकर मन शान्त होता हो, स्वस्थ होता हो।
उस तरह के गीत की, सगीत की व्यवस्था करे,
उस तरह का शिक्षक वहाँ पैदा हो,
उस तरह का बच्चा भी वहाँ हो, दंगा भी वहाँ हो,
पति भी हो, पत्नी भी हो,
जीवन के सारे पहलुओ को हम बदलना शुरू करे।

पुरानी दुनिया ने भी बहुत-से ध्यान-भवन पैदा किये,
लेकिन वे सब पलायनवादी थे।
अगर कोई आदमी मन्दिर मे जाता हो,
तो वह जिन्दगी से भागना शुरू हो जायेगा।
मै ऐसे मन्दिर चाहता हूँ, जो जिन्दगी मे और गहराई मे ले जाते हो—
जिन्दगी से भागते न हो।
ऐसा केन्द्र जहाँ जीवन की सब दिशाओ को छूने के लिए—
और सब दिशाओ मे काम करने के लिए— और मनुष्य को सब तरफ शान्ति मे डुबकी लगाने के लिए हम कोई व्यवस्था दे सके।
वह व्यवस्था दी जा सकती है, उसमे कोई बहुत कठिनाई नही है।
जिस तरकीब से हमने आदमी को अशान्त किया है, वह भी व्यवस्था है।

तो ध्यान-केन्द्र चाहिए।
पैसे की बात मै नही जानता।
इतना मैं जानता हूँ कि इस तरह की व्यवस्था अगर जुटा पाते हैं आप, तो आप इस मुल्क की आनेवाली समस्त पीढ़ियो के लिए कुछ काम कर सकेंगे, अपने लिए भी।

कुछ मूल्यवान् चीजे है जिनका स्थायी परिणाम देश की चेतना पर हो
सकता है।
जैसे धर्म के नाम पर हमारे पास जो साहित्य है, बिलकुल कचरा है।
उस साहित्य की वजह से, जिसमे थोडी भी बुद्धि है,
वह धार्मिक नही हो पायेगा।
उस साहित्य को पढने के लिए बुद्धिहीनता बहुत अनिवार्य आवश्यकता है।
ऐसा साहित्य चाहिए जो मुल्क की प्रतिभा को छुए और स्पर्श करे,
मुल्क की प्रतिभा जिसमे पाये कि कुछ रस हो सकता है।
उस साहित्य के लिए भी ऐसे केन्द्र
प्रचार और विस्तार के आधार बन सकते है।

अब हमारे पास बहुत नये साधन हैं जो कभी भी न थे।
लेकिन उन साधनो का प्रयोग भी मनुष्य के मगल के लिए नही कर पा रहे हैं।
बुद्ध के पास कोई उपाय नही था सिवाय इसके कि वे पैदल घूमे चालीस साल।
इतनी बडी दुनिया थी, लेकिन चालीस साल पैदल बुद्ध घूमे,
तो भी बिहार के बाहर न जा सके, सिर्फ एक दफा बनारस तक गये।
बुद्ध के पास उपाय नही थे।
अगर मेरे-जैसे आदमी को भी बुद्ध-जैसे ही भटकना पडे,
तो ढाई हजार साल बेकार गये।
अब यह मामला है,
तो बुद्ध जितना काम कर सके उससे ज्यादा मैं भी नही कर सकूँगा।
लेकिन ढाई हजार साल मे जो सारी टेक्नोलॉजी विकसित हुई है,
उसका क्या मतलब है?

उसका मतलब है कि फिल्म ऐसी हो सकती है कि जिस गाँव मे मैं नही गया हूँ,
वहाँ भी मेरी बात पहुच जाये।
हम नृत्य की व्यवस्था न कर सके, जो हमने बम्बई मे की है,
तो फिल्म उस नृत्य को वहाँ पहुँचा देगी।
जरूरी नही है कि हम हर गाँव मे पेन्टिंग पहुचा सकें,
लेकिन बम्बई मे जो हमने पेन्टिंग लगाए हैं अपने ध्यान-कक्ष मे,

उनको पूरा मुल्क फिल्म के जरिये देख ले।
पूरा मुल्क ही नहीं, पूरी दुनिया भी सम्बन्धित हो जाये।
रेडियो का माध्यम है, टेलिविजन का माध्यम है।
अब हमारे पास ऐसे माध्यम है,
जिनका कि पुराना जगत् उपयोग ही नहीं कर सकता था।
उनके पास नहीं थे, हमारे पास हैं।
हम भी उपयोग कर रहे है, लेकिन मगल के लिए उपयोग नहीं हो रहा है,
अमगल के लिए उपयोग हो रहा है।

मुझे मिलते है लोग और कहते है, सिनेमा बन्द करो।
बन्द करने का सवाल नहीं है।
जो माध्यम जगत् मे आ गया है, वह बन्द नहीं होगा।
इसलिए सवाल बन्द करने का नहीं है,
सवाल उसके उपयोग का है कि उसका कैसे उपयोग हो।
सिनेमा-जैसी शक्तिशाली चीज का एकदम ही गलत उपयोग हो रहा है।
हमने कहावत सुनी है कि जब भी कोई आविष्कार होता है,
शैतान सबसे पहले उस पर कब्जा कर लेता है,
और जिनको हम अच्छे लोग कहते है, वे खडे देखते रहते हैं।
वे लोग चिल्ला रहे हैं कि बडा बुरा हुआ जा रहा है।
लेकिन तुमको कौन रोक रहा है कि तुम उस पर कब्जा मत करो।

लेकिन वे साधु-सम्मेलन करके तय करते रहेगे
कि रद्दी पोस्टर नहीं लगने चाहिए,
लेकिन अच्छा पोस्टर लगाने से तुमको कौन रोक रहा है ?
तुम इतना अच्छा पोस्टर क्यो नहीं लगा पा रहे हो
कि रद्दी पोस्टर अपने-आप उखड जाएँ और उसे कोई देखने न आये।
लेकिन उनकी फिक्र है कि रद्दी पोस्टर नहीं होने चाहिए।
वे चिल्लाएँगे कि रद्दी फिल्म नहीं होनी चाहिए,
लेकिन तुम्हे अच्छी फिल्म बनाने से कौन रोक रहा है ?
लेकिन वह तुम्हारी कल्पना मे नहीं आ रहा है।

हम सोच ही नही सकते कि बुद्ध-जैसा आदमी अगर फिल्म मे खडा
किया जा सके तो उसके क्या परिणाम होगे ।
अगर बुद्ध बोल सकते है, चल सकते है—
तो बुद्ध का बोलना, चलना हम फिल्म के द्वारा क्यो नही देख सकते ?
सारा मुल्क देख सकता है ।
लेकिन बुरा आदमी सबसे पहले कब्जा कर लेता है और अच्छा आदमी सिर्फ
चिल्लाता रहता है ।
अच्छा आदमी सदा से नपुंसक है ।
वह करता कभी कुछ नही है, बस इतना ही कहता है कि बुरा हो रहा है ।
मेरी समझ मे अच्छे आदमी को वीर्यशाली बनाने की जरूरत है ।
बुराई से जो लड़ाई है, वह बातचीत से नही हो सकती ।
जिन-जिन माध्यमो का बुरा उपयोग हो रहा है,
उन-उन माध्यमो का भला उपयोग करना चाहिए ।

अभी मै हैरान हूँ अब मै जाऊँगा, एक-एक गाँव घूमूँगा,
एक-एक गाँव मे अगर मैं जाऊँ और दस हजार लोग भी मुझे सुनें,
तो यह समुद्र मे रग घोलने-जैसा है ।
मै जिन्दगीभर मेहनत भी करूँ,
तो इस मुल्क के पचास करोड लोगो के आमने-सामने नही हो सकता हूँ ।
अब कोई वजह नही है कि आमने-सामने क्यो न हो सकूँ ?
नवीनतम टेक्नोलॉजी का, साइन्स का धर्म कैसे उपयोग करे,
इस सम्बन्ध मे न केवल चिन्तन, बल्कि व्यवस्था जुटाने की बात है ।
तो पन्द्रह लाख तो बहुत छोटी बात है, उसे शुरू मानकर चलना चाहिए,
किन्तु अगर इसका उपयोग हो सके, तो बडा क्रान्तिकारी काम हो सकता है ।

बच्चे फिल्म देख रहे है, उनको आप मना कर रहे है ।
मैं नही मानता कि उनको मना करने की जरूरत है ।
उनको जरूर फिल्म दिखानी चाहिए ।
कोई कारण नही कि ऐसी फिल्म बच्चे क्यो नही देखें,

जो उनकी जिन्दगी मे रोशनी बनकर आये।
आ सकती है।
ऐसा गीत क्यो न गाएँ, जरूर वे गा सकते हैं।
मैं मानता हूँ कि बच्चो को नर्तक होना ही चाहिए,
क्योकि जो बच्चा नाच नही सकता, वह बूढा हो गया।
मगर हम चिल्लाएँगे कि यह नाच ठीक नही है।
लेकिन ठीक नाच कहाँ है?
या तो नाच है ही नही, या गलत नाच है।
उन दोनो मे तो गलत नाच ही चुना जायेगा।
ठीक नाच कहाँ है?
वह ठीक नाच सामने ले आइये, गलत नाच अपने-आप विदा होने लगेगा।

मेरा मानना है कि भलाई अभी तक आकर्षक नही हो पायी,
अभी भी बुराई आकर्षक है।
यह आश्चर्य की बात है कि बुराई इतनी आकर्षक है और भलाई मे कोई आकर्षण नही है।
आदमी जब मरने लगता है, तब वह मन्दिर की तरफ जाता है,
अन्यथा वह नही जाता है।
हाँ, एक फिल्म टाकीज 'मराठा मन्दिर' है, वहाँ जाना हो तो बात अलग है।
जब वह थकने लगता है और हारने लगता है,
तब कही धर्म उसको आकर्षक मालूम पडता है।
यानी अब तक सारा धर्म मरे हुए आदमी को आकर्षित करता है,
जिन्दा आदमी को नही आकर्षित करता है।
तो मै ऐसे केन्द्र बनाना चाहता हूँ जहाँ से हम जीवन की सब दिशाओ को स्पर्श करने लगे तो हम दस-पन्द्रह वर्षों मे एक नये समाज के जन्म के लिए कुछ नये आधार रख सकते हैं।
इधर दस वर्षों से मैं निरन्तर बोल रहा हूँ,
सब तरह के लोग मेरी नजर मे हैं,
कौन क्या-क्या कर सकते हैं, वह सब मेरे ध्यान मे है।

मैं एक जगल मे ठहरा हुआ था।
एक मूर्तिकार जो कभी बहुत प्रसिद्ध था,
लेकिन दुनिया से परेशान होकर जाकर जगल मे रहने लगा है।
वह इस समय दुनिया मे दस-पाँच अच्छे मूर्तिकारो मे है।
लेकिन उसके पास मूर्ति बनाने के लिए पैसे नही है,
उसके पास सीमेन्ट नहीं है, कक्रीट नही है जिससे वह मूर्ति बना सके।
उसने मुझसे कहा,
'मै जिस तालाब के पास हूँ, उसके चारो तरफ ऐसी मूर्तियाँ बना देना
चाहता हूँ,'
और उसने अपने सारे नक्शे मुझे बताये।
वह इतना अद्भुत है! लेकिन उसके पास पैसे नही है।
मैने उससे कहा, जब मैं कोई केन्द्र खडा करूँ,
तुम आ जाओ और उसके चारो तरफ ऐसी मूर्तियाँ फैला दो।
उसने कहा कि सारी जिन्दगी वहाँ लगा दूँगा,
क्योंकि मुझे और कोई काम नही है।
मुझे रोटी मिल जाये, उसके बाद मुझसे कोई काम ले सारी जिन्दगी।

मूर्तिकार है, सगीतज्ञ है, लेकिन वही सगीत बाजार मे बिकेगा जो रद्दी होगा,
क्योंकि रद्दी आदमी ही सिर्फ खरीदनेवाला है।
धीरे-धीरे वह सगीतज्ञ रद्दी सगीत बेचने लगेगा,
क्योंकि बाजार मे मूल्य उसका है।
हमारे पास एक ऐसी व्यवस्था चाहिए, मुल्क के प्रत्येक बडे नगर मे,
जहाँ हम श्रेष्ठतम को पनपने के लिए, खिलने के लिए मौका दे सकें;
चाहे जितनी छोटी मात्रा मे हम श्रेष्ठ को जन्म दे सके।

ध्यान बहुत-सी चीजो का इकट्ठा जोड है।
ध्यान कोई एक चीज नही है कि एक आदमी चौबीस घन्टे कुछ भी रहे और
बस एक दफा ध्यान मे चला जाये।
मेरी समझ है कि अगर किसी आदमी को ध्यान मे जाना है,
तो उसके घर की दीवालो मे रग की बदलाहट होनी चाहिए।

क्योकि दीवालों का रग ऐसा हो सकता है, जो कभी ध्यान मे जाने ही न दे।
अगर आपने लाल, काले और पीले रग से दीवालें पोत डालीं,
तो उनके भीतर आप पाँच मिनट बैठकर आँख बन्द करेंगे और बेचैन हो जाएँगे।
इसलिए कैसे कपडे पहनेंगे, यह भी अर्थपूर्ण है,
क्योकि हम जीते बहुत शरीर के तल पर हैं।
आत्मा-वगैरह की तो बात होती है, जीते शरीर के तल पर हैं।

ये जो केन्द्र होगे, ये जीवन की सब दिशाओ मे खोज करें, अन्वेषण करें—
कपडे कैसे हो, दीवाल के रग कैसे हो, मकान कैसा हो,
मकान के पास दरख्त कैसा हो?
सारी चीजो के सम्बन्ध मे स्पर्श करने की जरूरत है।
और जब इन सब प स्पर्श हो, तो मैं जानता हूँ
कि ध्यान इतनी सरल चीज है, जितनी और कोई सरल चीज नही है।
शायद उसे अलग से करने की जरूरत न रह जाये।

अगर भोजन कैसा हो, कपडे कैसे हो, मकान कैसा हो, बगीचा कैसा हो,
उठते लोग कैसे हो, बैठते लोग कैसे हो, बात कैसे करते हो—
अगर इन सारी बातो के सम्बन्ध मे एक बात स्मरण रख ली जाये
कि कौन-सी बात शान्ति की तरफ ले जानेवाली है, तो जरूरी नही
कि उस आदमी को और अलग से ध्यान करने जाना पडे।
यह सब ही उसके भीतर ध्यान का सूत्र बन जायेगा।
अभी तो मैं जिनके ध्यान की बात कर रहा हूँ, वे बिलकुल ही गलत लोग हैं;
क्योकि वे जिस दुनिया के हैं उनसे इसका कोई सम्बन्ध नही है।
लेकिन उनको सुझाव देने का भी सवाल है, वह भी तो नही है उनके पास।
वह कर भी क्या सकते हैं।

एक पूरा दर्शन तो है मेरे दिमाग में,
जिनको भी ठीक लगता हो, वे थोडी ताकत लगाएँ तो पूरा हो जाये।
मुझे कोई परेशानी नहीं होगी।
जितना मैं कर सकता हूँ, मैं करता चला जाता हूँ, उसमें कोई अन्तर नही है।
अब मेरे ख्याल से कुछ लोग हैं, जिनको मैं कही बिठा सकता हूँ,

जो बडे काम के हो सकते हैं ।
लेकिन मैं कही बैठ नही सकता ।
मेरा कही बैठना तो महँगी बात है ।
मैं चलता रहूँगा ।
पर कुछ लोगो को कही बिठाया जा सकता है जो कि बडे काम के सिद्ध हो जाएँ ।
पर उनके बिठाने के लिए भी कोई उपाय और व्यवस्था चाहिए ।
वह आपको सोचना चाहिए और एक बम्बई से शुरूआत करें ।
बम्बई मे एक मॉडल की तरह खड़ा कर लें,
फिर हम देश के और नगरो मे उसकी चिन्ता लें ।

जो भी महत्त्वपूर्ण है वह बहुत धीरे-धीरे प्रभावी होता है, वक्त लेता है ।
मौसमी फूल हम बोते है तो वह महीनेभर बाद फूल भी देने लगते हैं
और दो महीने बाद समाप्त हो जाते हैं ।
यह प्रक्रिया इतनी आसान नही है कि आज हो जायेगी ।
इसलिए मुझे लगता है कि अक्सर इसीलिए काम नही हो पाता,
क्योंकि हमारी आकाँक्षाएँ बहुत मौसमी होती हैं ।
हम चाहते है कि अभी हो जाये ।
वह अभी नही हो पाती है,
तो फिर हम थककर लौट जाते हैं कि अभी नही हो सकती ।

यह तो लम्बी यात्रा है और ऐसी यात्रा है जिसका अन्त कहीं भी नही होता है ।
हम उसे सिर्फ धक्का दे जाते हैं और समाप्त हो जाते है ।
फिर कोई और धक्का दे जाता है और समाप्त हो जाता है ।
यात्रा चलती रहती है, यात्रा अनन्त है ।
पर एक ही ध्यान अगर आदमी को ज़िन्दगी मे रह जाये कि उसने मनुष्य के आनन्द की तरफ, मनुष्य के मगल की तरफ कुछ भी धक्का दे दिया था,
तो भी मैं मानता हूँ कि वह आदमी बहुत शान्त अनुभव करेगा ।
लेकिन अगर हमने यह नही किया, तो ध्यान रहे ।
यह नही हो सकता कि आप खाली रह जाएँ—

धक्के तो आप दे ही रहे हैं,
तब आप अशान्ति की तरफ देंगे, अमंगल की तरफ देंगे।
आप जी रहे हैं, तो आपके धक्के तो जीवन को लगेंगे ही।
अब सवाल इतना ही है कि धक्के किस तरफ ले जाते हैं—
शुभ की तरफ? . आनन्द की तरफ?

इससे बड़ी कृतार्थता नहीं हो सकती कि एक आदमी अपने जीवन मे सबके मंगल के लिए कुछ कर पाये।
बुद्ध अपने भिक्षुओं को कहते थे कि जब तुम ध्यान भी करो
तो कभी ऐसा मत सोचना कि ध्यान से जो शान्ति मिलेगी वह मुझे मिल जाये,
नहीं तो तुम कभी भी शान्त न हो सकोगे।
क्योंकि 'मुझे' का भाव भी अशान्ति है।

बुद्ध कहते कि जब तुम्हे ध्यान से शान्ति मिलती हो,
तो तुम यह भी प्रार्थना करना कि सबको बँट जाये।
यह मत सोच लेना कि मुझे मिल जाये,
क्योंकि मुझे मिलने का जो ख्याल है वह भी अशान्ति का बुनियादी आधार है।
वह बँट जाय, वह सबको मिल जाये
तो बुद्ध कहते है, ध्यान करते वक्त, बैठते वक्त कहना कि जो शान्ति आये,
वह सब मे बँट जाये, और वह सब तक दूर-दूर तक फैल जाये।
उसमें मेरे 'मैं' को रखना ही मत।
अगर ध्यान से उठना— और शान्ति अनुभव हो—
तो यही प्रार्थना करते उठना कि यह शान्ति सब तक फैल जाये।

और बड़े मजे की बात है, जो अपने तक रोकना चाहता है,
वह सब तक फैला नहीं पाता, अपने तक भी पहुँचा नहीं पाता।
और जो सब तक फैलाना चाहता है, वह सब तक फैला देता है—
और अचानक पाता है कि सब तक फैलाने मे उस तक तो शान्ति बहुत फैल ही गयी है।

परिशिष्ट-१ व २

परिशिष्ट-१

ध्यान व साधना-सम्बन्धी अन्य विपुल सामग्री

परिशिष्ट-२

रजनीश ध्यान योग

सक्रिय ध्यान

ध्यान की यह प्रक्रिया स्वयं मे सोयी हुई शक्ति को जगाने की प्रक्रिया है। उसे कुण्डलिनी कहे उसे प्राण या उसे और कोई नाम दे दें।

हम सबके भीतर बहुत कुछ सोया हुआ है। वह जाग न जाये तो हमारी अन्तर्यात्रा के लिए शक्ति नही उपलब्ध होती। जिस शक्ति से हम जीते है वह बहुत ऊपरी है। बहुत शक्ति है हमारे भीतर जो विश्राम कर रही है, जो सो रही है, जिसे हमने छोड रखा है, जिसे छूएँगे भी नही, वह हमारे साथ रहेगी और हम मर जाएँगे। जैसे किसी आदमी के पास तिजोरी हो और वह अपने खीसे मे दस रुपये रखे हो और उन्ही को अपनी सम्पत्ति समझकर अपनी जिन्दगी गँवा दे। भूखा रहे, प्यासा रहे, भीख मांगे, और तिजोरी का उसे पता ही न हो जो कि उसकी है।

लेकिन, ऐसे नासमझ आदमी बहुत मुश्किल से खोजने पर मिलेगे, जिनके पास तिजोरी हो और जिनको पता न हो— लेकिन, जहाँ तक जिन्दगी का सम्बन्ध है, ऐसे नासमझ आदमी ही मिलेगे, खोजने से वह आदमी मुश्किल से मिलेगा जिसने अपनी जिन्दगी की पूरी सम्पत्ति का उपयोग किया हो।

तो ध्यान की प्रक्रिया का पहला चरण है— हमारे भीतर की पूरी शक्ति को जगाने का। इस शक्ति को जगाने के लिए कोई चोट, कोई हेमरिंग की जरूरत है। हम स्वाँस का उपयोग करेगे, दस मिनट के पहले चरण मे हम जोर से स्वाँस लेंगे। हम हथौडी की तरह उसका उपयोग करेगे, स्वाँस की चोट करेगे। उस चोट के द्वारा भीतर सोयी हुई शक्ति को जगाना शुरू करेगे।

आपको शायद पता न हो जब भी आपको शक्ति की जरूरत पडती है— आपको होश हो या न हो— उसे स्वाँस की चोट से जगाया जा सकता है। आपने कभी ख्याल न किया होगा कि यदि बडा पत्थर उठाना हो तो अचानक आप गहरी स्वाँस भीतर लेगे, फिर पत्थर को उठाएँगे। कभी आपने सोचा न होगा कि गहरी स्वाँस लेकर भीतर रोक लेने से पत्थर उठाने का क्या सम्बन्ध ? गहरी स्वाँस के बिना उस पत्थर को न उठा सकेंगे। जिन

लोगो ने पिरामिड के पत्थर चढाये उनके सम्बन्ध मे आज वैज्ञानिक बहुत परेशान है कि उस वक्त क्रेन नही थी, इतने बडे पत्थर पिरामिड पर चढाये कैसे गये ! तो उनको चमत्कार मालूम पडता है। इतने बडे-बडे पत्थर, इनको सौ-सौ आदमी मिलकर भी नही चढा सकते थे, चढाये कैसे गये ? उन्हे पता नहीं कि इजिप्त मे जिन लोगो ने पिरामिड्स बनाये, उन्हे एक साइन्स का पता था, जिसे वे धीरे-धीरे भूल गये। वह थी स्वाँस की चोट से भीतर सोयी हुई शक्ति को उठा लेने का रहस्य।

आपने राममूर्ति का नाम सुना होगा। वह अपनी छाती पर हाथी को खडा कर सकता था— अपनी छाती पर से कार या ट्रक को निकल जाने देता था, या खुद चलती हुई कार को पीछे से पकड ले तो चक्के घूम सकते थे, लेकिन कार आगे नहीं बढ सकती थी। राज छोटा-सा था। वह राज यह था कि स्वाँस की चोट से और स्वाँस को भीतर रोक लेने से भीतर की पूरी शक्ति को पुकारने की तरकीब का पता उसे था।

हमारे भीतर जो भी शक्ति सोयी पडी है, उसे चोट करके जगाना है। दस मिनिट का जो पहला चरण ध्यान मे हम करेंगे, उसमे इतने जोर से स्वाँस लेनी है कि भीतर कोई गुंजाइश भी न रह जाये कि हम इससे ज्यादा ले सके। स्वाँस पर हम पूरी ताकत लगा दे। जब आप स्वाँस पर पूरी ताकत लगायेंगे तो शरीर हिलने लगेगा, झूलने लगेगा। तो उसे झूलने देना। स्वाँस की चोट मारनी शुरू करना। जितने जोर से चोट पडेगी, उतने ही जोर से शरीर डोलेगा। शरीर डोलेगा उतनी ही आसानी होगी चोट मारने मे। सख्त होकर खडे नहीं हो जाना है। चोट मारनी है और शरीर को डोलने देना है। उस चोट के साथ— शरीर के साथ डोलने लगना है।

दस मिनिट मे, पूरे फेफडे मे जितनी भी वायु है, उसे रूपान्तरित कर लेना, उस सबको बदल देना। हमारे फेफडे मे कोई छह हजार छिद्र हैं, इसमे मुश्किल से एक या दो हजार मे हमारी स्वाँस पहुचती है, बाकी चार हजार सदा ही बन्द पडे रहते है। उनमे कॉर्बन-डायआक्साइड इकट्ठी होती रहती है।

पूरे फेफडो के सारे-के-सारे छिद्रो मे आक्सीजन, प्राणवायु पहुँचा देनी है। जैसे ही प्राणवायु की मात्रा भीतर बढती है, वैसे ही शरीर की विद्युत जागती

शुरू हो जाती है। आप अनुभव करेंगे कि शरीर इलेक्ट्रिफाइड हो गया है। उसमे बिजली दौडने लगी, रोआँ-रोआँ काँपने लगेगा, शरीर नाचने की स्थिति मे आ जायेगा।

यह पहला चरण है।

पहले चरण के और भी अर्थ है, वे भी मैं आपको कह दूँ। अगर यह चरण पूरा नही किया गया तो दूसरे मे प्रवेश नही हो सकेगा। ऐसे ही जैसे पहली सीढी पर न चढा हो तो दूसरी सीढी पर न चढे। पहली सीढी पर पैर रखना जरूरी है, तभी दूसरी सीढी पर चढा जा सकता है।

दूसरी बात ध्यान रखना जरूरी है कि अगर यह चरण पूरा नही किया गया तो बहुत-से नुकसान हो जाने का डर है। परसो ही एक जापानी साधिका मेरे पास आई— वह यहाँ शिविर मे मौजूद है— उसने पूछा कि इन्डोनेशिया मे 'सुबुद' नाम का ध्यान-प्रयोग चलता है। उसमे ध्यान का पहला चरण नही है, उसमे दूसरा ही चरण है। तीसरा चरण जो है वह भी नही है। तो इस 'सुबुद' के सम्बन्ध मे मेरा क्या ख्याल है?

अगर पहला चरण न हो, जैसा 'सुबुद' नाम के ध्यान मे नही है, तो बडे खतरे हैं। पहले चरण मे आपके शरीर की पूरी विद्युत विकसित होकर आपके शरीर के चारो ओर वर्तुल बना लेती है। अगर यह वर्तुल न बने तो आपको ऐसी बीमारियाँ पकड सकती है जिनकी आपको कल्पना भी नही है। आप बीमारियो के लिए नॉन रेजिस्टेन्ट (अप्रतिरोध) की हालत मे हो जाते हैं।

इसलिए 'सुबुद' का प्रयोग करनेवाले बहुत-से लोग अजीब-अजीब बीमारियो से पीडित हो जाते है।

इसलिए पहला चरण पूरा होना बहुत जरूरी है, आपके चारो तरफ विद्युत का वर्तुल बनाना बहुत जरूरी है, अन्यथा ध्यान मे एक तरह की ओपनिंग, एक तरह का द्वार खुलता है, उसमे से कुछ भी प्रवेश हो सकता है। और न केवल बीमारी ही हो सकती है, बल्कि सुबुद के अनेक साधको को बडी-से-बडी जो कठिनाई हुई है, वह यह कि कुछ दुष्ट आत्माएँ उनमे प्रवेश कर सकती हैं। ध्यान की हालत मे आपके हृदय का द्वार खुला हो जाता है, उस वक्त कोई भी प्रवेश कर सकता है। हमारे चारो तरफ बहुत

तरह की आत्माएँ निरन्तर उपस्थित है। यहाँ आप ही उपस्थित नही है और भी कई उपस्थित है। इसलिए पहले चरण को हर हालत मे पूरा करना जरूरी है।

अगर पहला चरण पूरा हो तो आपका शरीर एक तरह का रेजिस्टेन्ट, एक तरह की प्रतिरोध की दीवाल खड़ी कर लेता है। उसमे से कोई भी हानिकारक चीज आपके भीतर प्रवेश नही पा सकती और आपके भीतर से कोई भी शक्ति बाहर नही जा सकती। वह दीवाल का काम करने लगती है। जैसे कि हम अपने घर के चारो तरफ एक बिजली का तार फैला दे और उसमे करेन्ट दौड़ रही हो, तो चोर भीतर नही घुस सकेगा, क्योकि तार छुएगा तो मुश्किल मे पड़ जायेगा।

ठीक, पहले चरण का यही महत्त्वपूर्ण काम है कि वह आपके चारो तरफ विद्युत का वर्तुल बना दे— न तो भीतर से कुछ बाहर जा सके, और न बाहर से भीतर कुछ आ सके।

तीसरी बात पहले चरण के सम्बन्ध मे यह समझ लेनी जरूरी है कि जब आपकी शक्ति भीतर चोट खाकर जगेगी तो आपको बहुत तरह के अनुभव शरीर मे होने शुरू हो जाएँगे। वह आपको मै कह दूँ ताकि आपको परेशानी न हो। क्योकि बीच मे पूछने का कोई उपाय नही। शरीर मे बहुत तरह के अनुभव हो सकते है। अलग-अलग तरह के लोगो को अलग-अलग तरह के अनुभव होगे। किसी को लगेगा 'शरीर बहुत बड़ा हो गया है' और घबराहट होगी। किसी को लगेगा 'शरीर पत्थर की तरह भारी हो गया है'। तो घबराहट होगी। किसी को लगेगा 'शरीर बहुत छोटा हो गया', तो आँख खोलकर देखने का मन होगा कि 'मामला क्या है? मै खो तो नही गया कही'? लेकिन, आँख खोलकर देखना नही है। आप अपनी जगह है, कही कुछ खो नही गया है।

ये सारी परिस्थितियाँ उस शरीर मे नयी शक्ति के जगने से होनी शुरू हो जाएँगी। 'किसी के शरीर मे साँप-बिच्छू रेंगते हुए मालूम पड़ने लगेंगे' 'किसी को चीटियाँ चढ़ती मालूम पड़ने लगेंगी', 'किसी के भीतर विद्युत की

धारा बहती मालूम पडने लगेगी। किसी को लगेगा कि 'कोई चीज झरने की तरह ऊपर से नीचे गिर रही है'; किसी को मालूम पडेगा कि 'कोई चीज नीचे से ऊपर को चढ रही है'।

इस तरह के बहुत-से अनुभव शरीर मे होने शुरू हो जाएँगे और इसके साथ ही शरीर कुछ हरकते, कुछ गतियाँ करना चाहेगा।

उनको रोकना नही है।

दस मिनिट मे शरीर पूरी तरह से चार्ज्ड हो जाता है, शक्ति से भर जाता है। तो दूसरे चरण मे शरीर को छोडे, वह जो करना चाहे उसे करने दें। दूसरे चरण मे शक्ति को खेलने का मौका दे। वह जो शक्ति जगी है, उसको कोआपरेट करना, सहयोग देना।

साधारणतया हम रोकते है। हमारी जिन्दगीभर की आदत है हर चीज को रोकने की। अगर हँसी भी आती है तो हम धीरे से हसते है, जोर से नही हँसते। रोना भी आता है तो सम्हाल लेते हैं, क्योंकि रोना शोभा नही देता। नाचने का तो कोई सवाल ही नही है, कूदने का कोई सवाल नही है, हाथ-पैर अव्यवस्था से हिलाने का कोई सवाल नही है। जिन्दगी मे हम सब रोके रखे हैं।

जब शक्ति आपके भीतर की जगेगी, तो आपके भीतर जो भी रुका है, वह सब प्रकट होना चाहेगा। इसको आप चाहे रोकना तो रोक सकते है, लेकिन रोकने से भयकर नुकसान होगा, क्योंकि जो शक्ति जग गयी है, अगर आपने उसको रोका तो वह आपके लिए शारीरिक रूप से नुकसानकारी सिद्ध होगी। उसका जिम्मा मुझ पर नही होगा। ध्यान का प्रयोग व्यर्थ तो चला ही जायगा, उससे नुकसान भी होने शुरू हो जाएँगे। शरीर मे ग्रन्थियाँ और गाँठे बन जाएँगी— उस शक्ति को, जो निकलना चाहेगी, आप रोक लेंगे तो।

जैसे ही पहले चरण के बाद शक्ति पैदा होगी, आपका शरीर जो भी करना चाहे उसे पूर्णता से सहयोग देना। कोई नाचने लगा, कोई चिल्लाने लगेगा, कोई रोने लगेगा, कोई हँसने लगेगा, कोई अस्तव्यस्त मुद्राएँ बनाने लगेगा, कोई आसन बनाने लगेगा। शरीर जो भी करना चाहे उसे बिलकुल

ऐसा छोड देना है जैसे हमे कोई प्रयोजन नही, सिर्फ साथ देना है। इतनी तीव्रता से साथ देना है कि अगर हाथ थोडा हिल रहा हो तो पूरा साथ देना कि वह पूरा हिल जाये। रोकने से नुकसान है, सहयोग देनें से अभूतपूर्व फायदे है।

अगर अपने पूरा सहयोग दे दिया तो आपके शरीर की न-मालूम कितनी बीमारियाँ जो आपके पीछे पडी हो, अचानक विलीन हो सकती है। आपके मन के न-मालूम कितने रोग जो चित्त को घेरे हो— क्रोध, काम, लोभ— अचानक आप पा सकते है कि मन हल्का हो गया, वे बह गये। दुःख, उदासी, पीडा, वैमनस्य, ईर्ष्या, वे सब गिर जाते है। अगर शरीर का पूरी तरह से आपने खेलने का मौका दिया तो आपका शरीर ही नही—आपके मन की भी कैथर्सिस हो जाती है, रेचन हो जाता हे।

दस मिनट का जो सबसे बडा उपयोग है, वह यही है कि शरीर का रेचन हो जायेगा। शरीर और मन का सब-कुछ जो रुग्ण हमने इकट्ठा किया हुआ है, वह गिर जायेगा। उसके बाद ही हम ध्यान मे प्रवेश कर सकते हैं। जैसे कोई पहाड पर चढ रहा हो तो सब बोझ नीचे छोड जाता है, बोझ साथ मे हो तो पहाड पर चढना असम्भव होता है। जैसे ऊँचाई बढती है, वैसे बोझ छोडना पडता है। ध्यान की बडी ऊँचाइयाँ हैं, गहराइयाँ है। उनमे जाने के लिए सब बोझ छोड जाना बहुत जरूरी है। इसलिए जो सकोच करेंगे उनका समय व्यर्थ होगा। जो शिष्टाचार का ध्यान रखेंगे उनका समय व्यर्थ होगा। और समय ही व्यर्थ नही होगा, बल्कि पहला चरण अगर पूरा कर लिया है— पॉजिटिव हार्म, उसे विधायक रूप से हानि पहुँचेगी।

सब अपने काम मे लगे होगे, किसी से किसी को प्रयोजन नही, कोई किसी को नही देखता होगा, किसी का देखने से मतलब नही। बहुत-से मित्रो को ऐसा अनुभव होगा कि जब बहुत तीव्रता से शरीर हल्का हो रहा होगा, तो थोडा-सा वस्त्र भी एकदम पहाड की तरह, पत्थर की तरह भारी हो जायेगा। महावीर पागल नही थे कि नग्न हुए। नग्न होने का कारण है। और सैकडो लोग उस ध्यान का प्रयोग कर नग्न हुए, उसका कारण है। ऐसा नही है कि वह नग्नता आपके लिए अनिवार्य बन जायेगी। एक दफे चित्त

हलका हो जाये तो आप वापिस लौट आएँगे इस दुनिया मे और सीधे और साफ हो सकेंगे।

यह जो रेचन है, यह सदा नही चलेगा। ज्यादा-से-ज्यादा तीन महीने चल सकता है, कम-से-कम तीन सप्ताह चल सकता है। अगर किसी ने बहुत तीव्रता की तो तीन दिन मे समाप्त हो जायेगा। जब गिर जाएँगी सारी बीमारियाँ तो आप एकदम हल्के और शान्त हो जाएँगे। फिर यह नही चलेगा। फिर आप करना भी चाहे तो नही कर सकेंगे।

दूसरे चरण पर ध्यान देना बहुत जरूरी है, क्योंकि वह सर्वाधिक महत्त्व-पूर्ण है। तीसरे मे प्रवेश के लिए वह लिंक, सेतु का काम करता है। और दूसरे मे ही सबसे ज्यादा बाधा पडती है। न तो आप खुलकर नाच पाते हैं, न चिल्ला पाते हैं, न रो पाते हैं, न डोल पाते है। उसमे बाधा पड जायेगी। मन में से न-जाने क्या निकलना शुरू होगा। जानवरो-जैसी आवाज निकलने लगेगी, आपको डर लगेगा कि मैं कैसे निकालूं? उसे निकलने देना। जो भी हो रहा है उसे स्वीकार करके उसका पूरा साथ दे देना। अगर आप पूरा साथ दे सके तो परिणाम सुनिश्चित हैं। अद्भुत परिणाम होंगे, जिनकी आप कल्पना भी नहीं कर सकेंगे।

दूसरा चरण पूरा हो तो ही हम तीसरे मे प्रवेश कर सकेंगे। तो दूसरे पर अटकना नही है। दूसरे पर अटकना पहले पर अटकने से भी ज्यादा हानिकर है, क्योंकि शरीर ने काम करना शुरू कर दिया तो आप न-मालूम किस तरह की नयी रुग्णताओ को, नयी मानसिक विक्षिप्तताओ को निमन्त्रण दे सके। हर चीज की हानि उतनी ही होनी है जितना लाभ होना है। उनकी मात्रा बराबर होती है। अगर आप लाभ लेते हैं तो पूरा ले अन्यथा हानि हाथ पड जायेगी। या फिर करे ही मत। जहाँ है, वही बेहतर है। करना है तो पूरा समझकर करें। और, पूरा प्रयोग करे ताकि किसी को हानि न हो जाये।

जब दूसरे चरण मे पूरी तरह शरीर की गतियाँ शुरू होंगी तो आपको शरीर अलग मालूम होने लगेगा। यह उस दूसरे चरण का कीमती अनुभव है। जब शरीर नाचेगा, चिल्लाएगा, जानवरो की आवाज करने लगेगा—कुछ भी बकने लगेगा, कुछ भी बोलने लगेगा—रोने लगेगा, हँसने लगेगा, तब

आपको पहली दफे पता चलेगा कि आप अलग खड़े देख रहे हैं कि यह शरीर क्या कर रहा है। यह आपकी भिन्नता का पहला अनुभव होगा कि मैं साक्षी की तरह देख रहा हूँ, यह हो रहा है।

सुना है हमने बहुत कि मैं अलग हूँ और यह शरीर अलग है। यह सुनी हुई बात है। यही दूसरे चरण का प्रतिफल है कि अनुभव हो जाये कि मैं अलग हूँ और शरीर अलग है। जैसे ही यह अनुभव होता है—तीसरे मे हम गति कर जाएँगे।

तीसरे चरण मे पूछना है अपने भीतर "मै कौन हूँ?" यह जोर से पूछना है। भीतर ही पूछना है, लेकिन इतने जोर से पूछना है कि पैर से लेकर सिर तक गूँजने लगे भीतर "मै कौन हूँ?" क्योंकि जब यह दिखाई पड़ता है कि शरीर मै नही हूँ, तब यह सवाल उठता है कि मै कौन हूँ? और इस मौके को छोड़ नही देना है। इसे तीव्रता से पूछना है। दस मिनट अपने भीतर यह तूफान उठा देना है कि मै कौन हूँ। दो 'मै कौन हूँ?' के बीच मे जगह न बचे। जब आप बहुत जोर से भीतर पूछेगे तो बहुत सम्भव है कि आपके मुँह से आवाज़ बाहर निकले। तो उसका भय नही लेना है। शुरू करना है भीतर, अगर बाहर भी निकलने लगे तो चिन्ता नही करे, निकल जाने दे।

तीसरे चरण मे भी शरीर डोलेगा, नाचता रहेगा, उसकी चिन्ता नही करना। लेकिन डोलने देना, नाचने देना। तीसरे चरण मे, "मै कौन हूँ" इतनी तीव्रता से पूछना है कि मन मे और ख्याल ही न रह जाये। अगर आपने पूरी ताकत तीसरे चरण मे लगा दी तो चौथा आपको सहज ही उपलब्ध होगा।

चौथे चरण मे आपको कुछ भी नही करना है। तीन चरण हमे करने हैं, चौथे मे केवल विश्राम है। चौथे मे कोई खड़ा है खड़ा रह जाएगा, कोई गिरा है गिरा रह जायेगा, कोई बैठा है बैठा रह जायेगा। जो जैसा है, वैसा रह जाएगा। चौथे चरण मे हम सिर्फ प्रतीक्षा करेगे। जो भी हो उसमे, उसकी हम प्रतीक्षा करेगे।

बहुत-कुछ हो सकता है, बहुत-कुछ होगा। कुछ अनुभवो की आपसे बात करूँ, ताकि आपको हो तो आपको परेशानी न हो जाये। किसी के भीतर एकदम 'बिजली के कौधने जैसा' प्रकाश हो जायेगा। किसी के भीतर हजारो सूरज जले हो, ऐसा प्रकाश हो जायेगा। किसी के भीतर, 'सुबह का जैसे प्रभात होता है', ऐसा प्रकाश हो जायेगा। सबके भीतर अलग-अलग होगा।

प्रकाश का अनुभव होगा अधिकतम लोगो को। कुछ थोडे-से लोगो को गहन अन्धकार का भी अनुभव होगा। कोई अनुभव अनिवार्य नही है। सबको भिन्न-भिन्न होगे, क्योकि सबके व्यक्तित्व भिन्न है। किसी को नीला रग दिखाई पडेगा, किसी को लाल रग दिखाई पडेगा। किसी को ध्वनियाँ सुनाई पडेगी। किसी को कोई स्वाद उतरने लगेगा। पाँचो इन्द्रियो के अनुभव मे से कोई भी अनुभव होना शुरू हो जायेगा। वैसा प्रकाश आपने बाहर कभी नही देखा होगा, जैसा भीतर दिखाई पडेगा। न वैसी ध्वनि बाहर सुनी होगी, जैसी भीतर सुनाई पडेगी। यह होगा, यह चौथे चरण मे होगा।

चौथे चरण के बाद पाँचवाँ चरण हम यहाँ नही उठाएँगे। आपको तीन चरण करने है, चौथा होने देना है, और पाँचवाँ फिर कभी पीछे आपको होगा। किसी को यहाँ भी हो सकता है, उसकी बात नही करनी है। पाँचवे मे सब समाप्त हो जायगा। न तो प्रकाश रह जायेगा, न अन्धकार रह जायेगा, न कोई ध्वनि रह जायेगी, न कोई रग रह जायेगा। पाँचो इन्द्रियो के सब अनुभव खो जाएँगे। पाँचवे चरण मे जो होगा, उसके लिए कहने का कोई भी शब्द नही है। वह जब आपको होगा तभी आप जान सकेगे। चौथे चरण तक हम प्रयोग करेगे और पाँचवाँ चरण आपको फलित होगा। किसी को यहाँ भी फलित हो जायेगा, किसी को घर जाकर होगा, किसी को कुछ वक्त लगेगा।

लेकिन, यदि आप जारी रखते है तो पाँचवाँ चरण भी आ जायेगा—जब सब खो जायेगा, चौथे के अनुभव भी खो जाएँगे।

इस पूरी प्रक्रिया मे सकल्प ही एकमात्र आधार है। इसलिए इस प्रक्रिया को करने के पहले हम परमात्मा को साक्षी रखकर सकल्प करेंगे तीन बार, और अन्त मे अपने सकल्प को पूरा करने का ख्याल रखेगे पूरे समय।

क्लायमेक्स पर करना है— प्रत्येक चरण को उसकी चोटी पर, आखिरी ऊँचाई पर करना है, उसमे कजूसी नही चलेगी। जैसे कि पानी भाप बनता है सौ डिग्री पर जाकर। निन्यानबे डिग्री पर भी रह जाता है तो पानी रह जाता है उबलता, पर भाप नही बनता। सौ डिग्री पर भाप बनता है। तो आपको अपनी सौ डिग्री ताकत लगा देनी है। तो ही दूसरे चरण मे प्रवेश करेगे। अगर आपने तीन चरणो मे सौ डिग्री ताकत लगा दी तो आप पाएँगे इवेपोरेशन हो गया, वाष्पीकरण हो गया। आप उड जाएँगे। आप नही बचेगे, कोई और आपके भीतर आ जाएगा। यही है जीवन का रहस्य।

उसे समाधि कहे, मुक्ति कहे, निर्वाण का अनुभव कहे—जो भी हम शब्द देना चाहे, दे सकते है।

यह प्रयोग खडे होकर करने का है और फासले पर खडे होना है ताकि कोई नीचे गिरे तो किसी को चोट न लग जाये, किसी को धक्का न लग जाये। और आपको धक्का लग भी जाये तो आपको फिक्र नही करनी है, आपको अपना काम जारी रखना है।

तो अब आप दूर-दूर फैल जाएँ, बातचीत बिलकुल न करें। सब शान्त हो जाएँ, आँख बन्द करें, सकल्प करें—"चालीस मिनट तक आँखें बन्द रहेगी।" सकल्प करें तीन बार प्रभु को साक्षी रखकर ...कि 'ध्यान मे मैं पूरी शक्ति लगाऊँगा'।

ध्यान रहे! इस प्रयोग के तीसरे चरण मे अब 'मैं कौन हूँ-मैं कौन हूँ' न पूछकर, लगातार दस मिनट तक जोर-जोर से महामन्त्र 'हू-हू-हू' की आवाज करते है और साथ ही दोनो हाथ ऊपर उठाकर एक ही जगह पर उछलते रहते है, जैसा कि "ध्यान-सोपान" मे आपने पढा है।

महामन्त्र 'हू' का प्रयोग बेजोड असरकारक है, इसलिए यह रूपान्तर किया गया है। साथ ही इस प्रयोग मे अब एक चरण बढा दिया है—पाँचवाँ चरण।

पाँचवें चरण मे आनन्द को अभिव्यक्त करते हैं— देखें : पृष्ठ ५२

महामन्त्र—'हू' के गुह्य रहस्य

(साधना शिविर, आनन्द-शिला, त्रिमूर्ति हिल्स, अम्बरनाथ, बम्बई मे
प्रात काल दिनांक १४ फरवरी, १९७३ को
भगवान्श्री द्वारा दिये गये प्रवचन का एक अश)

एक मित्र ने प्रश्न पूछा है कि सक्रिय-ध्यान के प्रयोग मे 'हू' महामन्त्र का उपयोग हम करते है, इस्लाम के अनुयायी मानते हैं कि इस मन्त्र का उपयोग करने से सब-कुछ फना (नष्ट) हो जाता है। अत वे लोग शहर मे 'हू' की ध्वनि करने के पक्ष मे नही है, इस सम्बन्ध मे कुछ कहे।

बात तो सच है। यह मत्र है तो फना होने के लिए, समाप्त हो जाने के लिए, मिट जाने के लिए। लेकिन, यह मिट जाना 'और बडे' हो जाने का उपाय है।

सूफियो ने इस मन्त्र का प्रयोग किया है। यह अल्लाह का आखिरी हिस्सा है। सूफी साधक अल्लाह से शुरू करता है—'अल्लाह, अल्लाह, अल्लाह' की गूँज उठाता है। जैसे-जैसे यह गूँज सघन होती जाती है, अल्लाह का रूप 'अल्लाहू, अल्लाहू' हो जाता है— अपने-आप हो जाता है। अगर आप जोर से, तेजी से शोर कर चिल्लाएँगे 'अल्लाह-अल्लाह, अल्लाह', तो धीरे-धीरे आप पाएँगे कि वह 'अल्लाहू, अल्लाहू' होता जा रहा है। यह सब अपने-आप हो जाता है, इसको करना नही पडता है। जब यह गूँज और तीव्र हो जाती है और जब दो 'अल्लाह' के बीच जगह नही छोडते, जरा भी जगह नही छोडते, इसमे एक 'अल्लाहू' पर दूसरा 'अल्लाहू' चढने लगता है। तब, 'अल्लाहू अल्लाहू' की जगह 'लाहू, लाहू, लाहू' रह जाता है। और तीव्रता जब लाते हैं और सघन करते है इसे, और कन्डेन्सस्ड करते हैं, तो 'ला' भी छूट जाता है और 'हू' रह जाता है। फिर अन्त मे 'हू' की जगह सिर्फ हुकार रह जाती है।

यह 'हू' मन्त्र निश्चित ही फना होने के लिए है। इस मन्त्र का साधक उपयोग करता है, अपने को मिटाने के लिए, अपने को समाप्त करने के लिए। यह अपने ही हाथ अपनी मौत को निमन्त्रण है—उस साधारण मौत को नहीं, जो इस शरीर की है—निमन्त्रण है उस महामृत्यु को, जो कि अहंकार को और मन की है, जो कि मुझे बिलकुल मिटा देगी।

यह जिसको हम मौत कहते है, यह हमारे अहंकार को, हमारे मन को बिलकुल नहीं मिटाती। सच तो यह है कि यह मिटाती ही नहीं, और यह भी सच है कि यह हमे मिटने से बचाती है। जब शरीर बिलकुल सड-गल जाता है, अगर हम उसमे ही रहे, तो मिट जाएँगे, तो यह मौत हमे नया शरीर दे देती है। जैसे कि कोई आपके पुराने मकान को गिरते देखकर कि इसमे आप मिट न जाओ, आपको निमन्त्रण दे और कहे कि आओ मेरे नये मकान मे बस जाओ। तो मौत मिटाती नही, सिर्फ आपके खडहर हो गये शरीर को हटाती है और नया, ज्यादा स्वस्थ, ज्यादा ताजा शरीर आपको दे देती है।

'फना' सूफियो का शब्द है, उसका मतलब है वास्तविक मौत—वास्तविक मौत, जो सच मे ही आपको मिटाती है। वह जो भीतर 'मै' का भाव है, उसे छिन्न-भिन्न कर देती है। इस 'हू' की ध्वनि मे वह राज छिपा है, जो आपके 'मै' के भाव को तोडता है।

बहुत लोगो को ऐसा लगता है कि 'मै' को एक ध्वनि कैसे तोडेगी! आपको पता नही कि 'मै' क्या है। 'मै' भी एक ध्वनि है। उसके विपरीत ध्वनियाँ भी है, जिनका उपयोग किया जाय, तो वह विसर्जित हो जायेगी, टूट जायेगी, नष्ट हो जायगी। हजारो साल की साधनाओ के बाद उन ध्वनियो को खोज लिया गया है, जो 'मै' के एन्टिडोट है। 'मै' एक स्वर है, 'हू' भी एक स्वर है, 'हू' का स्वर एन्टिडोट है, विपरीत-औषधि है। और इसलिए डर भी पैदा होता है कि मै मिट जाऊँगा, तो घबराहट भी पैदा होती है।

मगर मे 'हू' का प्रयोग करने से डरने की कोई जरूरत नही है। डर पैदा होता है लेकिन डरने की कोई जरूरत नही है, क्योकि मगर मे जो है, उन सभी को, बिना फना हुए, बिना मिटे, वास्तविक जीवन नही मिलेगा।

लेकिन घबराहट भी ठीक है, क्योंकि आदमी अपने को बचाना चाहता है, सोचता है, कहीं कोई मिटने का उपाय न हो जाये।

आपको ख्याल न होगा अगर एक आदमी को आप बीच मे बिठा लें और बारह आदमी चारो तरफ हाथ बाँधकर, गोल घेरे मे जोर से 'हू' का हुँकार करना शुरू करें, तो वह आदमी कपना शुरू हो जायेगा, और घबडाना शुरू हो जायगा, वह ना भी करे तो भी। 'हू' भीतर एक भय पैदा करता है।

एक बहुत मजेदार घटना 'हू' के प्रयोग के साथ घटी। भरोसे-योग्य नही थी, इसलिए अब तक मैने कही नही थी।

एक सन्यासी है स्वामी आनन्द विजय, जबलपुर मे। नगर के बाहर, एक एकान्त स्थल पर उन्होने अपने लिए रहने की जगह बना ली और वहाँ उन्होंने 'हू' के इस महामन्त्र का प्रगाढता से प्रयोग शुरू किया। कभी ज्यादा मित्र भी इकट्ठे होकर करते, अकेले तो वे करते ही, दो-चार सदस्य जो उनके परिवार मे थे, वे तो करते ही। फिर वे बडे जोर से बीमार पडे। बीमारी मे एक दिन उनकी हालत करीब-करीब सन्निपात-जैसी हो गयी। लेकिन जब 'इधर' सन्निपात होता है, तो कभी-कभी 'उधर' के द्वार खुल जाते है। कभी-कभी जब 'इधर' से आदमी मरने के करीब पहुँच जाता है, तो कुछ चीजें उसे दिखाई पडने लगती है, जो सामान्य आदमी को कभी नही दिखाई पडती हैं, क्योंकि वह मौत के करीब सरक जाता है, जिन्दगी से दूर हट जाता है।

कोई १०६ डिग्री उनको बुखार था और सन्निपात की हालत थी। तब उनको ऐसा लगा कि उनके कमरे म कई प्रेतात्माएँ खडी है और वे सब उनसे कह रही है कि नगर के बाहर यहाँ देवताल पर तुम जो 'हू' का उच्चार कर रहे हो, जब तक तुम उसे बन्द नही करोगे, तब तक तुम ठीक न हो सकोगे। हम सब मृत आत्माएँ हैं, जो यहाँ बहुत दिन से रह रही है और तुम्हारे 'हू' के उच्चार से हम बहुत भयभीत हो गये है।

होश मे आने पर उनको यह याद रहा और उन्होने मुझे पत्र लिखा और कहा कि मुझे भरोसा नही आता कि यह सच हो सकता है, यह मेरी कोई कल्पना ही हो सकती है, कोई ख्याल ही हो सकता है।

फिर दो बार यह घटना और घटी अब तो वे चेहरा भी पहचानने लगे। और वे सारी मृत-आत्माएँ कहती कि यहाँ से हट जाओ, हमारा आवास यहाँ बहुत दिनो से है। और अगर तुम यहाँ 'हू' करते ही रहे तो या तो हमको हटना पडेगा या तुम यहाँ से हट जाओ।

यह कल्पना हो सकती है, लेकिन एक और कारण मिला है, जिससे लगा कि वह कल्पना नही है। आनन्द विजय को भी चिन्ता थी कि यह कल्पना तो नही है, इसलिए उनकी निष्ठा भी साफ है। उनको भी भय और सकोच है कि किसी को कहूँ या न कहूँ। क्योकि यह बिल्कुल स्वप्न हो सकता है। और उनको भी भरोसा नही आता कि प्रेतात्माएँ इस 'हू' के हुँकार से घबडा सकती है। सिर्फ जाँच के लिए, उन्होने एक प्रयोग किया।

उसी समय, उसी के थोडे दिन पहले लामा करमापा ने मेरे सम्बन्ध मे कुछ कहा था, वह उन्होने पढा था। करमापा ने यह कहा था कि मेरा एक शरीर तिब्बत की गुफा मे सुरक्षित है, पुराने जन्म का। वहाँ निन्यानवे शरीर सुरक्षित है, तो उसमे एक शरीर मेरा है, ऐसा करमापा ने कहा था।

तिब्बत मे उन्होने कोशिश की है कि हजारो वर्षो मे जिन शरीरो मे कुछ विशेष घटनाएँ घटी है, उनको प्रयोग की तरह सुरक्षित रखा है, क्योकि वैसी घटनाएँ दोबारा नही घटती और आसानी से नही घटती। कभी-कभी लाखो साल बाद घटती है। जैसे किसी व्यक्ति का तीसरा-नेत्र खुल गया और तीसरे-नेत्र के खुलने के साथ ही उसकी हड्डी मे छेद हो गया—वहाँ जहाँ तीसरा-नेत्र है। ऐसी घटना कभी लाखो साल मे एक बार घटती है। तीसरी आँख तो कई आदमियो की खुल जाती है, लेकिन वह छेद सभी को नही होता। कभी वह छेद हो जाता है, जब तीसरी-आँख अपनी पूर्णता मे खुलती है, तब वह छेद होता है। तो फिर वैसी खोपडी को वे सुरक्षित रख लेते है या वैसे शरीर को वे सुरक्षित रख लेते है। जैसे किसी व्यक्ति की काम-ऊर्जा पूरी उठी और उसके मस्तिष्क को फाडकर ब्रह्मांड मे लीन हो गयी, तो वहाँ छेद हो जाता है। वह छेद कभी-कभी होता है। बहुत लोग विश्वात्मा मे लीन होते हैं, लेकिन ऊर्जा इतनी धीमी-धीमी और इतने लबे अन्तराल मे लीन होती है कि छेद नही होता। कभी-कभी अचानक इतनी त्वरा से यह घटना घटती है

कि पूरी ऊर्जा मस्तिष्क को फोडकर विश्वात्मा मे लीन हो जाती है, तो छेद हो जाता है। तो उस शरीर को वे सुरक्षित रखते हैं।

इस सम्बन्ध मे तिब्बती साधको ने अब तक मनुष्य-जाति के इतिहास मे सबसे बडा महाप्रयोग किया है। इस तरह के निन्यानबे शरीर उन्होने सुरक्षित रखे है। तो लामा करमापा ने कहा था कि एक मेरा शरीर भी उन निन्यानबे शरीरो मे सुरक्षित है। यह आनन्द विजय ने पढा था, तो उन्होने सोचा कि अगर यह सच है और अगर मैं सन्निपात-जैसी ध्यानावस्था मे इतने करीब पहुँच जाता हूँ प्रेतात्माओ के, तो मै जानना चाहूँगा कि वह कौन-सा शरीर है, निन्यानबे मे कौन-सा शरीर भगवान्श्री का है, तो मैं गिनती करूँगा और अगर मुझे दिखाई पड जाये और वही निकले तो मैं समझूँगा कि जो कुछ हो रहा है, वह सच है। उन्होने मुझे इसकी खबर की। मैंने कहा, प्रयोग करो।

प्रयोग करके उन्होने मुझे खबर की कि वह तीसरा शरीर है। इसमे तो भूल है, लेकिन फिर भी यह ठीक है। उन्होने दूसरे छोर से गिनती की। वह तीसरा शरीर नही है, वह सतानबेवाँ (९७ वाँ) शरीर है, पर फिर भी सच है। निन्यानबे शरीर रखे हैं, उन्होने गिनती की—जहाँ से उन्होने समझा कि प्रारम्भ है। वह प्रारम्भ नही है, अन्त है। लेकिन तीसरा वे गिन पाये, यह बडी गहरी बात है। शरीर सतानबेवाँ है, लेकिन अगर उलटा गिना जाये, तो तीसरा हो सकता है।

तो, मैने उनको कहा कि तुम घबडाओ मत। 'हू' के प्रयोग से जो हो रहा है, वह तो ठीक हो रहा है। तुम जारी रखो। और एक घटना और घटेगी, उसकी प्रतीक्षा करना। वह घटना भी घट गयी।

वे बीमार पडते चले गये और वे आत्माएँ उनको बार-बार कहती चली गयी। परन्तु मैंने उनसे कह रखा था कि तुम स्पष्ट कह देना कि यहाँ से मैं हटनेवाला नही हूँ, यह 'हू' का प्रयोग यहाँ जारी रहेगा, तुम्हे रुकना हो तो रुको, तुम्हे भी सम्मिलित होना हो तो सम्मिलित हो जाओ, भागना हो तो भाग जाओ। मैं यहाँ से हटनेवाला नही हूँ। जिस दिन उन्होने यह सकल्प पूरा कर लिया, उस दिन दूसरी आत्माएँ उन्हे दिखाई पडी और उन्होने

कहा कि तुम 'हू' का प्रयोग जारी रखो, हम भी इसी स्थान पर रहनेवाली आत्माएँ हैं, लेकिन हम भली आत्माएँ हैं और ये जो उपद्रवी आत्माएँ है, जो तुम्हारे 'हू' से परेशान है, ये हट ही जाएँ, तो हम पर भी बडी कृपा हो।

ये सब, भरोसा न आवे, उस जगत् की बातें है।

'हू' से तकलीफ हो सकती है। लेकिन जिन मित्रो को ऐसी तकलीफ होती हो, उनको स्मरण रखना है कि परमात्मा के रास्ते पर फना होने के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नही है। अपने को मिटाना ही होगा, अगर चाहते हो उसे पा लेना, जो फिर मिटता नही है।

मृत्यु ही अमृत का द्वार है। महज स्वीकार से जो मृत्यु का साक्षात्कार कर लेता है, मृत्यु उसके लिए समाप्त हो जाती है। जो अपने को बचाता है, वह खोता है और जो खोता है, वह सदा के लिए बचा रहता है।

आत्म-साधना में शरीर-शुद्धि के सूक्ष्म रहस्य

(साधना-शिविर, महाबलेश्वर, महाराष्ट्र मे
प्रात , दिनाँक १३ फरवरी, १९६५ को दिये गये प्रवचन का मुख्य हिस्सा)

भगवान्श्री रजनीश ने "सक्रिय-ध्यान" का प्रथम सार्वजनिक अभ्यास १३ अप्रैल, १९७० को पाम बीच हाई स्कूल, बम्बई मे करवाया था, जिसमे उन्होने शान्त, निष्क्रिय ध्यान मे प्रवेश के पहले साधको के शरीर व मन को ग्रन्थियो, तनावो एव अशुद्धियो के रेचन (कैथार्सिस) को अत्यन्त जरूरी बताया था।

उसके पहले बारह-पन्द्रह वर्षो से भगवान्श्री देश के कोने-कोने मे घूमकर अथवा साधना शिविरो म ध्यान के जो विभिन्न प्रयोग करवाते थे, उनमे प्राय सभी प्रयोग सीधे निष्क्रिय-ध्यान मे प्रवेश करानेवाले थे।

लेकिन 'सक्रिय ध्यान' के प्रथम प्रयोग के पाँच वर्ष पहले ही साधना-शिविर, महाबलेश्वर मे दिनाँक १३ फरवरी, १९६५ को दिये गये प्रस्तुत प्रवचन मे भगवान्श्री ने ध्यान मे प्रवेश के पहले शरीर और मन की निर्जरा अर्थात् रेचन की महत्ता पर सूक्ष्मता से प्रकाश डाला था। इससे पता चलता है कि आन्तरिक रेचन अर्थात् कैथार्सिस पर उनका यौगिक अनुसन्धान वर्षो पहले हो गहरा चुका था।

अब तो पिछले चार वर्षो से भगवान्श्री की नयी सक्रिय-ध्यान-प्रणाली—"रजनीश-ध्यान-योग" का हजारो साधक लगातार प्रयोग कर रहे है और उसके माध्यम से शरीर-शुद्धि, विचार-शुद्धि और भाव-शुद्धि की गहराइयो मे उतर रहे है।

इस सन्दर्भ मे पढिये— आज से बारह वर्ष पहले भगवान्श्री द्वारा उद्घाटित शरीर-शुद्धि के सूक्ष्म रहस्य।

साधना की जो दृष्टि मेरे मन मे है, वह किन्ही शास्त्रो पर, किन्ही ग्रन्थो पर, किसी विशेष सम्प्रदाय पर आधारित नही है। जैसा मैंने अपने भीतर चलकर जाना है, उन रास्तो की बातभर आपसे कर रहा हूँ। इसलिए मेरी बात कोई सैद्धान्तिक बात नही है। जब मैं आपसे कह रहा हूँ कि आप चलें और देखे, तो मुझे रत्तीभर भी ऐसा ख्याल नही है कि आप चलेगे, तो जो पाने की आपकी कल्पना है, उसे आप नही पा सकेंगे। इसलिए यह आश्वासन और विश्वास है कि जिन रास्तो पर मैंने प्रवेश करके देखा है, केवल उनकी ही आपसे बात कर रहा हूँ।

एक बहुत पीडा और सन्ताप के समय को मैने गुजारा। बहुत चेष्टा के, बहुत प्रयत्न के समय को मैने गुजारा। उस समय बहुत कोशिश, बहुत प्रयत्न करता था—अन्तम् प्रवेश की। बहुत रास्तो से, बहुत पद्धतियो से उस तरफ जाने की बडी सलग्न चेष्टा की। बहुत पीडा के दिन थे और बहुत दुख और परेशानी के दिन थे। लेकिन सतत प्रयास से— जैसे पर्वत से कोई झरना गिरता हो और गिरता ही चला जाये, तो नीचे की चट्टानें भी टूट जाती हैं— वैसे ही सतत प्रयास से, किसी क्षण मे कोई प्रवेश हुआ। उस प्रवेश को जिस रास्ते से मैने सम्भव पाया, सिर्फ उसी रास्ते की आपसे बात कर रहा हूँ। और इसलिए बहुत आश्वासन और विश्वास से आपको कह सकता हूँ कि यदि प्रयोग किया, तो परिणाम सुनिश्चित है।

जीवन के तथ्यो की पीडा को बहुत मैने अनुभव किया। वह पीडा गयी, और उसके जाने मे जिन सीढियो का दिखायी पडना मुझे शुरू हुआ, उन सीढियो मे पहली सीढी की आज मै चर्चा करूँगा।

ऐसा मुझे दिखायी पडता है कि परम जीवन या परमात्मा या आत्मा या सत्य को पाने के लिए दो बाते जरूरी है। एक बात तो जरूरी है— जो है साधना की परिधि, और दूसरी बात जरूरी है— जिसको हम कहेगे, साधना का केन्द्र। साधना की परिधि और साधना का केन्द्र, या साधना का शरीर और साधना की आत्मा।

ये तीन ही बातें है— साधना की परिधि, साधना का केन्द्र और साधना

का परिणाम। या यों कह सकते हैं कि साधना की भूमिका, साधना, और साधना की सिद्धि।

साधना की भूमिका या साधना की परिधि से आपके व्यक्तित्व की जो परिधि है, वही सम्बन्धित होती है। आपके व्यक्तित्व की परिधि आपका शरीर है। साधना की परिधि भी आपका शरीर है।

साधना का बिलकुल प्रारम्भिक चरण आपके शरीर पर रखना होता है। इसलिए एक बात स्मरण रखनी है कि अगर शरीर के सम्बन्ध मे कोई सुनी-सुनायी बुरी भावना मन मे हो, तो उसे फेंक दें। शरीर मात्र साधन है— संसार का भी और सत्य का भी। शरीर न शत्रु है, न मित्र है— शरीर मात्र साधन है। आप चाहे तो उससे पाप करें, आप चाहें तो पुण्य करे। चाहे तो संसार मे प्रविष्ट हो जाएँ और चाहे तो परमात्मा मे प्रवेश पा जाएँ।

शरीर मात्र साधन है, उसके सम्बन्ध में कोई दुर्भाव मन मे न रखे।

ऐसी बहुत-सी बातें प्रचलित हो गयी है कि शरीर दुश्मन है, शरीर पाप है और शरीर बुरा है, शत्रु है और इसका दमन करना है। वह, मै आपको कहूँ, गलत है। न शरीर शत्रु है, न शरीर मित्र है। आप उसका जैसा उपयोग करते हैं, वही वह साबित हो जाता है। और इसलिए शरीर बड़ा अद्भुत है।

शरीर बड़ा अद्भुत है। दुनिया मे जो भी बुरा है, वह भी शरीर से हुआ है और जो भी शुभ हुआ है, वह भी शरीर से हुआ है। शरीर केवल एक उपकरण है, एक यन्त्र है। साधना भी, जरूरी है कि शरीर से शुरू हो, क्योंकि बिना इस यन्त्र को व्यवस्थित किये आगे कोई भी नही बढ सकता। शरीर को बिना व्यवस्थित किये कोई आगे नही बढ सकता।

तो पहला चरण है—शरीर-शुद्धि। शरीर जितना शुद्ध होगा, उतना अन्तम् प्रवेश मे सहयोगी हो जाएगा। शरीर-शुद्धि के क्या अर्थ हैं? शरीर-शुद्धि का पहला तो अर्थ है— शरीर के भीतर, शरीर के संस्थान मे, शरीर के यन्त्र मे कोई भी रुकावट, कोई भी ग्रन्थि, कोई भी कॉम्प्लेक्स न हो। तब शरीर शुद्ध होता है। अगर शरीर बिलकुल निर्ग्रन्थ हो, उसमे

कोई ग्रन्थि न हो, उसमे कोई उलझन न हो, शरीर मे कही कोई अटकाव न हो, तो शरीर शुद्ध स्थिति मे होता है और अन्तस् प्रवेश मे सहयोगी हो जाता है।

समझे, शरीर मे कैसे कॉम्प्लेक्स, ग्रन्थियाँ पैदा हो जाती हैं? अगर आप बहुत क्रुद्ध होगे, क्रोध करेगे और क्रोध को प्रगट न कर पाएँगे, तो उस क्रोध की जो ऊष्मा और गर्मी पैदा होगी, वह शरीर के किसी अग मे ग्रन्थि पैदा कर देगी। आपने देखा होगा, क्रोध मे हिस्टीरिया आ सकती है। अभी जो सारे प्रयोग चलते है, स्वास्थ्य के ऊपर, उनसे ज्ञात होता है कि सौ बीमारियो मे कोई पचास बीमारियाँ शरीर मे नही होती, मन मे होती है। लेकिन मन की बीमारियाँ शरीर मे ग्रन्थि पैदा कर देती है। और शरीर मे अगर ग्रन्थियाँ पैदा हो जाएँ, शरीर मे अगर गाँठें पैदा हो जाएँ, तो शरीर का सस्थान अकड जाता है और अशुद्ध हो जाता है।

तो शरीर की शुद्धि के लिए सारे योग ने, सारे धर्मो ने बडे अद्भुत और क्रान्तिकारी प्रयोग किये है। और उन प्रयोगो को थोडा समझना जरूरी है। अगर उनका अपने शरीर पर आप प्रयोग करते है, तो थोडे ही दिनो म आप हैरान हो जाएँगे कि शरीर बडी अद्भुत जगह है, बडी अद्भुत बात है। और तब यह आपको शत्रु न मालूम होगा, बल्कि मन्दिर मालूम होगा— जिसके भीतर परमात्मा विराजमान है। तब यह दुश्मन नही मालूम होगा, यह बडा साथी मालूम होगा और आप इसके प्रति अनुगृहित होगे— क्योकि शरीर आपका नही है, पदार्थ से बना है। आप भिन्न है और शरीर भिन्न है। फिर भी आप इसका अद्भुत उपयोग कर सकते हैं। और तब आप शरीर के प्रति एक बडा ग्रेटिट्यूड, बडी कृतज्ञता अनुभव करेगे कि शरीर इतना साथ दे रहा है।

तो शरीर मे ग्रन्थियाँ पैदा न हो, यह शरीर शुद्धि के लिए पहला चरण है।

शरीर मे हमारे बहुत ग्रन्थियाँ है। अब जैसे मैं आपसे कहूँ अभी कुछ दिन हुए, एक व्यक्ति मेरे पास आये थे। वे मुझसे बोले, "मै बहुत दिनो से किसी धर्म की साधना करता हूँ। मन बडा शान्त हो गया है।" मैंने उनसे

कहा, "मुझे आपका मन शान्त दिखाई नही पडता।" वे बोले, "आप कैसे कह सकते हैं?" मैने उनसे कहा, "जितनी देर से आप आये है, आपके दोनो पैर तेजी से हिल रहे हैं।" (वे बैठे हैं और जोर से अपने पैरो को हिला रहे है) मैने उनसे कहा, "यह असम्भव है कि मन शान्त हो और पैर इस भाँति हिले।"

शरीर मे जो भी कम्पन है, वे मन के कम्पन से पैदा होते है। मन का कम्पन जितना कम होने लगता है, शरीर उतना थिर होने लगेगा।

बुद्ध और महावीर की मूर्तियाँ बिलकुल पत्थर-जैसी मालूम होती है। ये आदमी जब बैठे होते थे, तो भी ऐसे ही मालूम होते थे। ये मूर्तियाँ ही पत्थर-जैसी नही मालूम होती है, इन आदमियो को भी आपने देखा होता बैठे, तो ये भी बिलकुल पत्थर-जैसे मालूम होते। हमने इनकी पत्थर की मूर्तियाँ व्यर्थ ही नही बनायी। उसके पीछे कारण था। ये बिलकुल पत्थर-जैसे मालूम होने लगे थे। इनके भीतर कम्पन विलीन हो गये थे। या कि जब कम्पन सार्थक थे, जब उनकी जरूरत थी— वे होते थे, अन्यथा वे विलीन थे।

आप जब पैर हिला रहे होते है, तो आपके भीतर अशान्ति से जो एनर्जी पैदा हो रही है, जो शक्ति पैदा हो रही है, वह निकलने का कोई रास्ता न पाकर पैर मे कम्पन का रूप लेकर निकलती है।

जब एक आदमी क्रोध मे होता है, तो उसके दाँत भिच जाते हैं, मुट्ठियाँ बँध जाती है। क्यो? उसकी आँखो मे खून उतर आता है— क्यो? आखिर मुट्ठियाँ बँधने से क्रोध का क्या प्रयोजन है? अगर आप अकेले मे भी किसी पर क्रुद्ध होगे, तो भी मुट्ठियाँ बँध जाएँगी। वहाँ तो कोई मारने को भी नही, जिसको आप मारें। लेकिन जो शक्ति क्रोध से पैदा हो रही है, उसका निष्कासन कैसे होगा? हाथ के स्नायु खिचकर उस शक्ति को व्यय कर देते हैं।

सभ्यता ने बहुत दिक्कत पैदा कर दी है। असभ्य आदमी का शरीर हमारे शरीर से ज्यादा शुद्ध होता है। एक जगली आदमी का शरीर हमारे शरीर से बहुत शुद्ध होता है। उसमे ग्रन्थियाँ नही होती, क्योकि भावावेग मे वह उन्हे प्रगट कर देता है। लेकिन हम अपने भावावेगो को दबा लेते हैं।

समझ लीजिये, आप दफ्तर मे हैं और मालिक ने कुछ कहा। आपको क्रोध तो आया, लेकिन आप मुट्ठियाँ नही भीच सकते। वह जो शक्ति पैदा हुई उसका क्या होगा? शक्ति कभी नष्ट नही होती— स्मरण रखिये। कोई शक्ति नष्ट नही होती।

आपने मुझे गाली दी और मुझे क्रोध आ गया, लेकिन यहाँ इतने लोग थे कि मै उसे प्रगट नही कर सका—न दाँत भीच सका, न हाथ खीच सका, न गाली बक सका, न मै गुस्से मे कूद सका, न पत्थर उठा सका, तो उस शक्ति का क्या होगा, जो मेरे भीतर पैदा हो गयी? वह शक्ति मेरे शरीर के किसी अग को विकृत, क्रिपिल्ड कर देगी—उसको विकृत करने मे व्यय हो जायगी। इससे ग्रन्थि पैदा होगी। शरीर की ग्रन्थियो का मेरा मतलब यही है। इस तरह शरीर मे हमारे बहुत ग्रन्थियाँ पैदा हो जाती हैं। पर आप शायद हैरान होगे, आप कहगे, ऐसी हमे किन्ही ग्रन्थियो का पता नही है। तो मैं आपको एक प्रयोग करने को कहता हूँ, आप उसे करके देखे, फिर आपको पता चलेगा कि कितनी ग्रन्थियाँ है।

क्या आपने कभी ख्याल किया है कि अकेले किसी कमरे मे आप जोर से दाँत बिचकाने लगे है या आईने मे जीभ दिखाने लगे है, या गुस्से से आँख फाड़ने लगे है और आप अपने पर भी हँसें होगे कि यह मै क्या कर रहा हूँ। हो सकता है, स्नान-गृह मे आप नहा रहे है और आप अचानक कूदे है। आप हैरान होगे कि मै क्यो कूदा हू या मैने आईने मे देखकर दाँत क्यो बिचकाये है या मेरा जोर से गुनगुनाने का मन क्यो हुआ है।

मै आपको कहूँ, किसी दिन आधे घन्टे को सप्ताह मे एक एकान्त कमरे मे बन्द हो जाएँ। और आपका शरीर जो चाहे, करने दें। बहुत हैरान होगे। हो सकता है, शरीर आपका नाचे। जो करना चाहे— करने दे, आप उसे बिल्कुल न रोकें। और आप बहुत हैरान होगे। हो सकता है, शरीर आपका नाचे, हो सकता है आप कूदे, हो सकता है आप चिल्लाएँ। हो सकता है, आप किसी काल्पनिक दुश्मन पर टूट पड़ें— यह सब हो सकता है। और तब आपको पता चलेगा कि यह क्या हो रहा है।

ये सारी ग्रन्थियाँ है, जो दबी हुई है, भीतर मौजूद हैं और निकलना

चाहती हैं, लेकिन समाज उन्हे नही निकलने देना और आप भी नही निकलने देते। इस तरह हमारा शरीर बहुत-सी ग्रन्थियो का घर बना हुआ है। और जो शरीर ग्रन्थियो से भरा हुआ है, वह शरीर शुद्ध नही होता, उसके सहारे साधक भीतर प्रवेश नही कर सकते।

तो योग का पहला चरण होता है— शरीर-शुद्धि। और शरीर-शुद्धि का पहला चरण है—शरीर की ग्रन्थियो का विसर्जन। नयी ग्रन्थियाँ तो बनाएँ नही, और पुरानी ग्रन्थियो को विसर्जित करने का उपाय करें। और उसके उपाय के लिए जरूरी है कि महीने मे एक बार अकेले कमरे मे बन्द हो जाएँ और शरीर जैसा करना चाहे, करने दे। अगर कपडे फेककर नग्न, नाचने का मन हो तो नाचे और सारे कपडे फेक दें। और आप हैरान होगे, आधे घन्टे की उछल-कूद के बाद आप बहुत रिलैक्स्ड, बहुत शान्त, बहुत स्वस्थ अनुभव करेंगे। यह बात बहुत अजीब लगेगी, लेकिन आप बहुत शान्त अनुभव करेंगे। आपको बहुत हैरानी होगी कि यह शान्ति कैसे आ गयी।

आप जो व्यायाम करते है या घूमने चले जाते है, उसके बाद जो आपको हल्कापन लगता है, उसका कारण क्या है? उसका कारण यह है कि बहुत-सी ग्रन्थियाँ उससे विसर्जित होती है। आपको पता है, आपका लडने का जो मन होता है, लोगो से उलझने का जो मन होता है, उसका कारण क्या है? आपके भीतर बहुत-सी शक्तियाँ ग्रन्थियो की तरह मौजूद हैं, वे विसर्जित होना चाहती है। इसलिए आप बिलकुल उत्सुक होते हैं कि कोई मिल जाये और लडना हो जाये।

जब युद्ध का समय आता है, तब आप सुबह से अखबार पढते है— बहुत उत्सुकता से, और सारी दुनिया मे बडी खूबियो की बाते घटित होती हैं। पिछले महायुद्ध के समय दो बातें घटित हुईं। दुनिया मे आत्महत्याएँ एकदम कम हो गयी। आपको शायद पता नही होगा! पिछला महायुद्ध हुआ, उसके पहले पहला महायुद्ध हुआ। मनोवैज्ञानिक बहुत हैरान हुए कि आत्महत्याएँ कम क्यो हो गयी। एकदम आत्महत्याएँ कम हो गयी! जब तक युद्ध चला, आत्महत्याएँ नही हुई। सारी दुनिया मे उनका अनुपात एकदम गिर गया। उसका कारण क्या था? और मनोवैज्ञानिक बहुत परेशान हुए कि उन दिनो

खून भी नही हुए, आत्महत्याएँ भी नही हुईं। और एक बडी बात हुई—मानसिक बीमारो की सख्या कम रही, युद्ध के समय मे। अन्तत यह समझ मे आया कि युद्ध की जो खबरे थी, जो जोश खरोश था, उसमे मनुष्य की बहुत-सी ग्रन्थियाँ विसर्जित हुईं। और उतनी ग्रन्थियो ने उसको बचाया। यह जो युद्ध की खबरे आप सुनते है, तो आप किसी-न-किसी तरह उससे सलग्न हो जाते है। आपके क्रोध और आपकी हिंसा का निकास हो जाता है।

समझ लीजिये, आप गुस्से मे आ गये हैं— अगर आप हिटलर के प्रति गुस्से मे आ गये है, तो हिटलर की मूर्ति बनाकर जला देंगे— नारे लगाएगे, चिल्लाएगे। घर मे बैठकर हिटलर को गालियाँ देंगे— काल्पनिक दुश्मन! हिटलर तो मौजूद नही है आपके सामने! और इससे आपकी बहुत-सी ग्रन्थियाँ विसर्जित होगी। और उसका परिणाम होगा यह कि आपको मानसिक स्वास्थ्य मिलेगा।

आप हैरान होंगे यह जानकर, कि बाहर से हम चाहते है कि युद्ध न हो, लेकिन भीतर से हमारा कोई मन चाहता है कि युद्ध हो। युद्ध के वक्त लोग काफी खुश नजर आते है। यद्यपि बहुत उपद्रव का होना है, लेकिन लोग खुश नजर आते है। अभी हिन्दुस्तान पर चीन का हमला हुआ। आपमे एकदम से जो शक्ति का सचार हुआ, तो क्या आप समझते हैं कि उसका कारण क्या था? उसका कारण था कि आपकी बहुत-सी ग्रन्थियाँ, जो शरीर मे बधी थी, बहुत गुस्से मे निकली और आप हल्के हुए। और जब तब दुनिया मे ऐसे लोग है, जिनके शरीर अशुद्ध हैं, तब तक युद्ध मे नही बचा जा सकता। युद्ध तब समाप्त होगे, जब लोगो के शरीर इतने शुद्ध होगे कि उनके पास कोई ग्रन्थियाँ युद्ध मे विसर्जित करने को नही होगी। आपसे यह मै कह रहा हूँ, यह बहुत अजीब-सा लगेगा, लेकिन जब तक लोगो के शरीर शुद्ध स्थिति मे नही है, दुनिया से युद्ध बन्द नही हो सकते। कोई कितना ही कोशिश करे, युद्ध का मजा रहेगा।

आपको भी लडने मे मजा आता है। इसे जरा विचार करना, आपको लडने मे मजा आता है। वह लडाई चाहे किसी तल की हो—चाहे श्वेताम्बर दिगम्बर जैन से लडता हो और चाहे हिन्दू मुसलमान से लडता हो—उन सब

मे युद्ध का ही मजा है। आप देखते है कि एक छोटा धर्म बनता है, उसमे बीस-बीस सम्प्रदाय बन जाते है। फिर एक-एक सम्प्रदाय मे छोटे-छोटे सम्प्रदाय बन जाते है, क्या कारण है ? लोगो के शरीर अशुद्ध है और ग्रन्थियो से भरे है और उनको लडने के लिए कोई भी बहाना चाहिए। वह कोई छोटा-सा बहाना लेगे और लडेगे। और लडने से उनको राहत मिलेगी, उनको हल्कापन आयगा।

शरीर-शुद्धि प्राथमिक चरण है— साधना का। तो आपके लिए मैं दो बाते कहता हूँ। पुरानी जो ग्रन्थियाँ है, उनको विसर्जित करने का तो उपाय यह है कि आप एकान्त मे बिलकुल जगली हो जाएँ। छोड दे दूसरो का सारा ख्याल। कमरा बन्द कर दे और एक-एक पर्तें जो जबरदस्ती आपने अपने ऊपर लाद रखी है, वे सब ढीली छोड दें— और फिर जो हो, उसे होने दे, शरीर क्या करता है, उसे देखे वह नाचता है, कूदता है, गिरकर पडा रह जाता है, घूँसे तानता है, किसी काल्पनिक दुश्मन को मारता है, छुरी मारता है, गोली चलाता है— क्या करता है, उसे देखे और चुपचाप उसे करने दे। आप एक-दो महीने के प्रयोग मे बहुत हैरान हो जाएँगे। आप पाएगे, आपके शरीर ने एक अद्भुत सरलता, सात्विकता और शुद्धि को उपलब्ध किया है। इस तरह पुरानी ग्रन्थियो का विसर्जन होगा, पुरानी ग्रन्थियो की निर्जरा होगी।

जो पुराने साधक जगल मे चले जाते थे और एकान्त पसन्द करते थे और नही चाहते थे कि भीड मे आए उसके बडे-से-बडे कारणो मे एक कारण यह भी था। उस एकान्त मे, आपको पता नही कि महावीर ने क्या किया, आपको पता नही है कि बुद्ध ने क्या किया, आपको पता नही कि मुहम्मद ने क्या किया। कोई किताबें नही कहती कि उन्होने क्या किया। उन पहाडो पर जब वे थे, तब वे क्या कर रहे थे ? और मै आपको कहता हूँ, यह हो नही सकता कि उन्होने यह न किया हो कि उन्होने शरीर की ग्रन्थियाँ विसर्जित न की हो। महावीर को तो हम 'निर्ग्रन्थ' कहते है और उसका मै जो अर्थ करता हूँ, वह यही करता हूँ—'सारी ग्रन्थियाँ क्षीण जिसकी हो गयी'।

सारी ग्रन्थियो के विसर्जन का प्रारम्भिक चरण शरीर है। तो शरीर की

ग्रन्थियाँ जो पीछे पकडी हैं, उनको विसर्जित करना है। आपको पहले अजीब-सा लगेगा। अगर आपको जोर से हँसी आये अपने इस काम पर कि मैं यह क्या पागलपन कर रहा हूँ कि कूद रहा हूँ, तो जोर से हँसिये। अगर आपको खूब रोना आये, तो जोर से रोइये। आप बहुत हैरान होगे, अगर आपको मै यहाँ कह दूँ कि आप बिलकुल छोड दें अपना ख्याल, तो आपमे से कई लोग रोने लगेंगे—और कई लोग जोर से हँसने लगेंगे। कभी कोई रुदन, जो बाहर आना चाहता था, पर भीतर दबा रह गया है, वह निकलेगा। और कभी कोई हँसी, जो फूट पडनी थी, उसे रोक लिया गया है— वह कही ग्रन्थि बनकर रुकी हुई है— वह निकलेगी। बहुत एब्सर्ड, अटपटा मालूम होगा कि यह क्या हो रहा है, लेकिन यह होगा। इसका एकान्त मे प्रयोग करें— शरीर-शुद्धि के लिए। इससे हमारे ऊपर जो पुरानी ग्रन्थियो का बोझ है, वह हल्का होगा।

दूसरी बात, नयी ग्रन्थियाँ न बनें, इसका प्रयोग करें। यह तो पुरानी ग्रन्थियो के विसर्जन के लिए मैंने कहा। नयी ग्रन्थियाँ हम रोज बनाये चले जा रहे है। आपको मैने कोई एक अपशब्द कह दिया, और आपको क्रोध उठा, लेकिन सभ्यता और शिष्टता आपको उस क्रोध को प्रकट नही करने देगी। एक शक्ति का पुंज आपके भीतर घूमेगा। वह कहाँ जायेगा? वह किन्ही नसो को सिकोडकर, इरछा-तिरछा करके बैठ जायेगा। इसलिए क्रोधी आदमी के चेहरे मे, आँखो मे और शान्त आदमी के चेहरे मे और आँखो मे फर्क होता है। क्योकि वहाँ किसी क्रोध के वेग ने किसी चीज को विकृत नही किया है। और शरीर तब अपने परिपूर्ण सौंदर्य को उपलब्ध होता है, जब उसमें कोई ग्रन्थि नही होती। यानी शरीर के सौन्दर्य का कोई और मतलब ही नही है। आँखें तब बडी सुन्दर हो जाती है। तब कुरूप-से-कुरूप शरीर भी सुन्दर दिखने लगता है।

गाँधी का शरीर कुरूप था—जब वे युवा थे, लेकिन जैसे-जैसे वे बूढे होते गये, उनमें अभिनव सौन्दर्य आया। यह बहुत अद्भुत था। वह सौन्दर्य शरीर का नही था, वह ग्रन्थियो के क्षीण होने का था। उसे कम लोग पहचाने और समझे होगे। गाधी कुरूप थे, इसमे कोई शक नहीं। गाँधी का शरीर किसी भी ब्राह्य सौन्दर्य के माध्यम से सुन्दर नही था। अगर आप उनके

पुराने चित्र देखेंगे— तो बचपन उनका कुरूप है, जवानी उनकी कुरूप है। लेकिन जैसे-जैसे वे बूढे होते हैं, बिलकुल सुन्दर होते जाते हैं। बुढापे मे तो आदमी और असुन्दर होता है। पर वे सुन्दर होते जा रहे है। और अगर जीवन का ठीक विकास हो, तो जवानी उतनी सुन्दर नही होनी है— जितना बुढापा होना है। क्योकि जवानी मे बडे वेग होते है, बुढापा बडा निर्वेग हो जाता है।

अगर ठीक विकास हो, तो बुढापा सुन्दरतम क्षण है जीवन का, क्योकि उस वक्त सारे वेग क्षीण हो जाते हैं। और बुढापे तक सारी ग्रन्थियाँ विलीन होनी चाहिए, अगर ठीक विकास हो।

लेकिन कैसे यह हमारी विकृति इकट्ठी होती है— शरीर के वेगो की ? मैंने आपको अपमानजनक शब्द कहा, आपमे क्रोध उठा। एक शक्ति पैदा हुई, पर शक्ति नष्ट नही होती। कोई शक्ति नष्ट नही होती। उसका कोई उपयोग होना चाहिए। अगर उसका उपयोग नही होगा, तो वह आपको विकृत करके नष्ट हो जायेगी। तो उपयोग करिये। कैसे उपयोग करियेगा ?

समझ लीजिये, आपको क्रोध आ रहा है। आप दफ्तर मे बैठे हुए है और आपको बहुत जोर से क्रोध आया और आप उसको प्रकट नही कर सकते। आप एक काम करिये जो शक्ति पैदा हुई है, उसका एक सृजनात्मक परिवर्तन, क्रिएटिव ट्रान्सफॉर्मेशन करिये। अपने दोनो पैरो को जोर से सिकोडिये। वे पैर किसी को दिखायी नही पड रहे है। आप दोनो पैरो की सारी मसल्स को जोर से सिकोडिये। जितना सिकोड सके, उतना सिकोडें— उतना उसे तनावपूर्ण बनाएँ। जब आपकी बिलकुल सामर्थ्य के बाहर हो जाए खीचना, तब उनको एकदम से रिलैक्स, शिथिल कर दीजिये। आप हैरान होंगे कि क्रोध निष्कासित हो गया। और आपकी पैर की मसल्स (पेशियाँ) सुन्दर हो जाएँगी, व्यायाम भी हो गया। वह जो क्रोध का वेग उठा था, उसने कुछ विकृत नही किया, बल्कि आपके पैर को सुन्दर करके चला गया। तो आपके शरीर के जो अंग अस्वस्थ हो, उनको क्रोध के माध्यम से सुन्दर कर लीजिये, स्वस्थ कर लीजिये। क्योकि वह जो इनर्जी पैदा हुई है, उसका क्रिएटिव, सृजनात्मक उपयोग हो जायेगा।

अगर आपके हाथ क्रोध से भरे है, तो आप दोनो हाथो को जोर से भींचिये। वह सारी शक्ति जो क्रोध की पैदा हुई है, उन हाथो मे लगेगी। अगर आपका पेट रुग्ण है, तो सारी पेट की आँतो को अन्दर सिकोड़िये और क्रोध की शक्ति को भाव मे परिणत करिये। वह शक्ति जाकर पेट की सारी नसो को स्फोटन मे व्यय होगी और आप हैरान होंगे— आप एक-दो मिनट बाद पाएँगे कि क्रोध विलीन है और शक्ति उपयुक्त हो गयी, शक्ति का प्रयोग हो गया।

शक्ति हमेशा तटस्थ है। यानी क्रोध की जो शक्ति पैदा हो रही है, वह बुरी नही, उसका क्रोध की तरह उपयोग हो रहा, यह बुरा है। उसका दूसरा उपयोग करिये। और जो उसका दूसरा उपयोग नही करेगा, तो शक्ति तो काम करेगी, वह शक्ति तो बिना काम के नही रहनेवाली है। वह शक्ति तो काम करेगी ही। अगर हम उसका उपयोग सीख लेंगे, तो वह हमारे जीवन को एक क्रान्ति दे देगी।

तो पुरानी ग्रन्थियो की निर्जरा और ग्रन्थियाँ बनानेवाली नयी शक्तियो का सृजनात्मक उपयोग— शरीर-शुद्धि के लिए ये दो प्राथमिक चरण हैं। ये बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। सारे योग के आसन मूलत शरीर के सृजनात्मक उपयोग के लिए हैं। प्राणायाम शरीर की शक्तियो का सृजनात्मक उपयोग करने के लिए है। जो व्यक्ति अपनी शरीर की शक्तियो का सृजनात्मक उपयोग नही करेगा, तो वे शक्तियाँ जो कि वरदान हो सकती थी, उसके लिए अभिशाप हो जाएँगी। हम सब अपनी ही शक्तियो से पीडित हैं। यानी यह हमारा दुर्भाग्य हो गया है कि हमारे पास शक्तियाँ हैं।

जीसस क्राइस्ट के जीवन मे एक उल्लेख है। वे एक गाँव से निकले। उन्होने एक आदमी को एक छत पर जोर से गालियाँ बकते, अश्लील बाते बकते हुए देखा। वे सीढियाँ चढकर उसके पास गये। और उन्होने उससे कहा, "मेरे मित्र, यह तुम क्या कर रहे हो? और अपने जीवन को इस अश्लील बकवास मे क्या खर्च कर रहे हो? प्रतीत होता है, तुमने शराब पी ली है।" उस आदमी ने आँख खोली, उसने ईसा को पहचाना। उसने उठकर ईसा को हाथ जोडे और कहा, "मेरे प्रभु, मै तो बिलकुल बीमार

था, मैं तो बिलकुल मरणासन्न था, आपने ही अपने आशीर्वाद से मुझे ठीक कर दिया था, क्या आप भूल गये ? और अब मै परिपूर्ण स्वस्थ हूँ । लेकिन इस स्वास्थ्य का क्या करूँ ? तो शराब पी लेता हूँ ।"
ईसा बहुत हैरान हुए । उसने कहा, "अब मै परिपूर्ण स्वस्थ हूँ, स्वास्थ्य का क्या करूँ ? तब शराब पी लेता हूँ, जो बनता है, वह करता हूँ ।"

ईसा बहुत दुखी नीचे उतरे । वे गाँव मे अन्दर गये, तो एक आदमी को उन्होंने एक वेश्या के पीछे भागते हुए देखा, तो उन्होंने कहा, "मित्र, अपनी आँखो का यह क्या उपयोग कर रहे हो ?" उसने ईसा को पहचाना और उनसे कहा, "आप भूल गये । मै तो अन्धा था, आपने हाथ रखकर मेरी आँखें एक दफा ठीक कर दी थी । अब इन आँखो का क्या करूँ ?"

ईसा बहुत दुखी मन से उस गाँव से वापस लौटते थे । एक आदमी गाँव के बाहर छाती पीटकर रो रहा था । ईसा ने उसके सिर पर हाथ रखा और कहा, "क्यो रो रहे हो ? जीवन मे बहुत आनन्द है, जीवन रोने के लिए नही है ।" उसने ईसा को पहचाना, कहा, "भूल गये, मैं मर गया था और लोग कब्र मे मुझे ले जा रहे थे, तुमने अपने जादू से मुझे जिन्दा कर दिया था । अब इस जीवन का मै क्या करूँ ?"

यह कहानी बिलकुल काल्पनिक और झूठी-सी मालूम होती है, लेकिन हम क्या कर रहे है ? हम इस जीवन का क्या कर रहे है ? हमारे पास जीवन मे जो भी शक्तियाँ मिली है, उन सबसे हम स्वयं अपना डिस्ट्रक्शन, उन सबमे हम अपना विनाश कर रहे हैं । जीवन के दो ही रास्ते है । जो शक्तियाँ आपके शरीर और मन मे है, उनका विनाश कर ले— यही नर्क का रास्ता है । और जो शक्तियाँ और जो ऊर्जाएँ, जो एनर्जीज आपके भीतर है, उनका सृजनात्मक उपयोग कर लें, यही स्वर्ग का रास्ता है ।

सृजन स्वर्ग है और विनाश नर्क है । अपनी शक्तियो का जो सृजनात्मक उपयोग कर ले, उसने स्वर्ग की तरफ चरण रखने शुरू कर दिये । और जो अपनी शक्तियो का विनाशात्मक उपयोग कर ले, वह नर्क की तरफ जा रहा है । और दूसरा कोई मतलब नही है ।

आप अपने से पूछें, आप क्या कर रहे हैं ? जब एक आदमी क्रोध से भरता है तो आप समझते है, कितनी गत्यात्मक शक्ति, डायनेमिक फोर्स उसमे पैदा होती है ! क्या आपको पता है, एक कमजोर आदमी क्रोध मे आकर ऐसी चट्टान उठा सकता है, जिसे वह कभी शान्त क्षण मे उठाने की कल्पना नही कर सकता था ! क्या आपको पता है, एक क्रुद्ध आदमी अपने से बहुत बलिष्ठ शान्त आदमी को क्षणो मे परास्त कर सकता है !

एक दफा जापान मे ऐसा हुआ। वहाँ एक वर्ग होता है— समुराई। वहाँ के क्षत्रिय है वे। उनका धन्धा तलवार चलाना है और जीवन को दाँव पर लगाना— यही उनका शौक है। एक समुराई बहुत बडा सैनिक था, बहुत बडा सेनापति था। उसकी पत्नी से, उसके घर मे जो नौकर था, उसका प्रेम हो गया। वहाँ यह रिवाज था कि अगर किसी की पत्नी से किसी का प्रेम हो जाये, तो वह उसे द्वन्द्व-युद्ध के लिए ललकारेगा। दो मे से एक मर जायेगा, जो शेष रहेगा, पत्नी का उससे विवाह हो जायेगा, पत्नी उसकी होगी।

तो उस नौकर का, समुराई सेनापति की पत्नी से प्रेम हो गया। सेनापति ने कहा, "पागल अब द्वन्द्व-युद्ध के सिवाय कोई रास्ता नही है। अब हम लडेगे। अब तू कल सुबह तलवार लेकर आ जा।" वह नौकर तो बडा घबराया। सेनापति तो तलवार का मास्टर था, वह तो अद्भुत कुशल आदमी था। यह बेचारा नौकर, जो घर मे झाडू-बुहारी लगाता था, यह क्या तलवार चलायेगा ! इसने कभी तलवार छुई नही थी। इसने उससे कहा, "मैं कैसे तलवार उठाऊँगा ?" लेकिन सेनापति ने कहा, "अब इसके सिवाय कोई रास्ता नही है। रास्ता यही है कि तुम कल तलवार लेकर आ जाओ।" वह घर गया, उसने रात भर सोचा। इसके सिवाय कोई रास्ता नही था कि वह सुबह तलवार उठाये। उसने कभी इसके पहले जिन्दगी मे तलवार नही उठायी थी। उसने सुबह तलवार उठायी, वह तलवार लेकर पहुँचा। लोग देखकर दग रह गये, वह तो जैसे आग का अगार था—जब तलवार लेकर वहाँ पहुचा, वह सेनापति थोडा घबराया और उसने पूछा, "तुम तलवार उठाना भी जानते हो ?" वह बिलकुल गलत ही पकडे हुए था। उसने कहा, "अब कोई सवाल नही, अब मरना ही है, तो मारने की कोशिश करेंगे।"

और वह बड़ा अजीब द्वन्द्व-युद्ध हुआ। उसमे सेनापति मारा गया और वह नौकर जीता।

इस वजह से कि अब मरना ही है, और कोई रास्ता नही है— उस नौकर मे अद्भुत ऊर्जा और शक्ति पैदा हुई। वह तलवार चलाना बिलकुल नही जानता था। उसने बिलकुल ही गलत वार किये— बिलकुल ही गलत, जो कि उसके ही विपरीत थे। लेकिन उसके वार देखकर, और उसके क्रोध को और उसकी स्थिति को देखकर सेनापति पीछे हटने लगा। उसकी सारी कुशलता व्यर्थ हो गयी। क्योकि वह बिलकुल शान्त लड रहा था। उसके लिए यह कोई खास बात नही थी। उसके लिए लडाई बिलकुल साधारण-सी बात थी। वह पीछे हटने लगा। उस क्रोध की ऊर्जा मे उसकी मृत्यु हुई, उसे मरना पडा। और वह आदमी जीता, जो कि बिल्कुल ही नासमझ था, जो उस कला को जानता भी नही था।

क्रोध मे या ऐसे किसी भी वेग मे आपके भीतर बहुत शक्ति उत्पन्न होती है। आपके सारे कण, आपके शरीर मे जितने लिविंग सेल्स है, जितने जीवित कोष्ठ हैं, वे सब-के-सब अपनी शक्ति का दान करते हैं। और आपके शरीर मे बहुत-से सरक्षित कोष है शक्ति के, वे हमेशा खतरे के लिए सेफ्टि-मेजर्स हैं, सुरक्षा-कवच हैं। वे सामान्यतया काम मे नही आते। अगर आपको हम कहे, दौडिए प्रतियोगिता मे— तो आप कितनी ही तेज दौडिए, आप उतना तेज कभी नही दौड सकते, जितना एक आदमी आपके पीछे बन्दूक लेकर लगा हो, तब आप दौडेगे। उस वक्त जो सेफ्टि-मेजर्स है आपके भीतर, आपके शरीर म जो ग्रन्थियाँ शक्ति को रखे हुए है जरूरत के लिए, वे अपनी शक्ति को खून म छोड देती हैं। उस वक्त आपका शरीर बडी शक्ति से आप्लावित हो जाता है। अगर उस शक्ति का उपयोग सृजनात्मक न हो, तो वह शक्ति आपको ही खण्डित करेगी और आपको ही तोड देगी।

इस दुनिया मे अशक्त लोग पाप नही करते। शक्तिशाली लोग पाप करते है, मजबूरी मे। उनकी शक्ति उनसे पाप करवाती है। इस दुनिया मे अशक्त लोग बुरे काम नही करते, इस दुनिया मे शक्तिशाली लोग बुरे काम करने को मजबूर हो जाते है। क्योकि शक्ति का सृजनात्मक उपयोग उन्हे पता नही

है। इसलिए जितने अपराधी है, जितने पापी है, उन्हे आप शक्ति का स्रोत समझिए और अगर उन्हे शुभ सम्पर्क मिल जाये, तो उनकी सारी शक्तियाँ अद्भुत रूप से रूपान्तरित हो जाती हैं।

आपको पता होगा कि धार्मिक इतिहास मे उसके सैकडो उदाहरण हैं, जबकि पापी क्षणभर मे पुण्यात्मा हो गये है। उसका कुल कारण इतना है कि शक्तियाँ बहुत थी, केवल ट्रान्सफॉर्मेशन, रूपान्तरण की बात थी। शुभ का सम्पर्क चाहिए और सब बदल जायेगा।

अगुलिमाल ने बहुत हत्याएँ की। उसने एक हजार लोगो की हत्या करने का व्रत लिया था। उसने नौ सौ निन्यानबे लोगो की हत्या करके उनकी अगुलियो की माला पहन ली थी। उसे आखिरी आदमी चाहिए था। जिस जगह खबर हो जाती थी कि अगुलिमाल है, वहाँ रास्ते निर्जन हो जाते थे। क्योकि वहाँ कौन चलता! अगुलिमाल देखता ही नही था, विचार ही नही करता था, जो आया उसकी हत्या कर देता था। खुद सम्राट प्रसेनजित, जो राजा था बिहार का, वह भी उससे डरता था। उसकी छाती कँप जाती थी—अगुलिमाल का नाम सुनकर। उसने बहुत सैनिक वहाँ भेजे, लेकिन अगुलिमाल पर कोई कब्जा नही हुआ।

बुद्ध उस पहाड से निकलते थे एक बार। गाँव के लोगों ने कहा, "उधर मत जाइए। आप एक निहत्थे भिक्षु हैं, अगुलिमाल आपकी हत्या कर देगा।" बुद्ध ने कहा, "हम तो जो रास्ता चुनते है, उस पर चलते है। किसी की वजह से उसको नही बदलते। और अगर अगुलिमाल यहाँ है तो हमारी और भी जरूरत हो गयी कि हम वहाँ जाए। अब देखना यह है कि अगुलिमाल हमे मारता है कि हम अगुलिमाल को मारते है।" लोगो ने कहा, "बडी पागलपन की बात है। आपके पास कुछ भी नही है, आप अगुलिमाल को मारियेगा!" निहत्थे, कमजोर बुद्ध और अगुलिमाल दैत्य-जैसा आदमी। बुद्ध ने कहा, "अब देखना यह है कि अगुलिमाल बुद्ध को मारता है या बुद्ध अगुलिमाल को मारते है। और हम तो जो रास्ता चुनते है, उस पर ही चलते है। और यह और भी अच्छा है कि अगुलिमाल से मिलना हो जायगा। अनायास यह मौका आ गया है।" बुद्ध वहाँ गये।

अगुलिमाल ने अपनी टेकडी से देखा कि एक निहत्था भिक्षु— शान्त— रास्ते पर चला आ रहा है। उसने वही से चिल्लाकर कहा, "देखो, यहाँ मत आओ। सिर्फ इसलिए कह रहा हूँ कि तुम सन्यासी हो। वापस लौट जाओ। इतनी दया आ गयी तुम्हारी चाल देखकर, धीमे चले आ रहे हो। तुम लौट जाओ, आगे मत बढो। क्योकि हम "किसी पर दया करने के आदी नही है, हत्या कर देगे।" बुद्ध ने कहा, हम भी किसी की दया लेने के आदी नही है। और जहाँ चुनौती हो, वहाँ से सन्यासी पीछे कैसे लौटेगा ? तो हम तो आते है, तुम भी आओ।"

अगुलिमाल बहुत हैरान हुआ कि यह आदमी तो पागल लगता है। उसने अपना फरसा उठाया और नीचे उतरा। जब वह बुद्ध के पास पहुँचा तो बुद्ध से उसने कहा, "अपने हाथ मे अपनी मृत्यु मोल ले रहे हो ?" बुद्ध ने कहा, "इसके पहले कि तुम मुझे मारो, एक छोटा-सा काम करो। यह सामने वृक्ष है, इसके चार पत्ते तोड दो।" उसने अपने फरसे से मारा और डाल तोड दी और कहा, "यह रहा, चार के बदले— चार हजार।" बुद्ध ने कहा, "अब एक छोटा काम और करो। इसके पहले कि तुम मुझे मारो, इन पत्तियों को वापस इसी दरख्त मे जोड दो।" अगुलिमाल बोला, यह तो मुश्किल है।" तो बुद्ध ने कहा, "तोडना तो बच्चा भी कर देता, जोडना जो कर सके उसमे ही पौरुष है, उसमे ही पुरुषार्थ है। तुम बहुत कमजोर आदमी हो, तुम सिर्फ तोड सकते हो। तुम यह ख्याल छोड दो कि तुम बडे शक्तिशाली हो। तुम एक पत्ता भी नही जोड सकते हो!" उसने एक क्षण गौर से सोचा, फिर कहा, "यह तो सही है। क्या पता जोडने का भी कोई रास्ता हो सकता है ?" बुद्ध ने कहा, "है। हम उसी रास्ते पर चल रहे हैं।" उसने गौर से देखा और उसके स्वाभिमान को पहली दफा यह पता चला कि मारने मे कोई मतलब नही है। मारना कमजोर भी कर सकता है। उसने कहा, "मै तो कमजोर नही हूँ, मैं क्या करूँ ?" बुद्ध ने कहा, "मेरे पीछे आओ।"

अगुलिमाल उस दिन भिक्षु हो गया, वह गाँव मे भिक्षा माँगने गया। सब लोग डर के मारे अपने मकानो पर चढ गये और उसको पत्थरो से

मारा। वह नीचे गिर पड़ा है— लहू-लुहान, उस पर पत्थर पड़ रहे है। बुद्ध उस किनारे से आये और उससे कहा, "अगुलिमाल— ब्राह्मण अगुलिमाल! उठो! आज तुमने पुरुषार्थ को सिद्ध कर दिया। जब उनके पत्थर तुम्हारे ऊपर पड़ रहे थे, तो तुम्हारे हृदय मे जरा भी क्रोध नही आया। और जब तुम्हारे शरीर से लहू गिरने लगा और तुम जमीन पर गिर गये, तब भी तुम्हारे हृदय मे उनके प्रति प्रेम ही भरा हुआ था। तुमने अपने पुरुष को सिद्ध कर दिया। और तुम ब्राह्मण हो गये।"

प्रसेनजित को खबर मिली, तो मिलने आया बुद्ध से कि अगुलिमाल परिवर्तित हुआ है। वह आकर बैठा। उसने कहा, "हम सुनते है कि अगुलिमाल साधु हो गये है। क्या मै उनके दर्शन कर सकता हू?" बुद्ध बोले, "जो मेरे बगल मे भिक्षु बैठे हुए है, वे अगुलिमाल है।" प्रसेनजित ने सुना, उसके हाथ-पैर कॉप गये। नाम तो पुराना था। और डर वही था, उस आदमी का। अगुलिमाल ने कहा, "मत डरो। वह आदमी गया, वह शक्ति जो साथ मे थी, परिवर्तित हो गयी। अब हम दूसरे रास्ते पर है। अब तुम हमे मार डालो, तो हमारे मन मे तुम्हारे प्रति कोई अशुभ आकॉक्षा नही उठेगी।" जब बुद्ध से लोगो ने पूछा कि इतना बड़ा पापी कैसे परिवर्तित हुआ, तो बुद्ध ने कहा, "पाप और पुण्य का प्रश्न नही है, शक्ति के परिवर्तन का प्रश्न है।"

इस दुनिया मे कोई बुरा नही है और इस दुनिया मे कोई भला नही है। केवल शक्ति की दिशाएँ है। हमारे भीतर बहुत शक्ति है— इस शरीर मे। इस शरीर की शक्तियो का सृजनात्मक उपयोग करना है।

एक तो मैने कहा जब भावावेश उठे, तो आप शरीर के किसी अग मे उस भावावेश का उपयोग कर ले। दूसरी बात, अपने जीवन मे कुछ सृजनात्मक काम सीखे। हम सब गैर-सृजनात्मक है।

पुराने दिन थे, गॉव मे एक आदमी जूता बनाता था और कोई उसके जूते को पहनता था, तो वह गौरव से कहता था कि मेरा बनाया हुआ जूता है। सृजन का एक आनन्द था। एक आदमी गाडी का चाक बनाता था, तो गौरव से कहता था कि मेरा बनाया हुआ है। आज दुनिया मे सृजन का कोई आनन्द

नही रह गया है। आपका बनाया हुआ कुछ भी नही है। यह दुनिया जैसी है, उसमे आदमी का बनाया हुआ कुछ भी नही रह जायेगा। उसका परिणाम यह हुआ है कि जो सृजन का आनन्द था, वह विलीन हो गया है। और अगर वह विलीन हो जायेगा तो शक्तियो का क्या होगा? वह विनाश की तरफ उत्सुक होगी। स्वाभाविक है कि शक्ति का कुछ-न-कुछ होगा— या तो विनाश होगा या सृजन होगा।

तो जीवन मे कोई सृजनात्मक काम भी करें। सृजनात्मक—मतलब कि सिर्फ आप अपने आनन्द के लिए निर्मित कर रहे हैं। एक मूर्ति बनाएँ तो कोई हर्ज नही। एक गीत लिखें, एक गीत गाएँ, एक सितार को बजाएँ, तो कोई हर्ज नही। उसे सिर्फ आनन्द के लिए करें, व्यवसाय के लिए नही। जीवन मे एक काम चुनें, जो आपका आनन्द है— जो आपका व्यवसाय नही है। तो आपकी बहुत-सी शक्तियो का विनाशात्मक रूप परिवर्तित होगा और वे सृजन मे लगेगी।

सामान्य जीवन को सृजनात्मक दृष्टि दें। कोई फिक्र नही, घर मे एक बगिया लगाएँ। और उन फूलो को प्रेम करे और उनका आनन्द लें। कोई फिक्र नही, एक पत्थर को घिसकर एक छोटी-सी मूर्ति बनाएँ। हर आदमी जो समझदार है, आजीविका के अतिरिक्त कुछ समय सृजन के लिए देगा। और जो नही देगा, वह गलती मे पड जायेगा। उसका जीवन खराब हो जायेगा। एक छोटा-सा गीत लिखें। या अस्पताल मे जाएँ और कुछ मरीजो को दो-दो फूल दे आएँ। या रास्ते पर कोई भिखमगा मिल जाये, तो दो क्षण उसे गले लगा ले। कुछ सृजनात्मक करें, जो सिर्फ आनन्द है आपका। और जिसमे आपको कुछ लेना नही है और कुछ देना नही है। जिसे कर लेना ही आपका आनन्द है।

तो जीवन मे कुछ बिन्दु चुने, जिसे सिर्फ कर लेना आपका आनन्द है। आपकी सारी शक्तियाँ उस तरफ उन्मुख होगी और विनाश के लिए आपके पास शक्तियाँ नही बचेंगी। जो आदमी जितना सृजनात्मक होगा, उतना ही उसका क्रोध, उसका सैक्स विलीन हो जायेगा। वे सब असृजनात्मक आदमी के लक्षण हैं। आपके पास बहुत शक्तियाँ हैं, वे कहाँ जाएँगी? वे क्रोध से निकलेंगी, कामवासना से निकलेंगी। निकलना जरूरी है।

दुनिया मे बहुत बडे-बडे सृजनात्मक मूर्तिकार, चित्रकार या कवि हुए हैं। उनके अविवाहित रह जाने का और कोई रहस्य नही, कुल इतना ही रहस्य है कि सारी शक्ति उनकी सृजन मे विलीन हो गयी। वह ट्रान्सफॉर्म हो गयी, सब्लिमेट हो गयी। अगर वह वहाँ सब्लिमेट न होती, तो बहुत निम्न तल के सृजन मे व्यय होती, सन्तति के सृजन मे। वह बच्चे पैदा करने मे व्यय होती। वही शक्ति किन्ही अमर काव्यो के, अमर चित्रो के निर्माण मे व्यय हो गयी।

तो जीवन मे शक्ति का सब्लिमेशन, उसका उदात्तीकरण बहुत जरूरी है। तो एक यह स्मरण रखे कि शरीर की सम्पूर्ण शुद्धि के लिए, जीवन मे सृजनात्मक होने की चेष्टा करे। सृजनात्मक मनुष्य ही केवल धार्मिक हो सकता है, और कोई मनुष्य धार्मिक नही हो सकता।

शरीर-शुद्धि के लिए ये बुनियादें बाते मैंने आपसे कही। ये बहुत बुनियादी बाते है, इनको जो सम्हालता है— तो अनेक गौण बातें अपने-आप सध जाएँगी।

बहुत-सी गौण बातो मे एक है, आहार। वह शरीर-शुद्धि मे उपयोगी है। आपका शरीर तो बिल्कुल भौतिक सस्थान है। उसमे आप जो डालते है, उसके परिणाम होने स्वाभाविक है। अगर मै शराब पी लूँगा तो मेरे शरीर के सेल्स बेहोश हो जाएँगे, यह बिलकुल स्वाभाविक है। और अगर शरीर मेरा बेहोश है, तो बेहोशी का परिणाम मेरे मन पर पडेगा। मन और शरीर बहुत अलग-अलग नही है, बहुत सयुक्त है।

हमारा जो व्यक्तित्व है, वह 'शरीर और मन'— ऐसा अलग-अलग नही है। 'शरीरमन'— ऐसा इकट्ठा है। वह साइकोसोमैटिक है। उसमे हमारा शरीर और मन इकट्ठा है। शरीर का ही अत्यन्त सूक्ष्म हिस्सा मन है और मन का ही अत्यन्त स्थूल हिस्सा शरीर है। इसे यो समझिये कि दोनो बिलकुल अलग-अलग चीजे नही है। इसलिए जो शरीर मे घटित होगा, उसके परिणाम मन मे प्रतिध्वनित होते हैं और जो मन मे घटित होता है, उसके परिणाम शरीर तक आ जाते है। अगर मन बीमार है, तो शरीर ज्यादा देर स्वस्थ नही रहेगा। अगर शरीर बीमार है, तो मन ज्यादा देर तक स्वस्थ नही रह सकता। ये खबरें एक-दूसरे मे समझी और सुनी जाती

है। इसलिए जो लोग मन को स्वस्थ रखने का उपाय समझ लेते हैं, वे शरीर के बाबत मुफ्त मे बहुत स्वास्थ्य उपलब्ध कर लेते हैं।

शरीर और मन सयुक्त घटना है। शरीर पर जो होगा, वह मन पर होगा। इसलिए आपको अपने आहार मे, भोजन मे थोडा विवेकपूर्ण होना जरूरी है।

पहली बात, भोजन इतना ज्यादा न हो कि शरीर उसके कारण आलस्य से भरता हो। आलस्य अशुद्धि है। भोजन ऐसा न हो कि शरीर उत्तेजना से भरता हो। उत्तेजना अशुद्धि है। क्योंकि उत्तेजना ग्रन्थियाँ पैदा करेगी। वह ऐसा न हो कि शरीर क्षीण होता हो, क्योंकि क्षीणता कमजोरी है। और शक्ति अगर उत्पन्न न होगी, तो परमात्मा की तरफ विकास नही हो सकता। शक्ति पैदा हो, लेकिन शक्ति उत्तेजक न हो, ऐसा आहार होना चाहिए। शक्ति पैदा हो, लेकिन वह इतनी न हो कि शरीर उसके कारण आलस्य से भर जाय।

अगर आपने जरूरत से ज्यादा भोजन किया है, तो सारे शरीर की शक्ति उसको पचाने मे लग जाती है, और शरीर मे आलस्य छा जाता है। शरीर मे आलस्य छाने का और कोई मतलब नही है। सारी शक्ति पचाने मे लगती है, क्योंकि शरीर पचाने मे लग जाता है। आलस्य इस बात कि सूचना है कि भोजन जरूरत से ज्यादा हो गया। भोजन के बाद आलस्य नही, स्फूर्ति आनी चाहिए। स्वाभाविक है भूख लगी थी, फिर भोजन किया, फिर स्फूर्ति आनी चाहिए, क्योंकि शक्ति उत्पन्न होने का स्रोत भीतर गया। लेकिन आपको तो आलस्य आता है। आलस्य इस बात का सकेत है कि आपने इतना भोजन कर लिया कि अब शरीर की सारी शक्ति उसको पचायेगी। शरीर अपनी सारी शक्ति को खीचकर पेट मे ले जायेगा। और सब तरफ से शक्ति क्षीण होने मे आलस्य आ जायेगा। तो भोजन स्फूर्ति दे, तब सम्यक् है। भोजन उत्तेजना न दे, तब सम्यक् है। भोजन मादकता न दे, तब सम्यक् है। तीन बातें स्मरण रखें— भोजन सुस्ती न दे, तो वह शुद्ध है, भोजन उत्तेजना न दे, तो वह शुद्ध है, और भोजन मादकता न दे, तो वह शुद्ध है।

ये मोटी बातें है और आपको इतना नासमझ मैं नही मानता कि विस्तार मे चर्चा करने की जरूरत है। इनको आप समझेंगे और अपने ढग से इनको व्यवस्थित करेंगे।

दूसरी बात, गौण बातो मे— शरीर के लिए थोडा-सा व्यायाम अत्यन्त आवश्यक है। क्योकि शरीर जिन तत्त्वो से मिलकर बना है, वे तत्त्व व्यायाम के समय मे विस्तार पाते है। व्यायाम का मतलब है— विस्तार। सकोच के विपरीत है व्यायाम शब्द। व्यायाम का अर्थ है—विस्तार। जब आप दौडते है, तब आपके जीवित कोष विस्तृत होते हैं, फैलते है। और जब वे फैलते है, तो आपको स्वास्थ्य का अनुभव होता है, जब वे सिकुडते हैं, तो बीमारी का अनुभव होता है। जब आप गहरी श्वास लेते हैं, तो वह फेफडो के समस्त छिद्रो को खोलती है और सारी कार्बनडायआक्साइड को बाहर फेकती है, जिससे आपके खून की गति बढती है। और खून की गति बढती है तो शरीर की सारी अशुद्धियाँ दूर होती है। इसलिए योग ने, शरीर-शौच को, शरीर की परिपूर्ण शुद्धि को बहुत अनिवार्य नियमो के अन्तर्गत रखा। तो थोडा व्यायाम।

अति विश्राम नुकसान करता है। अति व्यायाम भी नुकसान करता है। इसलिए अति व्यायाम को नही कह रहा हूँ। अति व्यायाम नही, थोडा सम्यक् व्यायाम, कि जिससे आपको स्वास्थ्य का बोध हो। और अति विश्राम नही, थोडा विश्राम। जितना व्यायाम, उतना विश्राम।

इस सदी मे व्यायाम भी नही है और विश्राम भी नही है। हम बहुत अजीब हालत मे है। आप व्यायाम तो करते नही, आप विश्राम भी नही करते। जिसको आप विश्राम कहते है, वह विश्राम नही है। आप पडे हैं, करवटें बदल रहे हैं— वह विश्राम नही है। एक गहरी प्रगाढ निद्रा चाहिए, जिसमे कि सारा शरीर सो जाये और उसके सारे काम का जो भी बोझ और भार उस पर पडा है, वह सब उससे विलीन हो जाये। क्या आपने कभी ख्याल किया है कि आप सुबह बहुत अस्वस्थ उठे है और तबियत ताजा नही है, तो आपका व्यवहार स्वस्थ नही होता। अगर आपकी नीद अच्छी नही हुई और सुबह एक भिखारी आपसे भीख माँगने आया है, तो बहुत असम्भव है

कि आप उसे भीख दे सकें। और अगर आप रात बहुत गहरी नींद सोये हैं और किसी ने भिक्षा के लिए हाथ बढ़ाया है, तो बहुत असम्भव है कि आप अपने हाथ को देने से रोक सकें। इसलिए भिखारी सुबह आपके घर मांगने आते है, शाम को नही आते। क्योंकि सुबह सम्भावना मिलने की है, शाम को कोई सम्भावना नही है। यह बहुत मनोवैज्ञानिक है।

भिखारी यों ही सुबह आपके घर नही आते। शाम को नही आता है, शाम का कोई मतलब नही है। शाम को आप थके होंगे और शरीर इतना गलत हालत मे होगा कि आप शायद ही किसी को कुछ दे सकें। इसलिए वह सुबह आता है। अभी सूरज उग रहा है, आप नहाये होंगे, किसी ने घर मे प्रार्थना की होगी। वह बाहर आकर बैठा है। अभी इनकार करना बहुत मुश्किल होगा।

शरीर को ठीक विश्राम मिले, तो आपका व्यवहार बदलता है। इसलिए हमने आहार और विहार को सयुक्त माना है हमेशा से। जैसा आहार होगा, वैसा विहार होगा। अगर उन दोनो मे सात्विकता होगी, तो जीवन मे बड़ी शांति और बड़ा आन्तरिक प्रवेश होना शुरू हो जाता है।

स्वास्थ्य की एक भूमिका बहुत जरूरी है। उसके लिए सम्यक् आहार, सम्यक् व्यायाम और सम्यक् विश्राम, इनको आप बुनियादी हिस्से मानें। विश्राम भी करने के लिए कुछ समझ चाहिए। जैसे व्यायाम करने के लिए कुछ समझ चाहिए, वैसे ही विश्राम करने के लिए भी समझ चाहिए— शरीर को छोड़ने की समझ चाहिए।

शरीर ऐसे शुद्ध होगा। और शरीर शुद्ध होगा, तो शरीर की शुद्धि सो अपने आप मे एक अद्भुत आनन्द है। और उस आनन्द मे फिर अन्तर-प्रवेश सरल होता है। यह पहला चरण हुआ।

दूसरे दो चरण है भूमिका के— विचार-शुद्धि और भाव-शुद्धि। उनको मैं अलग से बात करूँगा।

तीन चरण होंगे साधना की परिधि के— शरीर-शुद्धि, विचार-शुद्धि, भाव-शुद्धि। और तीन चरण होंगे केन्द्र के— शरीर-शून्यता, विचार-शून्यता

और भाव-शून्यता। ये छह चरण जब पूरे होते है, तो समाधि घटित होती है। उनकी हम क्रमश बात करेंगे। लेकिन केवल बाते सुनना काफी नही होगा, इस पर आप विचार करेंगे, इसे समझेंगे और इसका प्रयोग करेंगे।

मै जो कुछ कह रहा हूँ, वह सब प्रयोग करने की बात है। प्रयोग करेंगे तो ही उसका अर्थ खुलेगा। अन्यथा मेरी बातचीत से तो कोई अर्थ नही खुलता।

४. आपके प्रश्न : भगवान्श्री रजनीश के उत्तर

(गीता, अध्याय-१२, "भक्ति-योग" पर भगवान्श्री रजनीश द्वारा दिनांक १६ एव २३ मार्च, १९७३ को बम्बई मे दिये गये दो प्रवचनो का मुख्य अश)

एक मित्र ने पूछा है—

"क्या बन्दरों की तरह उछल-कूद से ध्यान उपलब्ध हो सकेगा ?"

क्योंकि आप बन्दर है, इसलिए बिना उछल-कूद के आपके भीतर के बन्दर से छुटकारा नही। यह ध्यान के कारण उछल-कूद की जरूरत नही है, आपके बन्दरपन के कारण है। जो आपके भीतर छिपा है, उसे जन्मों-जन्मो तक दबाये रहे, तो भी उससे छुटकारा नही है। उसे झाड ही देना होगा, उसे बाहर फेंक ही देना होगा। कचरे को दबा लेने से कोई मुक्ति नही होती उसे झाड-बुहारकर बाहर कर देना जरूरी है।

बन्दर को शान्त करने के दो रास्ते है एक रास्ता है कि जोर-जबरदस्ती से उसे बिठा दो— डण्डे के डर मे, कि हिलना मत, डुलना मत, नाचना मत, कूदना मत। ऊपर से बन्दर अपने को सम्हाल लेगा, लेकिन भीतर के बन्दर का क्या होगा ? ऊपर से बन्दर अपने को रोक लेगा, लेकिन भीतर और शक्ति इकट्ठी हो जायेगी। और अगर इस तरह बन्दर को दबाया, तो बन्दर पागल हो जायेगा। बहुत लोग इसी तरह पागल हुए है। पागलखाने उनसे भरे पडे है, क्योंकि भीतर जो शक्ति थी, उन्होने जबरदस्ती दबा ली, वह शक्ति विस्फोटक हो गयी।

एक रास्ता यह है कि बन्दर को नचाओ, कुदाओ, दौडाओ। बन्दर थक जायगा और शान्त होकर बैठ जायेगा। वह शान्ति अलग होगी, ऊपर से दबाकर आ गयी शान्ति अलग होगी।

आज मनोविज्ञान इस बात को बड़ी गहराई से स्वीकार करता है कि आदमी के भीतर जो भी मनोवेग है, उनका रिप्रेशन, उनका दमन खतरनाक है। उनकी अभिव्यक्ति योग्य है। लेकिन अभिव्यक्ति का मतलब किसी पर क्रोध करना नही है, किसी पर हिंसा करना नही है। अभिव्यक्ति का अर्थ है बिना किसी के सन्दर्भ मे मनोवेग को आकाश मे समर्पित कर देना। और जब मनोवेग समर्पित हो जाता है और भीतर की दबी हुई शक्ति छूट जाती है, मुक्त हो जाती है, तो एक शान्ति भीतर फलित होती है। उस शान्ति मे ध्यान की तरफ जाना आसान है।

यह उछल-कूद ध्यान नही है। लेकिन उछल-कूद से आपके भीतर की उछल-कूद थोड़ी देर को रुक जाती है, बाहर हट जाती है। उस मौन के क्षण मे जब बन्दर थक गया है, भीतर उतरना आसान है।

जो लोग आधुनिक मनोविज्ञान से परिचित हैं, वे इस बात को बहुत ठीक-से समझ सकेंगे। पश्चिम मे अभी एक नयी थैरेपी, एक नयी मनोचिकित्सा का ढग विकसित हुआ है। उस थैरेपी का नाम है 'स्क्रीम थैरपी'। और पश्चिम के बड़े-से-बड़े मनोवैज्ञानिक उसके परिणामो से आश्चर्यचकित रह गये है। इस थैरेपी, इस चिकित्सा की मूल खोज यह है कि बचपन मे ही प्रत्येक व्यक्ति अपने रोने के भाव को दबा रहा है। रोने का उसे मौका नही मिला है। पैदा होने के बाद पहला काम बच्चा करता है—रोने का। आपको पता है, अगर आप उसको दबा दे तो बच्चा मर ही जायेगा!

पहला काम बच्चा करता है रोने का, क्योंकि रोने की प्रक्रिया मे ही उसकी श्वास चलनी शुरू होती है। अगर हम उसे वही रोक दें कि रो मत, तो वह मरा हुआ ही रहेगा, वह जिन्दा ही नही हो पायेगा। इसलिए बच्चा पैदा हो और अगर न रोये, तो माँ-बाप चिन्तित हो जाएँगे, डॉक्टर परेशान हो जायेगा। रुलाने की कोशिश की जायेगी कि वह रो ले, क्योकि रोने से उसकी जीवन-प्रक्रिया शुरू होगी। लेकिन बच्चे को तो हम रोकते भी नही।

लेकिन जैसे-जैसे बच्चा बढने लगता है; हम उसके रोने की प्रक्रिया को रोकने लगते है। हमे इस बात का पता नही है कि इस जगत् मे ऐसी कोई

भी चीज नही है जिसका जीवन मे कोई उपयोग न हो, अगर उपयोग न होता, तो वह होती ही नही ।

मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि बच्चे के रोने की जो कला है, वह उसके तनाव से मुक्त होने की व्यवस्था है । और बच्चे पर बहुत तनाव है । बच्चे को भूख लगी है और माँ दूर है या माँ काम मे उलझी है । बच्चे को भी क्रोध आता है और अगर बच्चा रो ले, तो उसका क्रोध बह जाता है और बच्चा हल्का हो जाता है । लेकिन माँ उसे रोने नही देती ।

मनस्विद कहते है कि उसे रोने देना, उसे प्रेम देना, लेकिन उनके रोने को रोकने की कोशिश मत करना । हम क्या करेगे ? बच्चे को खिलौना पकडा देगे कि मन रो । बच्चे का मन डाइवर्ट (अन्यत्र) हो जायेगा । वह खिलौना पकड़ लेगा । लेकिन रोने की जो प्रक्रिया भीतर चल रही थी, वह रुक गयी और जो आँसू बहने चाहिए थे, वे अटक गये । और जो हृदय हल्का हो जाता बोझ मे वह हल्का नही हो पायेगा । वह खिलौने मे खेल लेगा, लेकिन यह जो रोना रुक गया, उसका क्या होगा ? यह विष इकट्ठा हो रहा है ।

मनस्विद कहते है कि बच्चा इस तरह बहुत विष इकट्ठा कर लेता है, वही उसकी जिन्दगी मे दुख का कारण है और वह उदास रहेगा । आप इतने उदास दिख रहे है, आपको पता नही कि यह उदासी, हो सकता था, न होती, अगर आप हृदयपूर्वक जीवन मे रोये होते तो ये आँसू आपकी पूरी जिन्दगी पर न छाते, ये निकल गये होते । और सब तरह का रोना थेराप्यूटिक (स्वास्थ्यप्रद) है । हृदय हल्का हो जाता है । रोने मे सिर्फ आँसू ही नही बहते, भीतर का शोक, भीतर का क्रोध, भीतर का हर्ष, भीतर के मनोवेग भी आँसुओ के सहारे बाहर निकल जाते है । और भीतर कुछ इकट्ठा नही होता ।

तो स्क्रीम थेरेपी के लोग कहते है कि जब भी कोई आदमी मानसिक रूप मे बीमार हो, तो उसे इतने गहरे मे रोने की आवश्यकता है कि उसका रोआँ-रोआँ, उसके हृदय का कण-कण, श्वास-श्वास, धड़कन-धड़कन रोने मे सम्मिलित हो जाये, एक ऐसे चीत्कार की जरूरत है, जो उसके पूरे प्राणो से निकले— जिसमे वह चीत्कार ही बन जाये ।

हजारों मानसिक रोगी ठीक हुए हैं—चीत्कार से, और एक चीत्कार भी उनके न-मालूम कितने रोगों से उन्हें मुक्त कर जाती है। लेकिन उस चीत्कार को पैदा करवाना बड़ी कठिन बात है। क्योंकि आप इतना दबाये हैं कि आप अगर रोते भी हैं, तो रोना भी आपका झूठा होता है। उसमें आपके पूरे प्राण सम्मिलित नहीं होते। आपका रोना भी बनावटी होता है। ऊपर-ऊपर रो लेते हैं। आँख से ही आँसू बह जाते हैं, हृदय से नहीं आते। लेकिन चीत्कार ऐसी चाहिए, जो आपकी नाभि से उठे और आपका पूरा शरीर उसमें समाविष्ट हो जाये। आप भूल भी जाएँ कि आप चीत्कार से अलग हैं, आप एक चीत्कार ही हो जाएँ।

तो कोई तीन महीने लगते हैं मनोवैज्ञानिकों को, आपको रोना सिखाने के लिए। तीन महीने निरन्तर प्रयोग करके आपको गहरा किया जाता है।

करते क्या हैं 'प्रीमल थैरेपी' वाले लोग? आपको छाती के बल लिटा देते हैं जमीन पर। और आपसे कहते हैं कि जमीन पर पड़े रहें और जो भी दुख मन में आता हो, उसे रोकें मत, उसे निकालें। रोने का मन हो रोएँ, चिल्लाने का मन हो चिल्लाएँ। तीन महीने तक ऐसा बच्चे की भाँति आदमी लेटा रहता है जमीन पर— रोज घन्टा, दो घन्टे। एक दिन, किसी दिन वह घड़ी आ जाती है कि उसके हाथ-पैर कँपने लगते हैं— विद्युत के प्रवाह में। वह आदमी आँख बन्द कर लेता है, वह आदमी जैसे होश में नहीं रह जाता और एक भयंकर चीत्कार उठनी शुरू होती है। कभी-कभी घन्टों वह चीत्कार चलती है। आदमी बिल्कुल पागल मालूम पड़ता है, लेकिन उस चीत्कार के बाद उसकी जो-जो मानसिक तकलीफें थीं, वे सब तिरोहित हो जाती हैं।

यह जो सक्रिय-ध्यान का प्रयोग मैं करवाता हूँ, जब तक आपके सब मनोवेग—रोने के, हँसने के, नाचने के, चिल्लाने के, चीखने के, पागल होने के, इनका निरसन न हो जाये, तब तक आप ध्यान में जा नहीं सकते। यही तो बाधाएँ हैं।

आप शान्त होने की कोशिश कर रहे हैं और आपके भीतर वेग भरे हुए

हैं, जो बाहर निकलना चाहते हैं। आपकी हालत ऐसी है, जैसे केतली चढ़ी है चाय की, ढक्कन बन्द है। ढक्कन पर पत्थर रखे हैं, केतली का मुँह भी बन्द किया हुआ है और नीचे से आग भी जल रही है। वह जो भाप इकट्ठी हो रही है, वह फोड़ देगी केतली को। विस्फोट होगा। दस-पाँच लोगों की हत्या भी हो सकती है। इस भाप को निकल जाने दें। इस भाप के निकलते ही आप नये हो जाएँगे और तब ध्यान की तरफ प्रयोग शुरू हो सकता है।

उन मित्र ने यह भी पूछा है कि बुद्ध ने, महावीर और लाओत्से ने भी क्या ऐसी ही बात सिखायी है?

नहीं, लाओत्से और बुद्ध और महावीर ने ऐसी बात नहीं सिखायी, क्योंकि वे आपको नहीं सिखा रहे थे, वे दूसरी तरह के लोगों को सिखा रहे थे। आप मौजूद होते तो उनको भी यही सिखाना पड़ता। बुद्ध और महावीर जिन लोगों से बात कर रहे थे, वे ग्रामीण लोग थे— सीधे, शान्त, सरल, निर्दोष, स्वाभाविक। उन्होंने कुछ दमन नहीं किया हुआ था। उन्होंने कुछ रोका नहीं था। जितना आदमी सभ्य होता है, उतना आदमी दमित होता है। सभ्यता दमन का एक प्रयोग है।

फ्रायड ने तो यह स्वीकार किया है कि सभ्यता हो ही नहीं सकती, अगर दमन न हो। इसलिए आप देखें एक मजे की घटना। आदिवासी सरल हैं, लेकिन वे सभ्य नहीं हो सकते। दुनिया में छोटे-छोटे कबीले हैं जंगली लोगों के। बड़े अच्छे लोग हैं, प्यारे लोग हैं, सरल हैं, आनन्दित हैं, लेकिन सभ्य नहीं हो पाते। आप समझते हैं, क्या कारण है? आखिर जितनी भी अच्छी कौमें हैं, अच्छी जातियाँ हैं, जंगलों में छिपी हुई, जो निर्दोष हैं, वे सभ्य क्यों नहीं हो पातीं? न्यूयार्क और बम्बई-जैसे नगर वे क्यों नहीं बसा पातीं? आकाश में हवाई जहाज क्यों नहीं उड़ा पातीं? चाँद पर क्यों नहीं पहुँच पातीं? एटम और हाइड्रोजन बम क्यों नहीं खोज पातीं? रेडियो और टेलीविजन क्यों नहीं बना पातीं? ये अच्छे लोग, शान्त लोग नाचते तो हैं, लेकिन चाँद पर नहीं पहुँच पाते। गीत तो गाते हैं, लेकिन एटम बम नहीं बना पाते। खाने को भी मुश्किल से जुटा पाते हैं। कपड़ा भी न के बराबर— अर्धनग्न। आधे भूखे, लेकिन हैं निर्दोष। चोरी नहीं करते, झूठ

नही बोलते, वचन दे तो प्राण भी चले जाएँ तो भी पूरा करते है, लेकिन ये लोग सभ्य क्यो नही हो पाते, समृद्ध क्यो नही हो पाते ?

तो फ्रायड का कहना है, और ठीक कहना है, कि ये लोग इतने आनन्दित है और इतने सरल है कि उनके भीतर भाप इकट्ठी नही हो पाती जिससे सभ्यता का इंजन चलता है। इनका क्रोध इकट्ठा नही हो पाता, घृणा इकट्ठी नही हो पाती, काम-वासना इकट्ठी नही हो पाती, वही इकट्ठी हो जाये तो उसी स्टीम, उसी भाप को फिर दूसरी तरफ मोडा जा सकता है। तो फिर उससे ही मकान जमीन से उठना शुरू होता है, आकाश तक पहुँचना जाता है। वह आपके दमित वेगो की भाप है। नही तो झोपडे मे आप आकाश छूनेवाले मकान तक नही जा सकते।

यह सारी-की-सारी सभ्यता डाइवर्शन (मार्ग-परिवर्तन) है— आपकी शक्तियो का। इसलिए परिणाम साफ है कि कोई आदमी सरल हो, शान्त हो, स्वाभाविक हो, तो सभ्यता का यह जाल खडा नही हो सकता और सभ्यता का जाल खडा करना हो, तो आपके भीतर जितना उपद्रव है, उसके निकलने के सब द्वार बन्द करना जरूरी है, सब द्वार बन्द करके उसे एक ही द्वार मे निकलने देना जरूरी है। इसलिए हमारी शिक्षा की सारी प्रक्रिया आपकी समस्त तरह की वासनाओ को इकट्ठा करके महत्त्वाकाँक्षा मे लगाने की प्रक्रिया है, सारी वासनाओ को इकट्ठा करके अहकार की पूर्ति की दिशा मे दौडाने की प्रक्रिया है।

इसलिए फ्रायड ने यह भी कहा है कि अगर हम आदमी को सरल बनाने मे सफल हो जाएँ, तो वह पुन असभ्य हो जायगा। अब यह बडी कठिनाई है। अगर सभ्यता चाहिए तो आदमी जटिल होगा, रुग्ण होगा, विक्षिप्त होगा। अगर शान्ति चाहिए, आनन्द चाहिए, स्वाभाविकता चाहिए, तो सभ्यता खो जायगी— आदमी गरीब होगा, प्रसन्न होगा— समृद्ध नही हो सकता।

तो फ्रायड ने तो यह कहा है कि आदमी एक असम्भव बीमारी है। या तो यह गरीब होगा, सभ्यता के सुख इसे नही मिल सकेंगे, सभ्यता की समृद्धि इसे नही मिल सकेगी। और अगर यह समृद्ध होगा तो यह पागल हो जायेगा,

विक्षिप्त हो जायेगा, शान्त नही रह जायेगा।

बुद्ध और महावीर जिनको समझा रहे थे, वे बडे सरल लोग थे। उनका कुछ दबा हुआ नही था, इसलिए उन्हे ध्यान मे सीधे ले जाया जा सकता था। आप सीधे ध्यान मे नही ले जाये जा सकते। आप बहुत जटिल हैं। आप उलझन हैं एक। पहले तो आपकी उलझन को सुलझाना पडेगा और आपकी जटिलता कम करनी पडेगी और आपके रोगो से थोडा छुटकारा करना पडेगा। टेम्परेरी ही सही। चाहे अस्थायी हो हो, लेकिन थोडी देर के लिए आपकी भाप को अलग कर देना जरूरी है— जो आपको उलझाये हुए है— तो आप ध्यान की तरफ मुड सकते है, अन्यथा आप नही मुड सकते।

इसलिए दुनिया की सारी पुरानी पद्धतियाँ ध्यान की, आपके कारण व्यर्थ हो गयी है। आज उनसे कोई काम नही हो रहा। आपमे सौ मे से कभी एकाध आदमी मुश्किल से होता है, जिसको पुरानी पद्धति पुराने ही ढग मे काम कर पाये। निन्यानबे आदमियो के लिए कोई पुरानी पद्धति काम नही कर पाती। उसका कारण यह नही कि पुरानी पद्धतियाँ गलत हैं। उसका कुल कारण इतना है कि आदमी नया है और पद्धतियाँ जिन आदमियो के लिए विकसित की गयी थी, वे पृथ्वी से खो गये। आदमी दूसरा है। यह जो इलाज है, यह आपके लिए विकसित नही हुआ था। आपने इस बीच नयी बीमारियाँ इकट्ठी कर ली है।

तीन हजार, चार हजार, पाँच हजार साल पहले ध्यान के जो प्रयोग विकसित हुए थे, वे उस आदमी के लिए थे, जो मौजूद था। वह आदमी अब नही है। उस आदमी का जमीन पर कही कोई निशान नही रह गया है। अगर कही दूर जगलो मे थोडे-से लोग मिल जाते है, तो हम उनको जल्दी से शिक्षित करके सभ्य बनाने की पूरी कोशिश मे लगे है और हम सोचते है, हम बडी कृपा कर रहे है, उनकी सेवा करके।

अभी एक महिला मेरे पास आयी। अपना जीवन लगा दिया है— आदिवासियो को शिक्षित करने मे। वह मेरे पास आयी थी कि कुछ रास्ते बताइए कि हम आदिवासियो को कैसे सभ्य बनाएँ। मैने उससे पूछा कि पहले तू मुझे यह बता कि जो सभ्य हो गये हैं— ज्यादा-से-ज्यादा आदिवासी भी

सभ्य होकर यही हो पाएँगे, और क्या होगा। तो तुझे क्या परेशानी हो रही है! और ये जो सभ्य लोग दिखाई पड रहे हैं, क्या इनसे तुझे तृप्ति है कि थोडे आदिवासियो को इन्ही-जैसा बना देने से कोई दुनिया का गौरव और कोई सुख-शान्ति बढ जायेगी ?

तो वह बहुत घबरा गयी। उसने कहा, 'मैने अपने जीवन के तीस साल इसी मे लगा दिये, लेकिन मुझे कभी किसी ने यह कहा नही। यह मै सोचती हूँ तो घबराहट होती है कि शिक्षित होकर ज्यादा-से-ज्यादा यही होगा।' जो शिक्षित हो गये है, उनको क्या लाभ है ?

मगर उस महिला की भी अपनी मजबूरी है। अपनी काम-वासना को दबा लिया है, विवाह नही किया है, किसी से कभी प्रेम नही किया, ब्रह्मचर्य को माननेवाली है। क्रोध नही करती है, अक्रोध का व्रत लिया है। झूठ नही बोलती है, सच बोलने की कसम खायी है। इस तरह सब भाँति अपने को रोक रखा है। अब वह जो भाप इकट्ठी हो गयी है, उसका क्या करना ? वह जो जीवन-ऊर्जा इकट्ठी हो गयी है, उसका क्या करना ? तो वह पागल की तरह आदिवासियो की सेवा मे लगी है, बिना इसकी फिक्र किये कि सेवा का क्या परिणाम होगा! तुम्हारी भाप तो निकली जा रही है, लेकिन जिन पर निकल रही है, उसका परिणाम क्या है ? क्या फायदा होगा ?

आदमी जैसा आज है, ऐसा आदमी जमीन पर कभी भी नही था। यह बडी नयी घटना है। और इस नयी घटना को सोचकर ध्यान की सारी पद्धतियो मे रेचन, कैथार्सिस का प्रयोग जोडना अनिवार्य हो गया है। इसके पहले कि आप ध्यान मे उतरें, आपका रेचन हो जाना जरूरी है। आपकी धूल हट जानी जरूरी है।

लेकिन वे प्रश्नकर्ता मित्र समझदार है। और उन्होने लिखा है कि 'आप हम धोखा न दे पाएँगे। इस उछल-कूद से कोई भी लाभ होनेवाला नही।'

एक बात तो पक्की है कि उन्होने उछल-कूद नही की और वही उछल-कूद जो बच गयी है, उनके इस प्रश्न मे निकली है। वे कर लेते तो हल्के हो जाते। और बन्दर उनके पास निश्चित है और गहरा है। चैन नही पडी

उनको रात जाकर। वे बेचैन रहे होंगे रातभर, शायद सोये भी न हो, क्योंकि बड़े क्रोध से प्रश्न लिखा है। प्रश्न कम है, गाली-गलौज ज्यादा है। इससे तो बेहतर था कि यहाँ निकाल ली होती, तो रात हल्के हो के सो गये होते और प्रश्न मे गाली-गलौज न होता।

और मै आपको धोखा दे रहा हूँ! क्या प्रयोजन हो सकता है? और आपके नाचने से मुझे क्या लाभ होगा? और आप बन्दर की तरह उछल-कूद कर लेंगे, तो किसका हित सधनेवाला है?

लिखा है कि 'आप हमे धोखा न दे पाएँगे।' पर तुम्हे धोखा देने की जरूरत भी क्या है? प्रयोजन भी क्या है? पर वे यह कह रहे है कि हम धोखे मे न आएँगे। वे असल मे यह कह रहे है कि हम धोखे मे न आएँगे, हम ऐसे ही रहेंगे। हम किसी को बदलने का कोई मौका न देंगे।

मौका मत दे। आपकी मर्जी है। आप अपने मे प्रसन्न हो, तो यहाँ मुझे सुनने आने की भी क्या जरूरत है? आप जैसे है, भले है। आपको यहाँ परेशान होने की भी क्या जरूरत है! आपको ध्यान मे आने की भी क्या जरूरत है! लेकिन अगर आने की कोई जरूरत है, अगर चिकित्सक के पास आप जाते है, तो बीमार है, इस बात की खबर देते है। मैं एक चिकित्सक हूँ, इससे ज्यादा नही।

अगर आप मेरे पास आते है, तो आप बीमार होने की खबर देते है और आपकी बीमारी को अगर अलग करने के लिए मै कोई दवा बनाऊँ तो आप कहते है 'आप हमे धोखा न दे पाओगे।' तो आने की कोई जरूरत नही है। आप अपने घर मजे मे है। किसी दिन मुझे जरूरत होगी, तो मैं आपके घर आ जाऊँगा, लेकिन आप मत आएँ। आप अपने को बचाएँ। आप जितना अपने को बचाएँगे, उतना ही लाभ होगा। क्योकि उतने ही आप परेशान होंगे, पीडित होंगे, पागल होंगे। और जिस दिन बात सीमा के बाहर चला जाये, उस दिन कही बिजली के शॉक आपको लगाने पडेंगे। मैं कहता हूँ अभी कूद ले, ताकि बिजली के शॉक न लगाने पडे, और अभी कूद लें, ताकि आपको पागलखाने मे न बिठाना पडे। अपने पागलपन को अपने ही हाथ से

बाहर फेंक दें, ताकि किसी और को आपके पागलपन को फेंकने के लिए कोई उपाय और कोई तरकीब न करनी पडे। लेकिन आप नही सोचते। इसे हम कई तरह से समझने की कोशिश करें

सिर्फ इगलैंड एक मुल्क है, जहाँ के स्कूल के बच्चे पत्थर नही फेंक रहे है, सारी दुनिया के बच्चो द्वारा पत्थर फेंके जा रहे है। सिर्फ इगलैंड अकेला मुल्क है, जहाँ के बच्चे स्कूल मे शिक्षको को पत्थर नही मार रहे है, गाली नही दे रहे है, परेशान नही कर रहे हैं। तो सारी दुनिया के विचारशील लोग परेशान है कि इगलैंड मे यह क्यो नही हो रहा है। सारी दुनिया मे बडे पैमाने पर हो रहा है। तो एक बात खोजी गयी और वह यह कि इगलैंड के हर स्कूल मे बच्चे को कम-से-कम दो घन्टे खेल खेलना पड रहा है। वही कारण है और कोई कारण नही है।

जो बच्चा दो घन्टे तक हॉकी की चोट मार रहा है, वह पत्थर फेंकने मे उत्सुक नही रह जाता। उसने फेंकने का काम पूरा कर लिया। जो बच्चा फुटबाल को लात मार रहा है— दो घन्टे तक, उसकी इच्छा नही रह जाती अब, किसी को लात मारने की। किसी को लात मारने की वासना निकल गयी।

इगलैंड के मनोवैज्ञानिको का सुझाव है कि सारी दुनिया मे अगर बच्चो के उपद्रव रोकने है, तो उनको खेलने की गहन प्रक्रियाएँ देनी होगी, जिनमे उनकी हिंसा निकल जाये। और बच्चो मे बडी हिंसा है, क्योकि बच्चो मे बडी ताकत है। हमारे स्कूल मे बच्चा क्या कर रहा है? पाँच-छह घन्टे आप उसको बिठाए रखते है। कोई बच्चा प्रकृति से पाँच-छह घन्टे एक क्लास के रूम मे बैठने को पैदा नही हुआ है। प्रकृति ने कोई इन्तजाम नही किया है, कोई बिल्ट-इन व्यवस्था नही है भीतर, कि छह घन्टे बच्चे को बिठाया जा सके। छह घन्टे बच्चे को बिठाने का मतलब है कि छह घन्टे जो शक्ति प्रकट होना चाहती थी, वह रुक रही है।

स्कूल से बच्चे जब छूटते है तो जरा उनको देखें। जैसे ही छुट्टी होती है, लगता है वे नर्क से छूटे— उछाल रहे है बस्ते को, फेंक रहे हैं किताबो को और इतने आनन्दित हो रहे है कि जैसे जीवन मिल गया।

आपने जरूर उसके साथ कोई अपराध किया है पाँच-छह घन्टे। नही तो उन्हे इतनी खुशी स्कूल से छूटकर न मिलती। और यह अपराध जारी रहेगा। यह बीस साल की उम्र, पच्चीस साल की उम्र तक जारी रहेगा। धीरे-धीरे वे इसी दबी हुई व्यवस्था के लिए राजी हो जाएँगे। फिर उनका सारा जीवन गडबड हो जायेगा। क्योकि ऊर्जा जो दब गयी और प्रकट होने का जिसे मार्ग न मिला, वह क्रोध बन जाती है, हिंसा बन जाती है। फिर नये-नये मार्गों से मार्ग खोजती है। फिर वे सब तरह के उपद्रव करेंगे। फिर वे किसी छोटी-सी बात का बहाना ले लेंगे और उनकी हिंसा बाहर होने लगेगी।

हम सब हिंसा से भरे हुए लोग है। लेकिन अगर समझपूर्वक समझा जाये और जीवन को बदलने की ठीक व्यवस्था का ख्याल रखा जाये, तो हिंसा भी सृजनात्मक हो सकती है। हिंसा भी क्रिएटिव हो सकती है। और क्रोध से भी फूल खिल सकते है, अगर अकल हो।

यह जो मैं आपसे कह रहा हूँ— ध्यान का प्रयोग, यह आपकी हिंसा, आपके क्रोध, आपकी काम-वासना, आपकी घृणा, इनको सृजनात्मक रूप से रूपान्तरित करने का प्रयोग है। यह क्रिएटिव ट्रॉन्सफार्मेशन है।

आपका लक्ष्य ध्यान है। अगर आप चीख भी रहे है, तो आपका लक्ष्य ध्यान है। आपके चीखने की ऊर्जा भी ध्यान की तरफ प्रवाहित हो रही है। अगर आप अपने क्रोध को भी फेंक रहे है, नाराजगी को भी फेक रहे है, रोने और दुख को भी फेक रहे हैं, तो भी आपका लक्ष्य ध्यान है। यह ऊर्जा ध्यान की तरफ प्रवाहित हो रही है।

अगर आप थोडे दिन तैयार हो जाएँ— मुझसे धोखा खाने को— आप अपने से तो धोखा खा ही रहे हैं, बहुत दिन से— तो यह भी प्रयोग कर लेने जैसा है। तीन महीने मे आपसे कुछ छीन न लूँगा, क्योकि आपके पास कुछ है भी नही, जो छीना जा सके।

मेरी दृष्टि मे तो आपके पास ऐसी कोई मूल्यवान् चीज नही है, जो छीनी जा सके। आपके पास है, तो उसे सम्हालकर आप रखें। मेरे-जैसे लोगो के पास न आएँ, क्योकि ऐसे लोग आपको बदलने की कोशिश मे ही लगे हुए है।

तीन महीने इस प्रयोग को करके देखे। तीन दिन के बाद आपको फर्क दिखाई पडने शुरू हो जाएँगे। और ऐसा नही कि एक मित्र ने ही पत्र लिखा है, पाँच-सात उन मित्रो के भी पत्र हैं, जिनको कल के प्रयोग से पहली दफे ही परिणाम दिखाई पडना शुरू हुआ। वे बुद्धिमान लोग है। हालाँकि इन मित्रो ने लिखा है कि हम बुद्धिमानो को आप धोखा नही दे पाएँगे। मगर बुद्धिमान् वह है, जो प्रयोग करके कुछ कहता है। बुद्धिहीन वह है, जो बिना प्रयोग किये कुछ कहता है।

बिना प्रयोग किय आपकी बात का कोई मूल्य ही नही है।

पाँच-सात मित्रो ने लिखा है । एक मित्र ने लिखा है कि मुझे इतनी शान्ति कभी अनुभव नही हुई, लेकिन बीस मिनट तक मुझसे आवाजें निकलती रही, जिनका मुझे ही भरोसा नही कि मेरे भीतर कहाँ से आयी! क्योकि इस तरह की आवाजे मैने कभी नही की।

आपने न की हो, लेकिन आप करना चाहते हे। आपके भीतर वे दबी पडी है और आप कही भी कर नही सकते थे। कही भी करते, तो आप पागल समझे जाते। यहाँ आप कर रहे थे, तो आपको ख्याल था कि आप ध्यान मे जा रहे है, तो आपने अपने को खुला छोड दिया। इस खुले-भाव से जो भीतर दबा था, वह निकल गया। जैसे मवाद निकल गयी हो घाव से। और भीतर घाव हलका और भरने के लिए तैयार हो गया हो। उन मित्र ने लिखा है कि ऐसी शान्ति मुझे जीवन से कभी भी नही मिली।

एक मित्र ने लिखा है कि आश्चर्यचकित हूँ कि इस भाँति नाचने-कूदने मे आनन्द का भाव कैसे आया?

जब आप नाचते-कूदते है हृदयपूर्वक— नकली नाचते-कूदते हो, तो कोई बहुत फर्क नही होगा, कवायद होगी, थोडा व्यायाम हो जायेगा— लेकिन अगर हृदयपूर्वक नाचते हो, तो आप पुन बच्चे हो गये। आप फिर बचपन मे लौट गये। आप फिर छोटे बच्चे की तरह सरल हो गये और बच्चे जिस आनन्द की झलक को देख पाते है, उसको आप भी देख पा रहे हैं।

सन्तो ने कहा है कि बुढापे मे जो पुन बच्चो की भाँति हो जाएँ, वे ही

सन्न हैं। आप छोटे बच्चे की भाँति हो गये। इतने लोगो के सामने छोटा बच्चा भी शर्माएगा नाचने मे। और आप नाचे-कूदे, तो आपने भय छोड दिया। 'दूसरो के मन्तव्य का भय' छोड दिया। दूसरे क्या कहेंगे— यह भय छोड दिया।

बच्चो मे यह भय नही होता। दूसरे क्या कहेगे—उसे प्रयोजन नही है, उसके लिए जो आनन्दपूर्ण होता है, वह करता है। जैसे-जैसे बडा होता है, खुद के आनन्द की फिक्र छोड देता है, 'दूसरे क्या कहेगे', इसका चिन्तन करने लगता है। बस, यही बच्चे की विकृति है।

आप फिर बच्चे हो गये और आपने सारी फिक्र छोड दी। आप पुन अकेले हो गये, समाज से मुक्त हो गये। जैसे ही आपने चिन्ता छोडी कि कोई क्या कहेगा, उससे यह जो हल्कापन भीतर आया, उस हल्केपन मे आनन्द की झलक बिलकुल आसान है। और बच्चे की तरह जो फिर से हो जाये, वह परमात्मा को यही अनुभव करने लगेगा— चारो ओर। लेकिन बुद्धिमान, अतिशय बुद्धिमान्,

मैने सुना है कि मुल्ला नसरुद्दीन को एक लॉटरी मिल गयी। पाँच लाख रुपये जीत लिये। सारा गाँव चकित था। सारे गाँव के लोग इकट्ठे हो गये। और लोग मुल्ला से पूछने लगे कि तुमने यही नम्बर कैसे चुना! गाँव का जो बुद्धिमान् था, उससे सबने कहा कि हमारी तरफ से तुम्ही पूछ लो। तो गाँव का जो बुद्धिमान् आदमी था, उसने सबकी तरफ से मुल्ला से पूछा कि पूरा गाँव एक ही जिज्ञासा से भरा है कि यह उनहत्तर, सिक्सटी नाइन नम्बर तुमने कैसे चुना, किस तरकीब से?

तो मुल्ला ने कहा, "तुम पूछते हो तो मैं तुम्हे बता देता हूँ। एक स्वप्न मे मुझे यह नम्बर प्रकट हुआ। एक स्वप्न मैने देखा रात मे कि मैं एक नाटक देख रहा हूँ और वहाँ मच पर सात कतारें नर्तकियो की खडी है और हर कतार मे सात नर्तकियाँ हैं। वे सब नाच रही है तो सात सतैयाँ उनहत्तर— ऐसा मैने सोचा और सुबह मैने उनहत्तर नम्बर की टिकट खरीद ली।"

पर, उस बुद्धिमान् आदमी ने कहा—"अरे, पागल! सात सतैया उनहत्तर होते ही नही, सात सतैयाँ तो होते हैं उन्चास—फॉर्टी नाइन"।

तो मुल्ला नसरुद्दीन ने कहा, "ओ० के०, सो यू बी दि मैथिमेटीशियन। तो तुम गणितज्ञ हो जाओ, लेकिन लॉट्री मैने जीती है।"

वह जो नाच रहा है, कूद रहा है, वह आपसे कहेगा सो यू बी दि वाइज मैन, यू बी दि मैथमेटीशियन वह आपकी फिक्र नही करेगा। न मीरा ने आपकी फिक्र की है, न चैतन्य ने आपकी फिक्र की है। वे नाच लिये है और वे आपसे कहते हैं, "आप हो जाओ बुद्धिमान्, हमे रहने दो पागल। क्योकि हमे पागलपन मे जो मिल रहा है, वह हमे नही दिखता कि तुम्हारी बुद्धिमानी मे भी तुम्हे मिल रहा है।"

और एक ही सबूत है बुद्धिमानी का— क्या मिल रहा है ?

बुद्धिमान् कौन है ? बुद्धिमानी का एक ही सबूत है कि क्या मिल रहा है जीवन मे— कितना आनन्द, कितना रस, कितना सौन्दर्य, कितना सत्य, कितना परमात्मा। और कोई सबूत बुद्धिमानी का नही है।

तो मै तो आपसे कहूँगा, जिनको बुद्धिमान् रहना हो, मजे से बुद्धिमान् रहे। लेकिन जिनको जीवन का रस जानना हो, उन्हे सस्ती बुद्धिमानी से बचना जरूरी है।

हाँ, मै यह नही कहता कि आप मेरी बात मानकर नाचते-कूदते रहे। वह बुद्धिमानी नही है। मैं आपसे यह कहता हूँ कि मै जो कह रहा हूँ, उसे करके देख लें और अगर लगता हो कि कुछ है, तो आगे बढ जाएँ, और लगता हो कि इसमे कुछ नही है, तो छोड दें। कौन रोकता है आपको छोडने मे। लेकिन छोडने के पहले परख लेना जरूरी है। और किसी भी चीज मे 'कुछ नही है', ऐसी धारणा बनाने के पहले प्रवेश करना जरूरी है। अनुभव के पहले जो निर्णय लेना है, वह अन्धा है।

एक मित्र ने पूछा है कि आपने बताया कि बेहोशी मे किया गया कृत्य पाप है। लेकिन भाव से भी तो बेहोशी होती है। कृपया समाधान कीजिये।

बेहोशी, बेहोशी मे बडा फर्क है। एक बेहोशी नीद मे होती है, तब आपको कुछ भी पता नही होता। एक बेहोशी शराब पीने से भी होती है, तब भी आपको कुछ पता नही होता। एक बेहोशी भाव से भी होती है—आप

पूरे बेहोश भी होते हैं और आपको पूरा पता भी होता है। जब आप मग्न होकर गीत मे नाच रहे होते हैं, तो यह नृत्य भी होता है, इस नृत्य मे पूरा डूबा हुआ होना भी होता है और भीतर दीये की तरह चेतना भी जलती है जो जानती है, जो देखती है, जो साक्षी होती है।

अगर आपके भाव मे बेहोशी शराब-जैसी आ जाये, तो आप समझना कि चूक गये। तो समझना कि यह भाव भी फिर शराब ही हो गयी।

प्रार्थना मे बेहोशी का मतलब इतना है कि आप इतने लीन हो गये है कि मैं हूँ—इसका कोई पता नही है। मै हू, इसका कोई शब्द निर्मित नही होता। लेकिन जो भी हो रहा है, उसके आप साक्षी है— जो साक्षी है, उसमे कोई 'मैं' का भाव नही है। और वह जो साक्षी है, वह आप नही है, आप तो लीन हो गये है और आपके लीन होने के बाद जो भीतर आपका असली स्वरूप है, वह भर देखता है।

उस दर्शन मे, उस द्रष्टा के होने मे, जरा भी बेहोशी नही है। भाव की बेहोशी मे आपके जो-जो रोग हैं, वे सो गये होते हैं और आपके भीतर जो शुद्ध चेतन है, वह जाग गया होता है।

जब चैतन्य नाच रहे हैं सडको पर, तो आप यह मत सोचना कि वे बेहोश है। हालाँकि वे कहते है कि मैं बेहोश हूँ और हालाँकि वे कहते है कि हमने शराब पी ली है परमात्मा की। वे सिर्फ इसलिए कहते हैं कि आप इन्ही प्रतीकों को समझ सकते है।

उमर खैयाम ने कहा है कि अब हमने ऐसी शराब पी ली है, जिसका नशा कभी न उतरेगा। और अब बार-बार पीने की कोई जरूरत न रहेगी। अब तो पीकर हम सदा के लिए खो गये है।

शराब का उपयोग किया है, प्रतीक की तरह, क्योंकि आप एक ही तरह का खोना जानते है, जिसमे आपकी सारी चेतना ही शून्य हो जाती है।

भाव मे शराब का थोडा-सा हिस्सा है। उसमे आपकी सब बीमारियाँ सो जाती है— आपका अहकार सो जाता है, आपका मन सो जाता है, आपके विचार सो जाते है। लेकिन आप पूरी तरह से जाग गये होते हैं और भीतर

पूरा होश होता है। लेकिन यह तो अनुभव से ही होगा, तो ही ख्याल मे आयेगा। यह तो जटिल है। यह तो आपको कैसे ख्याल मे आयेगा? भाव मे आयेगा? भाव मे डूबकर देखें।

लेकिन हम डरते है। डर यही होता है कि कही अगर भाव मे पूरा डूब गये, तो जो-जो हमने दबा रखा है, अगर वह बाहर निकल पडा, तो लोग क्या कहेगे। डरते है हम, क्योकि हमने बहुत-कुछ छिपा रखा है। और हमने चारो तरफ से अपने को बाँध रखा है— नियन्त्रण मे। तो कही नियन्त्रण ढीला हो गया और जरा-सा भी कही छिद्र हो गया और हमने जो रोक रखा है, वह बाहर निकल पडा तो! इस भय के कारण हम अपने को कभी छोडते नही, समर्पण नही करते। हम कही भी अपने को शिथिल नही करते। हम चौबीस घन्टे डरे हुए है और अपने को सम्हाले हुए है। तब यह जिन्दगी नर्क-जैसी हो जाती है। इसमे सिवाय सन्ताप के और विष के कुछ भी नही बचता। यह रोग-ही-रोग का विस्तार हो जाता है।

खुले, फूल की तरह खिल जाएँ। माना कि बहुत-सी बीमारियाँ आपके भीतर पडी है, लेकिन आप उनको जितना सम्हाले रखेगे, उतनी ही वे आपके भीतर बढती जाएँगी। उनको भी गिर जाने दें, उनको भी परमात्मा के चरणो मे समर्पित कर दें और आप जल्दी ही पाएँगे कि बीमारिया हट गयी और आपके भीतर फूल का खिलना शुरू हो गया। आपके भीतर का कमल खिलने लगा।

• जिस दिन यह भीतर का कमल खिलना शुरू होता है, उसी दिन पता चलता है कि बेहोशी भी है और होश भी है। एक तल पर हम बिल्कुल बेहोश हो गये है और एक तल पर हम पूरी तरह होशवान् हो गये है। ये घटनाएँ एकसाथ घटती है।

शराब मे हम केवल बेहोश होते है, कोई होश नही होता। इसलिए कुछ साधको ने तो इस भाव की जागरूकता को पाने के बाद शराब पीकर भी देखी है कि क्या हमारी इस भाव की जागरूकता को शराब डुबा सकती है।

आपको पता हो या न हो, योग और तन्त्र के ऐसे सम्प्रदाय रहे है, जहाँ कि शराब भी पिलायी जायेगी। जब भाव की पूरी अवस्था आ जायेगी और साधक कहेगा कि अब मै बाहर से तो बिल्कुल बेहोश हो जाता हूँ, लेकिन

मेरा भीतर होश पूरा बना रहता है, तो फिर गुरु उसको शराब भी पिलायेगा और धीरे-धीरे बेहोशी की मादकता की अफीम भी खिलाएगा। मात्रा बढाई जायेगी और उससे कहा जायेगा कि यहाँ बाहर बेहोशी घेरने लगे, शरीर बेहोश होने लगे, तो भी तू भीतर अपने होश को मत खोना। और यह बात यहाँ तक प्रयोग की गयी है कि जब सब तरह की शराब और सब तरह के मादक द्रव्य पीकर भी साधक भीतर होश से भरा रहता है, तब फिर साँप से भी कटवाते हैं, उसकी जीभ पर—ताकि जब साँप काट ले, उसका जहर भी पूरे शरीर मे फैल जाये, तो भी भीतर का होश जरा भी न डिगे। तभी वे मानते है कि अब साधक ने उस होश को पा लिया, जिसको मौत भी न हिला सकेगी।

पर अनुभव के बिना कुछ ख्याल न आ सकेगा। थोडा भाव मे डूबना सीखे। भाव मे जो डूबता है, वह उबर जाता है—और भाव से जो बचता है, वह डूब ही जाता है, नष्ट ही हो जाता है।

लेकिन कुछ चीजे है, जो समझ मे नही समझायी जा सकती, कोई उपाय नही है। और जितनी भीतर बात होगी, उतना ही अनुभव पर निर्भर रहना पडेगा।

अगर मेरे पैर मे दर्द है, तो आपको मानना पडेगा कि दर्द है। और दूसरा क्या उपाय है उसे सिद्ध करने का! और अगर मै आपको समझाने जाऊँ और आपके पैर मे कभी दर्द न हुआ हो, तो बडी मुश्किल हो जायेगी। मै कितना ही कहूँ कि पैर मे दर्द है, लेकिन आपको अगर दर्द का कोई अनुभव नही है, तो शब्द ही सुनायी पडेगा, अर्थ कुछ भी समझ मे न आयेगा। आपको भी दर्द हो तो ही। अनुभव को शब्द से हस्तान्तरित करने की कोई भी सुगमता नही है।

बुद्ध के पास कोई आया और उसने कहा कि जो आपको हुआ है, वह थोडा मुझे भी समझाएँ। तो बुद्ध ने कहा, "समझा मै न सकूँगा। तुम रुको और वर्षभर जो मैं कहूँ, वह करो, सम्भवत समझ मे आ जाये।" क्योंकि जब तक भीतर प्रतीति न हो इस बात की, कि सब बेहोशी हो गयी है और फिर भी भीतर कोई जागा है, दीया जल रहा है, तब तक कैसे समझेंगे। तब तक आप बाहर से ही देखेंगे।

आप बाहर से नाचते हुए देखेंगे मीरा को, तो आपको लगेगा कि बेहोश है, होश नही है। लगेगा ही। कपडा गिर गया, साडी का पल्लू गिर गया। अगर होश होता, तो मीरा अपना पल्लू सम्हालती, कपडा सम्हालती। होश मे नही है, बेहोश है। निश्चित ही, शरीर के तल पर बेहोश ही है। कपडे के तल से होश हट गया है। वहाँ मीरा अब नही है। न कपडे मे है, न शरीर मे है। भीतर कही सरक गयी है। लेकिन वहाँ होश है।

पर यह तो आप भी मीरा हो जाएँ, तभी ख्याल मे आयेगा, अन्यथा कैसे ख्याल मे आये। मीरा के भीतर झाँकने का कोई भी उपाय नही है। कोई खिडकी-दरवाजा नही, जिससे हम भीतर झाँक सकें। अगर मीरा के भीतर झाँकना है, तो अपने भीतर झाँकना पडेगा, और कोई उपाय नही है।

बुद्ध को समझना हो, तो बुद्ध हुए बिना कोई रास्ता नही है। इसलिए शिष्य जब तक गुरु ही नही हो जाता, तब तक गुरु को नही समझ पाता। कैसे समझेगा? अलग-अलग तल पर खडे हुए लोग हैं। वे अलग भाषाएँ बोल रहे है। अलग अनुभवो की बाते कर रहे हैं। तब तक मिसअण्डरस्टैंडिग ज्यादा होगी, नासमझी ज्यादा होगी, समझ कम होगी। अगर सच मे ही समझना चाहते है, तो प्रयोग की हिम्मत जुटानी चाहिए।

विज्ञान भी प्रयोग पर निर्भर करता है और धर्म भी। दोनो एक्सपेरिमेन्टल है। विज्ञान भी कहता है कि जाओ प्रयोगशाला मे और प्रयोग करो और जब तुम भी पाओ कि 'ऐसा होता है', तो ही मानना, अन्यथा मत मानना। धर्म भी कहता है कि जाओ प्रयोगशाला मे प्रयोग करो—हालाँकि प्रयोगशालाएँ दोनो की अलग है। विज्ञान की प्रयोगशाला बाहर है, धर्म का प्रयोगशाला भीतर है। आप ही हो धर्म की प्रयोगशाला।

इसलिए विज्ञान की प्रयोगशाला तो निर्मित करनी पडती है और आप अपनी प्रयोगशाला अपने साथ लिये चल रहे हो। नाहक ढो रहे हो वजन। बडा अद्भुत यन्त्र आपको मिला है, उसमे आप प्रयोग कर लो, तो अभी आपको ख्याल मे आ जाये कि क्या हो सकता है।

भाव की बेहोशी बहुत गहन होश का नाम है, यह किसी दूसरे तल पर होश है, जागरूकता है।

५. साधना-शिविर का विदाई-सन्देश

(साधना-शिविर, आनन्द-शिला, त्रिमूर्ति हिल्स, अम्बरनाथ, बम्बई मे
रात्रि, दिनांक १७ फरवरी, १९७३ को
भगवान्श्री द्वारा दिये गये समापन प्रवचन का अन्तिम हिस्सा)

साधना-शिविर का अन्तिम दिन है, इसलिए जाने के पहले कुछ बातें और भी आपसे कहना चाहूँगा। एक, जो ध्यान के प्रयोग आप यहाँ कर रहे थे, वे केवल प्रयोग है, ताकि ख्याल मे आ सके कि क्या करना है। इतना मात्र कर लेने मे कुछ हल न हो जायेगा, उसे जारी रखना पडेगा।

तो घर लौटकर साधना जारी रखें। अन्यथा मैं देखता हूँ कि आप शिविर मे कर लेते है, शान्ति मिलती है, सहजता आती है, निर्दोषता की थोडी-सी झलक आती है। एक ताजा हवा का झोका आता है और अच्छा लगता है। फिर वापस घर लौटकर आप पुरानी आदतो मे जीने लगते है। फिर कभी किसी शिविर मे आ जाएँगे, फिर कर लेंगे। ऐसे बार-बार करेंगे और बार-बार खोते रहेगे। इस प्रकार बहुत गहरे परिणाम न आएगे। इसे तो खोदते ही जाना है। यह कुआँ इतना गहरा है कि इसे अगर खोदा दो-चार दिन, फिर छोड दिया, चार-छह महीने—तो कूडा-करकट भरकर जमीन पुरानी हो जायेगी। फिर सतह वही-की-वही हो जायेगी। फिर खोद लिया दो-चार हाथ, फिर छोड दिया, तो इस तरह कुआँ कभी भी न खुदेगा और वह जल जिसकी तलाश है, कभी न मिलेगा। इसे खोदते ही जाएँ। इसे खोदते ही जाना है और एक ही जगह खोदते रहे। बार-बार अलग जगह खोदेंगे, तो श्रम भी होगा, समय भी नष्ट होगा, शक्ति भी जायेगी, और परिणाम भी न होंगे।

रूमी ने अपने शिष्यो को एक दफा कहा कि तुम मेरे साथ आओ। तुम कैसे हो, वह मै तुम्हे बताता हूँ। वह अपने शिष्यो को ले गया एक खेत मे, वहाँ आठ बडे-बडे गड्ढे खुदे थे। सारा खेत खराब हो गया था। रूमी ने कहा, देखो, इन गड्ढो को। यह किसान पागल है, वह कुआँ खोदना चाहता है। परन्तु वह चार-आठ हाथ गड्ढा खोदता है, फिर यह सोचकर कि यहाँ

पानी नही निकलता, दूसरा खोदता है। चार हाथ, आठ हाथ खोदने पर, यह सोचकर कि पानी नही निकलता—तीसरा गड्ढा खोदता है। वह आठ स्थानो पर खोद चुका है। पूरा खेत भी खराब हो गया और कभी कुआँ नही बना। अगर वह एक ही गड्ढे पर इतनी मेहनत करता— जो इसने आठ गड्ढे पर की है— तो पानी निश्चित मिल गया होता।

(तो एक दफा सकल्प करें और एक ही जगह सतत खोदने चले जाएँ तो ही आपको जीवन के जल-स्रोत मिलेगे) यहाँ जो सीखा है, उसका घर जाकर प्रयोग करें, ताकि जब दूसरे शिविर मे आप आएँ, तो वही से शुरू न करना पड़े, जहाँ से पहले शिविर मे शुरू किया था। आप कुछ खोदकर लाये तो फिर हम और गहरी खुदाई कर सके। और तब हर बार शिविर आपके लिए नये द्वार खोल सकता है। लेकिन आप पुराने द्वार पर घर लौटकर काम करते रहे हो— तभी।

तो पहली बात तो यह स्मरण रखें कि (ध्यान एक भीतरी खुदाई है, जिसको सतत जारी रखना जरूरी है।

दूसरी बात ध्यान रखे कि यहाँ तो आसान है कर लेना। घर पर भय लगेगा। पड़ोस है, आस-पास लोग है, परिवार के लोग है। आप हँसेगे, चिल्लाएँगे, रोएँगे, तो क्या कहेगे लोग!

एक बात सदा ख्याल रखे कि वैसे भी आपके बाबत लोगो का अच्छा ख्याल नही है। इस भ्रांति मे रहना मत कि लोग आपके सम्बन्ध मे अच्छा सोच रहे है। इससे ही तकलीफ शुरू होती है कि कही अपनी अच्छी प्रतिमा न गिर जाये। वह कही है ही नही। आप सोचे, क्या आपके मन मे पड़ोसी की कोई अच्छी प्रतिमा है?. आपके मन मे किसकी अच्छी प्रतिमा है? तो किसके मन मे आपकी प्रतिमा अच्छी होनेवाली है? यह नाहक की भ्रांति है, इसमे पड़ना ही मत।

और अच्छा यही होगा कि घर मे लोगो को बता देना कि ऐसा प्रयोग मैं कर रहा हूँ, चिन्ता लेने की जरूरत नही है। अगर आसान हो, तो पास-पड़ोस मे भी जाकर बता आना कि मैं ऐसा एक प्रयोग कर रहा हूँ। थोड़ा आवाज करूँ, चिल्लाऊँ, तो आप बहुत चिन्तित मत होना। तो आप हल्के

होकर कर सकेंगे प्रयोग। लोग जानते है, दो-चार दिन मे समझ जाते है कि ठीक है। जिन लोगो से आपको डर है— अगर आप प्रयोग करते रहे, उनका भय छोडकर, तो महीने-दो-महीने के भीतर वे आपसे पूछेंगे कि हमे भी सिखा दें, क्योकि दो महीने मे आप मे काफी बदलाहट हो जायेगी।

अभी आपकी कोई प्रतिमा नही है लोगो के पास, लेकिन अगर आपने ध्यान किया, तो निश्चित आपकी प्रतिमा होगी, क्योकि आपकी शान्ति की खबर मिलनी शुरू हो जाती है। फूल खिलते है, तो छिप नही सकते! सूरज निकलना है, तो अन्धे तक को भी उसका उत्ताप पता चलने लगता है— न भी दिखाई पडे, तो भी पक्षियो के गीत कहने लगते है कि सुबह हो गयी।

आप ध्यान मे गहरे उतरेंगे तो आपकी शान्ति, आपका आनन्द, आपका प्रेम, आपकी करुणा— सब बढेगी। आपका क्रोध, आपकी घृणा, आपकी ईर्ष्या घटेगी। आप अपने पडोस मे, अपने परिवार मे, अपने सम्बन्धियो के बीच नये आदमी बन जाएँगे। मगर अगर अभी से आप डरते है कि कही कोई यह न समझे कि मै पागल हूँ, कही कोई यह न समझ ले कि   कही कोई वैसा न समझ ले, इस भ्रान्ति को छोड दे। किसी को भी चिन्ता नही है बहुत ज्यादा, आपके सम्बन्ध मे सोचने की।

कभी आपने ख्याल किया है, सब अपने-अपने सम्बन्ध मे सोचते है। किसको फुरसत है कि आपके सम्बन्ध मे सोचे! आप किसके सम्बन्ध मे कितना सोचते है? और अगर पडोस मे कोई चिल्लाने लगे जोरो से, तो एक दफा सोचेंगे कि शायद दिमाग खराब हो गया है। फिर किसे फुरसत है कि इस पर लगे ही रहे? लेकिन अगर यह आदमी, चिल्लानेवाला, आपको दूसरे दिन इसकी शक्ल मे फर्क दीखने लगे, अगर साल-छह महीने के भीतर यह आदमी शान्ति का एक स्रोत बन जाये तो आप ही इससे पूछेगे कि वह तरकीब क्या है, चिल्लाने की, जिससे तुम शान्त हो गये हो! तो जल्दी न करना, प्रतीक्षा करना, अपने मे परिवर्तन की। तभी आपकी कोई प्रतिमा निर्मित होती है, अभी कोई प्रतिमा नही है। अभी सिर्फ आपको ख्याल है।

तीसरी बात ध्यान रखनी जरूरी है कि घर पर आप अकेले होगे, लेकिन अकेले होने की जरूरत नही। जिस भाँति आप यहाँ मेरे सामने बैठकर ध्यान

कर रहे हैं, अगर इसी भाँति आपने ख्याल रख लिया कि मै सामने बैठा हूँ और आप ध्यान कर रहे है, तो आप मेरी मौजूदगी उतनी ही पाएँगे, जितनी आप यहाँ पाते है। और तब आप निर्भय होकर प्रयोग कर सकते है। और आपकी निर्भयता प्रयोग के लिए बहुत जरूरी है। आप डरे मत कि अकेले हैं, कि कुछ खतरा न हो जाये। कोई खतरा न होगा। आप जाने के पहले सारे खतरे, सारे भय मेरे पास छोड जाएँ।

और आपसे माँगता ही केवल इतना हूँ, जाते इन क्षणो मे, कि आपका जितना दुख, जितनी चिन्ता, जितनी पीडा, जितना सन्ताप है, वह मुझे दे दे। उसको साथ मत ढोएँ, उसको साथ रखने की कोई जरूरत नही है।

आपसे धन नही माँगता, आपसे तन नही माँगता, आपसे कुछ और नही माँगता हूँ, आपके पास जो भी पीडा है, जो भी उपद्रव है, जो भी सन्ताप है—वह सब मुझे दे दे। उससे मुझे अडचन न होगी। आप निर्भार हो जाएँगे, और आप जिस चीज मे दुखी हो रहे है, जिस शक्ति से दुखी हो रहे है—ना-समझी के कारण, जिस शक्ति से आप चिन्तित हो रहे है— ना-समझी के कारण, सब ना-समझी मुझे दे दे। मैं आपको वही शक्ति वापस लौटा दूँगा। तब वह आनन्द हो जायेगी, वह करुणा हो जायेगी।

आप घर पहुँचते है, तो ज्यादा समय न खोएँ। यहाँ जो सिलसिला पैदा हुआ है, यहाँ जो हवा बनी है और मन मे जो रुझान पैदा हुआ है, वह खो जाये, इतना समय न गँवाये। घर जाकर तत्क्षण ध्यान मे लग जाएँ।

एक घन्टा रोज ध्यान मे दे दे। जिन्दगी के आखिर मे आप पायेंगे कि बाकी सब समय व्यर्थ गया, परन्तु यह जो ध्यान मे लगाया था समय, वही केवल आपके काम आया— वही बचा है वही सार्थक हुआ है। और मुझे स्मरण रखे, कोई भय न होगा। और भीतर जब प्रवेश करेंगे, तो कभी लगेगा कि कही मौत न हो जाये। जैसे-जैसे ध्यान गहरा होगा, मौत का अनुभव होना शुरू होगा। उससे जरा भी न घबडाएँ, घबडाकर वापस न लौटे। अगर मौत भी भीतर आती हो, तो कहे कि ठीक है, स्वीकार है, मै बढता हूँ।

और मै आपके साथ हूँ।

६. स्टॉप मेडिटेशन

छोटे-से निर्णय भी बड़े क्रान्तिकारी हैं।
किस बात का निर्णय लिया, यह बहुत मूल्य का नही है, निर्णय लिया।
इस लेने मे ही आपके प्राण इकट्ठे हो जाते है, एकजूट हो जाते हैं।
निर्णय लेते ही आप दूसरे आदमी हो जाते हैं।
वह निर्णय बिलकुल क्षुद्र भी हो सकता है।

जैसे मैं आपसे कहता हूँ, रुक जाएँ।
गुर्जियेफ इसका बड़ा प्रयोग करता था ध्यान मे।
उसने इसके लिए 'स्टॉप मेडिटेशन' ही नाम दे रखा था।
आप राजी हो जाएँगे थोडे समय मे, तो उस प्रयोग को हम पूरा करेंगे।
जब मैं आपसे कहता हूँ, 'रुक जाएँ!'
तो मेरे इस रोकने मे, अभी मै आप पर ज्यादा जोर नही दे रहा हूँ।
गुर्जियेफ भी कहता था, 'रुक जाएँ!'
लेकिन रुक जाने का मतलब था— जैसे है,
एक पैर ऊपर है और एक पैर नीचे है, नाच रहे थे तो वही रह जाएँ।
गर्दन आड़ी है तो वैसी रह जाये।
शरीर झुका है तो वैसा रह जाये।
फिर जरा भी कोई फर्क नही करना है, जो हालत है, वैसी रह जाये।
चाहे शरीर धडाम मे गिर जाये, पर आपको कुछ फर्क नही करना है।
शरीर गिरे तो गिर जाये।
और जैसा गिर जाये, वैसे ही रहने देना है।
आपको भीतर से इन्तजाम नही करना है कि पैर जरा तिरछा है
तो थोडा-सा सीधा करके लेट जाएँ, न।
गुर्जियेफ इसको 'स्टॉप मेडिटेशन' कहता था।
और उसने हजारो लोगो को इससे गहरे अनुभव करवाये।
और यह बडा कीमती प्रयोग है, क्योकि एकदम-से रुक जाना।
और धोखा देने मे दूसरे को कोई सवाल नही है, आप अपने को दे सकते हैं।
आपका एक पैर जरा ऊपर था, आप धीरे-से नीचे रख लें तो कौन देख रहा है?

बाकी आप खो गये एक मौका ।
कोई नही देख रहा हे किसी को, मतलब भी नही है ।
आपका पैर है, कही भी रखिये ।
मगर आपने भीतर एक अवसर खो दिया—
जहाँ आत्मा और शरीर का सम्बन्ध बदल सकता था ।
जहाँ आत्मा जीत सकती थी और कह सकती थी कि मैं मालिक हूँ ।
अगर आपने धीरे से पैर रख लिया सम्हालकर—
और फिर आराम से खडे हो गये कि अब देखो 'स्टॉप' का प्रयोग कर रहे है,
तो आप किसी और को धोखा नही दे रहे हैं,
आपके शरीर ने आपको धोखा दे दिया ।

छोटे-छोटे निर्णय बहुत छोटे-छोटे निर्णय भी बडे परिणामकारी है ।

७. समयसार

जगत् मे खोज के दो उपाय है— एक निष्क्रिय, एक सक्रिय ।
सक्रिय मे तुम केवल निष्पक्ष-भाव से खडे होते हो ।
सक्रिय चेष्टा विचार बन जाती है, निष्क्रिय चेष्टा ध्यान बन जाती हे ।
जब तुम सक्रिय होके खोज मे लग जाते हो, तो तुम विचारो से भर जाते हो ।
क्योकि विचार मन के सक्रिय होने का अग है ।
जब मन सक्रिय होना है तो विचार से भर जाता है ।
मन जब निष्क्रिय होता हे तो कोरा रह जाता है ।
आकाश मे बादल हो तो सक्रिय, आकाश मे कोई बादल न हो तो निष्क्रिय,
कोई क्रिया नही हो रही ।

थोडा अभ्यास करो ।
शान्त बैठ के वृक्ष को देखते हो तो देखते ही रहो ।
सक्रिय मत बनो ।
इतना भी मत कहो कि यह पीपल का वृक्ष है ।

यह भी मत कहो कि यह गुलाब की झाडी है।
यह भी मत कहो कि गुलाब कितने सुन्दर हैं।
यह भी मत कहो कि वहाँ कितने प्यारे फूल खिले है।
ऐसा मन मे कुछ भी मत कहो, ये सब तुम्हारी मान्यताएँ हैं।

गुलाब का फूल तो बस गुलाब का फूल है— न सुन्दर, न असुन्दर।
सुबह तो बस सुबह है।
सब वक्तव्य तुम्हारे है, सुबह तो अवक्तव्य है।
उसके बाबत तो कोई वक्तव्य नही हो सकता, अनिवर्चनीय है।
सब वचन तुम्हारे है।
तुम अपने को हटा लो।
तुम कुछ कहो ही मत, तुम सक्रिय बनो ही मत।
तुम सिर्फ सुबह को देखने रह जाओ।
उगता है सूरज, उगने दो।
वृक्षो मे हवा सरसराती है, सरसराने दो— तुम शब्द न दो।
तुम शब्द को मत बनाओ।
तुम शब्द से रिक्त और शून्य देखते रहो, देखते रहो।
धीरे-धीरे-धीरे-धीरे-धीरे अभ्यास घना होगा।
कभी ऐसा क्षण आ जायेगा— एक क्षण को भी—
कि तुम सिर्फ देखने रहे और तुम्हारे भीतर डालने को कुछ भी न था।
तुमने कुछ भी न डाला अस्तित्व मे,
तुम सिर्फ खडे देखने रहे— दर्शक, द्रष्टा-मात्र।
उसी घडी मे एक झरोखा खुलता है,
पहली दफा अस्तित्व तुम्हारे सामने अपने रूप को प्रकट करता है।
पहली बार तुम उसको देखते हो, जो है।
क्योंकि पहली बार तुम कुछ जोडते नही, मिलाते नही, तुम कुछ डालते नही।
तुम भी शुद्ध होते हो उस घडी मे और अस्तित्व भी शुद्ध होता है।
दो शुद्धियाँ एक-दूसरे का साक्षात्कार करती हैं।

इसे महावीर कहते है, "समयसार"।

परिशिष्ट—२

१. भारत स्थित रजनीश ध्यान केन्द्र

श्री रजनीश आश्रम
मा योग लक्ष्मी
१७, कोरेगाँव पार्क, पूना ४११ ००१ (महाराष्ट्र)

सम्बोधन रजनीश ध्यान केन्द्र
मा योग अमृता
रिवर रोड, पिम्परी कॉलोनी, पूना ४११ ०१७ (महाराष्ट्र)

सागरदीप रजनीश ध्यान केन्द्र
मा योग मृदुला
५२, रिज रोड, मलाबार हिल, बम्बई ४०० ००६ (महाराष्ट्र)

ओम् रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी ईश्वर समर्पण बम्बई ४०० ००९ (महाराष्ट्र)
३१, भगवान भुवन, इजरायल मोहल्ला, मस्जिद बन्दर रोड, ∧

गीतगोविन्द रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी विजयानन्द भारती
१७, यूनियन पार्क, पाली हिल, बान्द्रा, बम्बई ४०० ०५० (महाराष्ट्र)

अद्वैत रजनीश ध्यान केन्द्र
मा योग आराधना बम्बई ४०० ०५८ (महाराष्ट्र)
कल्याणग्राम हाउसिंग सोसायटी, अमी, प्लॉट नं० ३, अन्धेरी वेस्ट, ∆

मौलश्री रजनीश ध्यान केन्द्र
मा धर्म ज्योति (महाराष्ट्र)
ज्ञान-घर, भोकवाणी बंगला, १४ वाँ रास्ता, खार, बम्बई ४०० ०५२ ∆

धर्मतरु रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी नित्यानन्द भारती
ए ८२, बजाज निवास, उल्हास नगर, बम्बई ४२१ ००१ (महाराष्ट्र)

संकेत रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी कृष्ण वेदान्त
वकील क्लिनिक, वेरावल--२ (गुजरात)

प्रदीप रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी योग पुरुषोत्तम
अचीसरा, पोस्ट छनभोई, ता० शिमोर, जि० बडौदा (गुजरात)

प्रेम-द्वारा रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी आनन्द अमृत
३३ बी, योगाश्रम सोसायटी, आबावाडी, अहमदाबाद १५ (गुजरात)

प्रेमधन रजनीश ध्यान केन्द्र
मा योग समाधि
जी, विजया पलॉट, राजकोट (गुजरात)

सत्यसदन रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी योगानन्द भारती
१० टॉप स्टायल टेलर, मकवाना बिल्डिंग, नूतन नगर, महुआ (गुजरात)

स्वरूपम रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी आनन्द वीतराग
विश्वकर्मा इन्जीनियरिंग वर्क्स, बहुचराजी रोड, बडौदा (गुजरात)

श्रेयस रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी दयानन्द भारती ४०० ००९ (सौराष्ट्र)
द्वारा डॉ० तनुभाई, सरैया हाऊस, धर्मालय रोड, वडीया, जि० अमरेली ∧

आनन्द-द्वारा रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी विजय भारती
७०/९, अशोक नगर, नई दिल्ली ११० ०१८

सत्मार्ग रजनीश संन्यास आश्रम
स्वामी आनन्द सत्यार्थी
देवी भवन रोड, हिसार १२५ ००१ (हरियाणा)

सत्यार्थ रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी सत्यकृष्ण भारती
बजाज इलेक्ट्रिकल जनरल स्टोर, रेलवे रोड, करनाल (हरियाणा)

वेदान्त रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी सत्यानन्द भारती
१६१ मॉडल टाउन, रोहतक (हरियाणा)

प्रेमदाप रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी विजयानन्द भारती
७/३० सर्राफ स्ट्रीट, चरखी, दादरी १२३ ३०६ (हरियाणा)

कल्याणमित्र रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी नारायण भारती
कोठी न० ५१, सैक्टर ८ ए, चण्डीगढ

मन्नदर्शन रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी चमन भारती अमृतसर (पजाब)
आर० वी० रतनचन्द रोड, न्यू पुलिस लाइन, निकट रामधाम मन्दिर ∧

सन्मार्ग रजनीश ध्यान केन्द्र
महाराज कृष्ण कौशल
८०५३ ५ हकीकत नगर, पटियाला (पजाब)

गुरुदेव रजनीश आश्रम
स्वामी सरदार गुरदियाल सिंह
गाँव रूमी, वाया जगराओ, लुधियाना (पजाब)

प्रेमतीर्थ रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी प्रकाशानन्द भारती
एजेन्ट–भारत रिफायनरी, गिदडबाहा १५२ १०१ (पजाब)

अनुबोध रजनीश ध्यान केन्द्र
साधु सत्य प्रेम
सी ८६, शास्त्री नगर, जोधपुर (राजस्थान)

असग रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी विजयानन्द भारती
१७९ पोकर क्वार्टर्स, रानी बाजार, बीकानेर (राजस्थान)

धर्मदीप रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी कबीर शरण
२, १५२, माणिक्यनगर, भीलवाडा ३११ ००१ (राजस्थान)

प्रेमविहार रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी शान्तिस्वरूप सरस्वती
१५/२, नूरी दरवाजा, चौराहा काली बाडी, आगरा २८२ ००२ (उत्तरप्रदेश)

प्रेमगीत रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी श्रीचन्द भारती
सगम जनरल स्टोर, डोगरा गाँव, जि० राजनान्द गाँव (मध्य प्रदेश)

अमृतधाम रजनीश साधना आश्रम
स्वामी आनन्द विजय
देवताल, नागपुर रोड (मध्य प्रदेश)

अनुबोध रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी अक्षय आत्मानन्द
लखेरा, टनी, सी० एफ० ४८३ ५०४ (मध्य प्रदेश)

सम्वेत रजनीश सन्यास आश्रम
स्वामी अनन्द गौतम
महात्मा गाँधी मार्ग, इन्दौर (मध्य प्रदेश)

वेदान्त रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी रमेश भारती
बरगी बाँध कालानी, बरगी नगर, जबलपुर (मध्य प्रदेश)

प्रेमनीड रजनीश ध्यान केन्द्र
साधु प्रेमतीर्थ भारती
पिपरिया, जि० होशगाबाद (मध्य प्रदेश)

आनन्दम् रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी आनन्द समर्थ
रैन बसेरा, मीठापुर, गया लाइन गुमटी के समीप, पो० बा० ९९, पटना ८०० ००१ (बिहार)

अमृतम् रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी प्रेम भारती
अम्बिका सदन, सिकन्दरपुर, प्रभात जर्दा फैक्टरी के पास, मुजफ्फरपुर (बिहार)

एकान्त रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी रामगोपाल भारती
कोट बाजार, सीतामढी (बिहार)

कबीर रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी विंध्यनारायण भारती
कुमार ब्रदर्स, राजवाडी रोड, पो० बो० १६०, झरिया, जि० धनबाद (बिहार)

आनन्दगीत रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी प्रेमानन्द भारती
ब्रह्मचारी आश्रम, बनगाँव रोड, सहर्षा (बिहार)

निर्वाण रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी शिवशंकर भारती
पोस्टल ट्रेनिंग स्कूल, बेला पैलेस, दरभंगा (बिहार)

सत्संग रजनीश संन्यास आश्रम
स्वामी प्रेमतीर्थ भारती
बगहा, जि० पश्चिम चम्पारण (बिहार)

सत्यदीप रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी अनिल भारती
शाहपुर पटौरी, जिला समस्तीपुर (बिहार)

साकेत रजनीश ध्यान केन्द्र
श्री राम मन्दिर, टेल्को कालोनी, जमशेदपुर–४ (बिहार)

धर्मतीर्थ भगवान् रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी मोहन भारती
जी० एम० आर० जैन भवन, ५१-जफरशाह स्ट्रीट, तिरुचिरापल्ली ६२० ००८

आशीष रजनीश ध्यान केन्द्र
स्वामी आनन्द अरुण
पोस्ट बॉक्स न० २७८, काठमाण्डू (नेपाल)

जीवन जागृति केन्द्र
शर्मा जी
शर्मा स्टूडियो, सिन्धी बाजार, उदयपुर (राजस्थान)

जीवन जागृति केन्द्र
स्वामी महेश भारती
ए ३/६, निराला नगर, लखनऊ २२६००७ (उत्तर प्रदेश)

जीवन जागृति केन्द्र
स्वामी प्रेम भारती
मगनानी भवन, भुज, कच्छ, (सौराष्ट्र)

रजनीश प्रेम परिवार
डा० एस० एन० राय
पोस्ट-रक्सौल, जि० पूर्वी चम्पारण (बिहार)

रजनीश प्रेम परिवार
स्वामी अमृत बोधिसत्व
८०, नूतन नगर सोसायटी, सुरेन्द्रनगर (गुजरात)

रजनीश सत्संग मन्दिर,
स्वामी कृष्ण आशीष
हरीश टॉकीज के सामने, पोरबन्दर ३६० ५७५ (सौराष्ट्र)

श्री रजनीश प्रेम प्रतिष्ठान
स्वामी चन्द्रकान्त भारती
आसोपालव, बैंक ऑफ इण्डिया के सामने, रावपुरा, बड़ौदा (गुजरात)

२. भगवान्श्री रजनीश के सम्पूर्ण हिन्दी वाङ्मय का बृहत् सूचीपत्र

(मूल्य-छपी पुस्तके उपलब्ध है)

	नवीन साहित्य		साधारण सस्करण	राज सस्करण
१	नही राम बिन ठाँव		प्रेस मे	
२	बिन बाती बिन तेल		प्रेस मे	
३	सहज समाधि भली		५०–००	७५–००
४	शिव-सूत्र		२५–००	५०–००
५	दिया तले अन्धेरा		५०–००	७५–००
६	एक ओंकार सत्नाम	(नानक वाणी)	५०–००	७५–००
७	सुनो भाई साधो	(कबीर वाणी)	३०–००	५०–००
८	गूँगे केरी सरकरा	(कबीर वाणी)	३०–००	५०–००
९	कस्तूरी कुण्डल बसै	(कबीर वाणी)	३०–००	५०–००
१०	कहे कबीर दिवाना	(कबीर वाणी)	३०–००	५०–००
११	मेरा मुझमे कुछ नही	(कबीर वाणी)	३०–००	५०–००
१२	पिव-पिव लागी प्यास	(दादू वाणी)	३०–००	५०–००
१३	सबै सयाने एक मत	(दादू वाणी)	३०–००	५०–००
१४	अकथ कहानी प्रेम की	(फरीद वाणी)	३०–००	५०–००
१५	बिन घन परत फुहार	(सहजो वाणी)	३०–००	५०–००
१६	भज गोविन्दम्	(आदि शकराचार्य वाणी)	३०–००	५०–००
१७	भक्ति सूत्र पहला भाग	(नारद वाणी)	३०–००	५०–००
१८	भक्ति सूत्र दूसरा भाग	(नारद वाणी)	३०–००	५०–००
१९	एस धम्मो सनतनो पहला भाग	(धम्मपद)	५०–००	८०–००
२०	एस धम्मो सनतनो दूसरा भाग	(धम्मपद)	५०–००	८०–००
२१	एस धम्मो सनतनो तीसरा भाग	(धम्मपद)	५०–००	८०–००

अष्टावक्र वाणी		साधारण संस्करण	राज संस्करण
२२	महागीता पहला भाग	३५–००	६०–००
२३	महागीता दूसरा भाग	३५–००	६०–००
२४	महागीता तीसरा भाग	३५–००	६०–००
२५	महागीता चौथा भाग	३५–००	६०–००
२६	महागीता पाँचवाँ भाग	३५–००	६०–००
२७	महागीता छठवाँ भाग	३५–००	६०–००

कृष्ण तथा गीता

२८	कृष्ण मेरी दृष्टि मे			आउट ऑफ प्रिन्ट
२९	गीता दर्शन	अध्याय – १,२	खण्ड पहला	आउट ऑफ प्रिन्ट
३०	गीता दर्शन	अध्याय – ३	खण्ड दूसरा	आउट ऑफ प्रिन्ट
३१	गीता दर्शन	अध्याय – ४	खण्ड तीसरा	३०–००
३२	गीता दर्शन	अध्याय – ५		१५–००
३३	गीता दर्शन	अध्याय – ६	खण्ड चौथा	आउट ऑफ प्रिन्ट
३४	गीता दर्शन	अध्याय – ७	खण्ड पाँचवाँ	आउट ऑफ प्रिन्ट
३५	गीता दर्शन	अध्याय – ८		आउट ऑफ प्रिन्ट
३६	गीता दर्शन	अध्याय – ९	खण्ड छठवाँ	आउट ऑफ प्रिन्ट
३७	गीता दर्शन	अध्याय – १०	खण्ड सातवाँ	३५–००
३८	गीता दर्शन	अध्याय – ११	खण्ड आठवाँ	२५–००
३९	गीता दर्शन	अध्याय – १२		२५–००
४०	गीता दर्शन	अध्याय – १३	खण्ड नौवाँ	प्रेस मे
४१	गीता दर्शन	अध्याय – १४		
४२	गीता दर्शन	अध्याय – १५	खण्ड दसवाँ	४०–००, ६०-००
४३	गीता दर्शन	अध्याय – १६		
४४	गीता दर्शन	अध्याय – १७	खण्ड ग्यारहवाँ	प्रेस मे
४५	गीता दर्शन	अध्याय – १८	खण्ड बारहवाँ	६०–००, १००-००

ध्यान रहे, नयी योजना के अन्तर्गत 'गीता दर्शन' के अट्ठारहों अध्याय पुनर्सम्पादित होकर अब बारह खण्डों में प्रकाशित हो रहे हैं।

	उपनिषद्	साधारण संस्करण	राज संस्करण
४६	ईशावास्योपनिषद्	१५—००	.
४७	निर्वाणोपनिषद्	आउट ऑफ प्रिन्ट	
४८	मर्वसार उपनिषद्	प्रेस मे	
४९	कैवल्य उपनिषद्	प्रेस मे	
५०	अध्यात्म उपनिषद्	५०—००	७०—००
५१	कठोपनिषद्	प्रेस मे	
५२	ताओ उपनिपद् भाग पहला	आउट ऑफ प्रिन्ट	
५३	ताओ उपनिषद् भाग दूसरा	४०—००	
५४	ताओ उपनिषद् भाग तीमरा	४५—००	७५—००
५५	ताओ उपनिषद् भाग चौथा	प्रेस मे	
५६	ताओ उपनिषद् भाग पाँचवाँ	प्रेस मे	
५७	ताओ उपनिषद् भाग छठा	प्रेस मे	

महावीर तथा महावीर वाणी

५८	महावीर मेरी दृष्टि मे	४०—००	
५९	महावीर वाणी भाग पहला	३०—००	.
६०	महावीर वाणी भाग दूसरा	३०—००	.
६१	महावीर वाणी भाग तीसरा	५०—००	८०—००
६२	जिन सूत्र भाग पहला	५०—००	८०—००
६३	जिन सूत्र भाग दूसरा	५०—००	८०—००
६४	जिन सूत्र . तीमरा	५०—००	८०—००
६५	जिन मूत्र भाग चौथा	प्रेस मे	
६६	ज्यो की त्यो धरि दीन्ही चदरिया	५—००	.
६७	सूली ऊपर सेज पिया की	७—००	.
६८	महावीर या महाविनाश	१५—००	.
६९	अमृत कण	आउट ऑफ प्रिन्ट	
७०	अहिसा दर्शन	१—००	...

व्यवहारिक साधना

७१	जिन खोजा तिन पाइयाँ	४०—००	...
७२	मैं मृत्यु सिखाता हूँ	४०—००	...
७३	साधना पथ	आउट ऑफ प्रिन्ट	
७४	अन्तर्यात्रा	आउट ऑफ प्रिन्ट	
७५	शून्य की नाव	५—००	
७६	प्रभु की पगडडियाँ	६—००	
७७	सभावनाओ की आहट	८—००	..
७८	समाधि के सप्त द्वार	प्रेस मे	
७९	साधना सूत्र	४०—००	६०—००

सैद्धान्तिक साधना

८०	नव सन्यास क्या ?	आउट ऑफ प्रिन्ट
८१	सत्य की खोज	५—००
८२	शून्य के पार	आउट ऑफ प्रिन्ट
८३	जीवन क्रान्ति के सूत्र	१२—००
८४	मै कौन हूँ ?	६—००
८५	गहरे पानी पैठ	७—००
८६	मैं कहता आँखन देखी	६—००
८७	सम्भोग से समाधि की ओर	६—००

पत्र संकलन

८८	तत्त्वमसि*	४०-००
८९	क्रान्ति बीज	६-००
९०	पथ के प्रदीप	६-००
९१	अन्तर्वीणा	आउट ऑफ प्रिन्ट
९२	घूँघट के पट खोल	आउट ऑफ प्रिन्ट
९३	प्रेम के फूल	आउट ऑफ प्रिन्ट
८४	ढाई आखर प्रेम का	आउट ऑफ प्रिन्ट
९५	पद घुँघरू बाँध	८-००
९६	मिट्टी के दिये	५-००
९७	मन के पार	आउट ऑफ प्रिन्ट

विविध-प्रवचनों के सकलन

९८	प्रेम है द्वार प्रभु का	१२-००
९९	समुन्द समाना बुन्द मे	९-००
१००	घाट भुलाना बाट बिनु	१२-००
१०१	सत्य की पहली किरण	५-००

राजनीति

१०२	समाजवाद से सावधान	५-००
१०३	समाजवाद अर्थात् आत्मघात	६-००
१०४	अस्वीकृति मे उठा हाथ	५-००
१०५	गाँधीवाद एक और समीक्षा	५-००

हास्य

१०६	मुल्ला नसरुद्दीन	५-००

*संकेत . तत्त्वमसि—'क्रान्ति बीज', 'पथ के प्रदीप', 'अन्तर्वीणा', तथा अप्रकाशित 'घूँघट के पट खोल'— इन चारों पुस्तकों का सम्मिलित संस्करण है।

विविध प्रवचनों की लघु पुस्तिकाएँ

१०७	पथ की खोज*	२—००
१०८	ज्योतिष अद्वैत का विज्ञान	आउट ऑफ प्रिन्ट
१०९	ज्योतिष अर्थात् अध्यात्म	आउट ऑफ प्रिन्ट
११०	ध्यान एक वैज्ञानिक दृष्टि	आउट ऑफ प्रिन्ट
१११	मेडिसिन और मेडिटेशन	आउट ऑफ प्रिन्ट
११२	युवक कौन ?	आउट ऑफ प्रिन्ट
११३	युवक और यौन	आउट ऑफ प्रिन्ट
११४	प्रगतिशील कौन ?	आउट ऑफ प्रिन्ट
११५	विद्रोह क्या है	२—५०
११६	पूर्व का धर्म पश्चिम का विज्ञान	आउट ऑफ प्रिन्ट
१२७	क्रान्ति की वैज्ञानिक प्रक्रिया	१—५०
११८	धर्म और राजनीति	१-००
११९	परिवार नियोजन	आउट ऑफ प्रिन्ट
१२०	जनसंख्या विस्फोट समस्या और समाधान	१-५०
१२१	प्रेम और विवाह	आउट ऑफ प्रिन्ट
१२२	सूर्य की ओर उड़ान	२—००
१२३	अज्ञात की ओर	आउट ऑफ प्रिन्ट
१२४	मत्य के अज्ञात सागर का आमन्त्रण	२—००
१२५	व्यस्त जीवन मे ईश्वर की खोज	आउट ऑफ प्रिन्ट
१२६	प्रेम के पख	आउट ऑफ प्रिन्ट
१२७	नये मनुष्य के जन्म की दिशा	आउट ऑफ प्रिन्ट
१२८	जीवन जागृति केन्द्र— क्यो, कैसे, क्या ?	आउट ऑफ प्रिन्ट
१२९	अवधिगत सन्यास	आउट ऑफ प्रिन्ट
१३०	क्रान्ति की नयी दिशा, नयी वात	आउट ऑफ प्रिन्ट
१३१	क्रान्ति के बीच सबसे बडी दीवार	आउट ऑफ प्रिन्ट
१३२	मस्कृति के निर्माण मे सहयोग	आउट ऑफ प्रिन्ट

* संकेत : 'सिंहनाद' का नया संस्करण 'पथ की खोज' के नाम से छपा है

3 Complete List of Original English Literature Compiled from the Discourses by Bhagwan Shree Rajneesh

(Priced Books are Available)

YOGA (Patanjali's 'Yoga Sutras' in Ten Volumes)

1	Yoga The Alpha and the Omega	Vol.	I	75 00
2	Yoga The Alpha and the Omega	Vol	II	75 00
3	Yoga The Alpha and the Omega	Vol	III	75 00
4	Yoga The Alpha and the Omega	Vol	IV	75 00
5	Yoga The Alpha and the Omega	Vol.	V	75 00
6	Yoga The Alpha and the Omega	Vol	VI	In the Press
7	Yoga The Alpha and the Omega	Vol	VII	In the Press
8	Yoga The Alpha and the Omega	Vol	VIII	In the Press
9	Yoga The Alpha and the Omega	Vol	IX	In the Press
10	Yoga The Alpha and the Omega	Vol	X	In the Press

(Shiva's Vigyan Bhairava Tantra
TANTRA 112 Techniques of Meditation in Five Volumes)

11.	The Book of the Secrets	Vol.	I	65 00
12	The Book of the Secrets	Vol.	II	65 00
13.	The Book of the Secrets	Vol.	III	65 00
14	The Book of the Secrets	Vol.	IV	75 00
15.	The Book of the Secrets	Vol.	V	75 00
16.	Tantra The Supreme Understanding (Tilopa's Song of Mahamudra)			75 00

UPANISHADS

17. The Ultimate Alchemy (Atma Pooja Upanishad)	Vol.	I	75.00
18 The Ultimate Alchemy (Atma Pooja Upanishad)	Vol.	I	75 00
19. The Supreme Doct[illegible] (Kena Upanishad)			In the Press
[illegible] Seven Steps to Samadhi (Akshaya Upanishad)			75.00

ZEN

21. Roots and Wings	Paperback	50 00
	Hbrd Cover	65 00
22 No Water No Moon	Paperback	40 00
23. And the Flowers Showered		75 00
24 Returning to the Source		65 00
25 The Grass Grows by Itself		75 00
26 Nirvana The Last Nightmare		75 00
27 Ancient Music in the Pines		In the Press
28 The Search (The Ten Bulls of Zen)		In the Press
29. Dang, Dang, Doko Dang		In the Press
30. The Sudden Clash of Thunder		In the Press

TAO

31 Tao The Three Treasures (Lao Tzu) Vol.	I	75 00
32 Tao The Three Treasures (Lao Tzu) Vol.	II	75.00
33. Tao The Three Treasures (Lao Tzu) Vol.	III	75 00
34 Tao The Three Treasures (Lao Tzu) Vol.	IV	In the Press
35 When the Shoe Fits (Chuang Tzu)		75 00
36. The Empty Boat (Chuang Tzu)		75.00

THE SUFI WAY

37.	Just Like That	70.00
38.	Until You Die	75.00

JESUS

39.	The Mustard Seed	Vol. I	75 00
40.	The Mustard Seed	Vol. II	In the Press
41.	Come Follow Me	Vol. I	75 00
42.	Come Follow Me	Vol. II	In the Press
43.	Come Follow Me	Vol. III	In the Press
44	Come Follow Me	Vol IV	In the Press

BUDDHA

45	The Discipline of Transcendence	Vol. I	In the Press
46	The Discipline of Transcendence	Vol. II	In the Press
47.	The Discipline of Transcendence	Vol. III	In the Press
48	The Discipline of Transcendence	Vol. IV	In the Press

KABIR

49.	Ecstasy: The Forgotten Language	In the Press
50.	The Path of Love	In the Press

AND

51	Neither This Nor That (Sosan)	65.00
52.	The Hidden Harmony (Heraclitus)	80.00
53.	The Beloved (The Songs of Baul Sages) Vol. I	In the Press
54.	The Beloved (The Songs of Baul Sages) Vol. II	In the Press
55.	The True Sage (Hassidism)	75.00
56.	The Art of Dying (Hassidism)	In the Press

QUESTION AND ANSWERS

57	The Way of the White Cloud	66.00

DARSHAN DIARIES

58	Hammer on the Rock	125.00
59	Above All, Don't Wobble	125 00
60	Nothing to Loose But Your Head	In the Press
61	Be Realistic Plan for a Miracle	In the Press
62	Get Out of Your Own Way	In the Press
63	Beloved of My Heart	In the Press
64	The Cypress in the Courtyard	In the Press
65	Dance Your Way to God	In the Press

INTERVIEWS

66	The Silent Explosion	12 50
67.	The Inward Revolution	Out of Print
68	Dynamics of Meditation	Out of Print
69	I am the Gate	25 00
70	Meditation A New Dimension	3 00
23	Beyond and Beyond	3 00
72	L S D A Shortcut to False Samadhi	2 00
73	Yoga as a Spontaneous Happening	2 00
64.	The Vital Balance	1 50
75.	Flight of the Alone to the Alone	Out of Print
76.	Secrets of Discipleship	Out of Print
77.	Seriousness	Out of Print

COLLECTION OF LETTERS

78. The Eternal Message	3 00
79. The Gateless Gate	2 00
80 Turning In	In the Press
81. The Dimensionless Dimension	In the Press
82. What is Meditation	In the Press
83. The Silent Music	In the Press

MULLA JOKES

84. Meet Mulla Nasrudin	Out of Print
85 Wisdom of Folly	6 00
86 Two Hundred Two	10 00
87. One Hundred One	Out of Print
88 Thus Spake Mulla Nasrudin	Out of Print

४ पत्र-पत्रिकाएँ

१ रजनीश फाऊन्डेशन न्यूजलेटर (पाक्षिक)
(हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती व मराठी में प्रकाशित)
वार्षिक शुल्क २४ रुपये

२ सन्यास (द्वैमासिक) हिन्दी
वार्षिक शुल्क ३० रुपये

3 SANYAS (Bi-Monthly) English
Annual Subscription : Rs 60.00

सम्पर्क सूत्र

१. सचिव, श्री रजनीश आश्रम
१७, कोरेगांव पार्क, पूना ४११ ००१

२. ओम् रजनीश ध्यान केन्द्र
भगवान भुवन, इजरायल मोहल्ला, मस्जिद बन्दर रोड, बम्बई ४०० ००९